

INDIAN HISTORICAL SERIES

VOI. I.

EARLY HISTORY OF THE SOLANKIS

PART I.

BY

GAURISHANKAR HIRACHAND OJHA

भारतीय

ऐतिहासिक ग्रन्थमाला

जिल्द पहिली

सोलंकियों का प्राचीन इतिहास

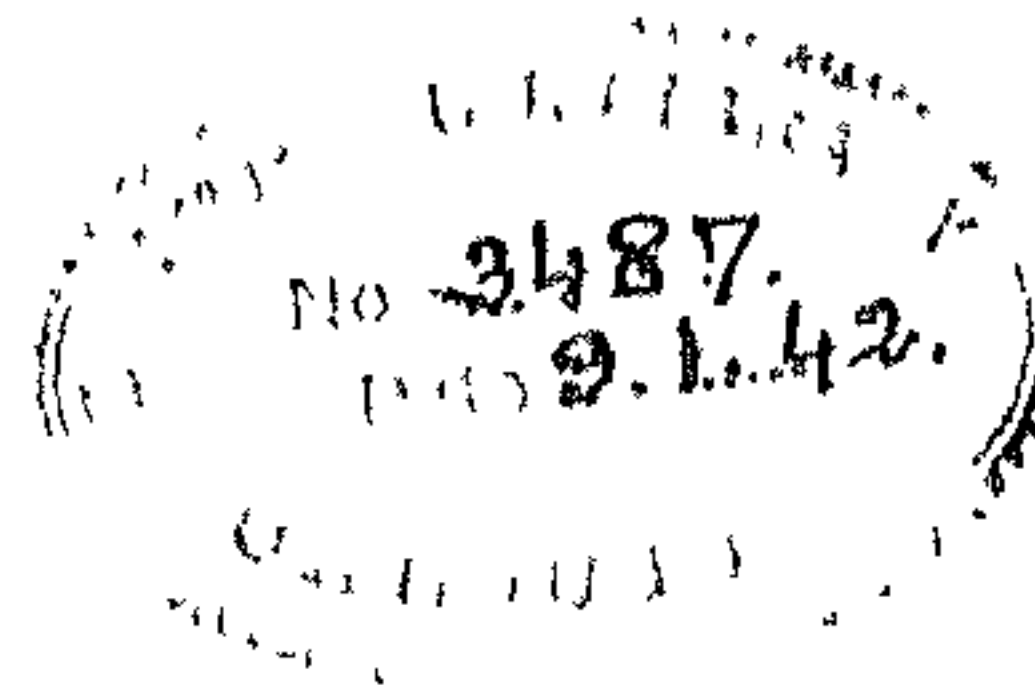
प्रथम भाग

रचयिता

पण्डित गौरीशंकर हीराचंद ओझा

वैदिक ग्रन्थालय

अजमेर



वि० सं० १९६४, ई० सं० १९०७,

मूल्य ९९ रुपये

1907

Price Rs. 10-0-0

VYAS & SONS,
AJMER.

Out of Print.

 Registered under the Government of India's
Act, XXV, of 1868.

इस पुस्तक की रजिस्टरी कराई गई है.

उपोद्घात.

प्रत्येक सभ्य देश के साहित्यमंडार में इतिहास के पुस्तक रत्नरूप माने जाते हैं, क्योंकि देश या जाति की उन्नति अथवा अवनति कैसे और किन कारणों से हुई यह उन्हींके द्वारा जाना जाता है और इन्हीं बातों का जानना भविष्य में बुरा-इयां से बचने और उन्नति के मार्ग का अवलंबन करने में पथ-दर्शकता का काम देता है, परन्तु खेद की बात है, कि मुसलमानों के पूर्व का भारतवर्ष का शृंगलाबद्ध लिखित इतिहास नहीं मिलता जैसा कि मिसर, चीन, यूनान आदि देशों का मिलता है. इस देश में प्राचीन काल से ही अनेक स्वतंत्र राज्य थे, जहाँ के राजा आधिपत्य के लिये सदा अपने पड़ोसियों से लड़ा करते थे. प्रथम तो ऐसी स्थितिवाले भारतवर्ष जैसे विशाल देश का इतिहास लिखा जाना ही दुश्कर था, तदुपरान्त यहाँ के विद्वानों के प्रवृत्तिमार्ग की अपेक्षा निवृत्तिमार्ग की तरफ अधिक झुक जाने और मनुष्यों के चरित्र नहीं, किन्तु ईश्वर के अवतार अथवा देवी देवताओं के चरित्र लिखने में अपना जीवन-सार्थक मानने के कारण उन्होंने अपने देश का इतिहास लिखने की तरफ विशेष ध्यान ही नहीं दिया. यही कारण है, कि हमारे यहाँ वेद, दर्शन, व्याकरण, काव्य, संगीत, गणित, ज्योतिष, वैद्यक, धर्मशास्त्र, पुराण आदि विषयों के बहुत से अच्छे अच्छे ग्रन्थ रहते भी साहित्य के मुख्य अंग इतिहास का अभावसा ही रहा, जिससे हमारे यहाँ के अनेक राजा, सामंत, विद्वान्, दानी, वीर, धर्मप्रचारक, परोपकारी आदि प्रसिद्ध पुरुष कम हुए, उन्होंने अपना जीवन किस प्रकार व्यतीत किया

और समय समय पर इस देश और देशवासियों की अवस्था कैसी रही इत्यादि बातों के जानने के लिये बहुत ही थोड़े साधन मिलते हैं, और इसीसे सुल्तान महमूद गज़नवी के समय का प्रसिद्ध मुसलमान विद्वान् अल्बेरूनी, जो कितनेक बरस तक इस देश में रहा था, हिन्दुओं पर यह दोषारोपण करता है, कि 'हिन्दू लोग ऐतिहासिक क्रम से घटनाओं का उल्लेख करने में ध्यान नहीं देते, अपने राजाओं की वंशावलियां साल संवत् के साथ लिखने में वे बड़े बेपरवाह हैं, और यदि उनसे कोई हाल आग्रह के साथ पूछा जावे, तो वे यह नहीं जानते, कि क्या उत्तर दें, अतएव मन मानी कहानियां कहने लग जाते हैं'. अल्बेरूनी का यह लिखना यथार्थ है, क्योंकि १२५ वर्ष पूर्व भी हमारे यहां प्राचीन ऐतिहासिक ज्ञान की यह दशा थी, कि कितने ही प्राचीन राजवंशों के नाम तक लोग नहीं जानते थे और विक्रम, बापारावल, भोज, सिद्धराजजयसिंह, पृथ्वी-राज, जयचंद आदि प्रसिद्ध राजाओं के नाम किसे कहानियों में सुनते थे, परन्तु कोई यह नहीं बतला सकता था, कि वे किस समय में हुए.

हमारे यहां के प्राचीन इतिहास से संबंध रखनेवाले पुस्तकों में मुख्य पुराण हैं, जिनमें से वायु, मत्स्य, विष्णु, ब्रह्माण्ड और भागवत में बहुत प्राचीन काल से लगाकर ईसवी सन् की तीसरी शताब्दी के आस पास तक राज करनेवाले कई वंशों की वंशावलियां तथा कितनेक राजाओं का राजत्वकाल भी लिखा मिलता है, परन्तु उनमें कोई साल सम्बत् नहीं यह बड़ी त्रुटि है. रामायण तथा महाभारत से रघु और कुरु वंशों के वृत्तान्त के अतिरिक्त उस समय के लोगों की स्थिति का सामान्य हाल भी जाना जा सकता है. राजतरंगिणी में कश्मीर के राजाओं का मुसलमानों के पूर्व का शृंखलाबद्ध इतिहास है,

परन्तु उसके प्रथम रचयिता कल्हण पंडित ने कश्मीर के प्रथम राजा गोनंद का भारतयुद्ध के समय अर्थात् कलियुग संवत् ६५३ में विद्यमान होना मान लिया, जो वास्तव में उस समय से बहुत पीछे हुआ था, जिससे समय की पूर्ति के लिये उस (कल्हण) को कितने ही राजाओं का राजत्वकाल मन माना अधिक धरना पड़ा यहां तक, कि रणादित्य (तुंजीन तीसरे) का तो उसने ३०० वर्ष राज्य करना लिख दिया है. उक्त पुस्तक में कर्कोटक वंश के राजा दुर्लभक (प्रतापादित्य दूसरे) के पूर्व के राजाओं का जो राज्यसमय माना है वह विश्वास योग्य नहीं है. राजतरंगिणी के अतिरिक्त श्रीहर्षचरित, गौड-वहो, विक्रमाङ्कदेवचरित, नवसाहसाङ्गचरित, पृथ्वीराजविजय, सुकृतसंकीर्त्तन, कीर्तिकौमुदी, द्वायाश्रयमहाकाव्य, बल्लालचरित, प्रबंधचिन्तामणि, प्रबंधकोश, कुमारपालचरित, कुमारपालप्रबंध, हंसीरमहाकाव्य आदि कई पुस्तक समय समय पर काव्यदृष्टि से लिखे गये थे, जिनसे भी कई वंशों का कुछ कुछ इतिहास मिल आता है. इसी तरह अन्य विषयों के कई संस्कृत पुस्तकों के प्रारंभ वा अंत में अथवा प्रसंगवशात् बीच में भी कुछ कुछ ऐतिहासिक वृत्त उपलब्ध होते हैं. ऐसे ही जैन और बौद्ध धर्म के पुस्तकों से तथा सीलोन (सिंहलद्वीप) के इतिहास के दीपवंश तथा महावंश नामक पाली भाषा के पुस्तकों से भी यहां के इतिहास संबंधी कई बातों का पता लगता है.

उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त प्राचीन राजवंशियों की कीर्ति के सच्चे स्मारकरूप हजारहा शिलालेख, सैकड़ों दानपत्र और हजारहा सिके हामारे देश में मौजूद होने पर भी किसी ने उनके संग्रह करने या काम में लाने की तरफ दृष्टि ही नहीं दी और वे यहां तक अधकार में पड़े रहे, कि उनकी लिपियों का पढ़ना भी लोग भूल गये, परन्तु जबसे इस देश पर न्यायशील

सर्कार अंग्रेजी का राज्य हुआ तब से विद्या का प्रचार ही नहीं, किन्तु विद्या से संबंध रखनेवाले प्रत्येक विषय की बड़ी उन्नति हुई है और सर्कार की उदार सहायता तथा अनेक यूरोपियन एवं देशी विद्वानों के शोध से असंख्य शिलालेख, दानपत्र और सिक्के प्रसिद्धि में आये हैं, जो यहां का प्राचीन इतिहास जानने में सबसे अधिक उपयोगी हैं, क्योंकि उन्हींसे मौर्य (मोरी), ग्रीक (यूनानी), शातकर्णी (आंध्रभृत्य), शक, क्षत्रप, तुरुष्क (कुशन), अभीर, गुप्त, पल्लव, हूण, यौद्धेय, वैश, लिच्छवि, मौखरी, मैत्रक, गुहिल, सोलंकी, पाड़हार, परमार, चौहान, चावड़ा, राठौड़, कछवाहा, तंवर, कलचुरि (हैहयवंशी), चंदेल, यादव, गूर्जर, पाल, सेन, कदंब, शिलारा, सेंद्रक, काकतीय, नाग, निकुंभ, गंगा, बाण, सिंद, चोल आदि कितनेही राजवंशों का वृत्तान्त, उनकी वंशावलियां तथा अनेक राजाओं के निश्चित साल संवत् मिलते हैं, इतना ही नहीं किन्तु अनेक सामंत, विद्वान्, धर्माचार्य, धनाढ्य, दानी, वीर आदि प्रसिद्ध पुरुषों के नाम तथा उनके समय आदि का भी सही पता चलता है और कई दूसरी आवश्यकिय बातें भी उन्हींके द्वारा जानी जाती हैं.

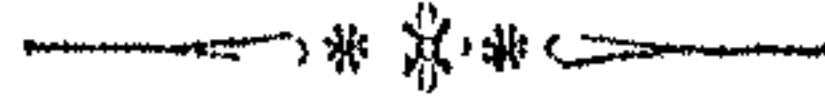
इस उपर्युक्त एतद्देशीय सामग्री के अतिरिक्त समय समय पर लिखे हुए मैगैस्थनीज, आरिअन, कर्टिअस रूफस, प्लुटार्क, डायोडोरस, जस्टिन, टालमी आदि प्राचीन यूरोपियन विद्वानों के पुस्तकों; फाहियान, हुएन्तसंग, सुंगयुंग, उकौंग, हत्सिंग आदि चीनी यात्रियों के सफरनामों, चीन और तिब्बत के ऐतिहासिक ग्रंथों, तथा मुसलमान मुसाफिरों और इतिहास लेखकों की किताबों में भी इस देश का कुछ कुछ ऐतिहासिक वृत्तान्त मिलता है.

इस प्रकार वर्तमान समय में भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की बहुतसी सामग्री मिलती है, जिसके लिये कई भाषाओं के अनेक पुस्तकों के देखने की आवश्यकता रहती है। हिन्दी भाषा में इतिहास संबंधी पुस्तक बहुत ही कम हैं और प्राचीन इतिहास का तो एक भी पुस्तक अबतक प्रसिद्ध नहीं हुआ। इस अभाव के कुछ अंश को मिटाने की इच्छा से मैंने उपर्युक्त सामग्री द्वारा कई वर्षों के श्रम से सुसज्जमानों के पूर्व भारतवर्ष पर राज्य करनेवाले भिन्न भिन्न राजवंशों का इतिहास यथासाध्य संग्रह कर 'ऐतिहासिक ग्रन्थमाला' के नाम से प्रसिद्ध करने का विचार किया है, जिसकी यह पहिली जिल्द इतिहास के प्रेमियों तथा हिन्दी भाषा के अनुरागियों की सेवा में अर्पण करता हूँ। यदि यह पुस्तक हमारे देशबंधुओं की दृष्टि में उपयोगी समझी जावेगी तो उसकी दूसरी जिल्दें भी क्रमशः प्रकाशित होती रहेंगी। जो राजवंश इस समय विद्यमान हैं उनका इतिहास पहिले छपेगा, जिसके पीछे उन वंशों का वृत्तान्त दिया जावेगा जो नष्ट हो चुके हैं।

इस पुस्तक के संबंध में मेरे मित्र पं० श्रीचंद्रधरशर्मा गुलेरी, प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता मुन्शी देवीप्रसादजी तथा वैदिक प्रेस के सुयोग्य मैनेजर पांडित भक्तरामजी से तथा अन्य मित्रों से जो कुछ सहायता और सलाह मिली है उसके लिये मैं उनको धन्यवाद देता हूँ, और जिन अंग्रेजी, संस्कृत, फ़ारसी आदि के ग्रंथों से मैंने इसमें सहायता ली है और जिनके नाम यथा स्थान नोटों में दर्ज किये हैं उनके कर्ताओं का मैं विशेष आभारी हूँ।

बिकटोरिया हॉल, उदयपुर,
वि० सं० १६६४ ज्येष्ठ कृष्ण ४,
ता० २ जून सन् १९०७ ई०। } गौरीशंकर हीराचंद ओझा.

सूचीपत्र.



प्रकरण पहिला.	पृष्ठ
सोलंकियों के प्राचीन इतिहास की सामग्री. सोलं- कियों की उत्पत्ति.	१—१३
प्रकरण दूसरा.	
सोलंकियों का दक्षिण में जाना; जयसिंह; रणराग; पुलकेशी; कीर्तिवर्मा; मंगलीश.	१५—२६
प्रकरण तीसरा.	
पुलकेशी (दूसरा); पुलकेशी के भाई.	२७—४३
प्रकरण चौथा.	
विक्रमादित्य; विक्रमादित्य के भाई; विजयादित्य; विजयादित्य; विक्रमादित्य (दूसरा); कीर्तिवर्मा (दूसरा); बादामी के पश्चिमी सोलंकी राज्य का अस्त होना; बादामी के पश्चिमी सोलंकों का वंशवृत्त तथा उनके राजत्वकाल का नक्शा.	४४—६८
प्रकरण पांचवां.	
पश्चिमी सोलंकी राज्य का पुनरभ्युदय; कीर्तिवर्मा (दूसरे) से तैलप (तैल दूसरे) तक का वंशवृत्त, तैलप (तैल दूसरा); सत्याश्रय; विक्रमादित्य (पांचवां); विक्रमादित्य की बहिन अम्बादेवी.	६९—८५
प्रकरण छठा.	
जयसिंह (दूसरा); सोमेश्वर (आहवमल्ल); सोमेश्वर (दूसरा).	८६—१०६
प्रकरण सातवां.	
विक्रमादित्य (छठा); बिल्हण कवि.	११०—१२४

प्रकरण आठवां.

पृष्ठ

सोमेश्वर (तीसरा); जगदेकमल्ल (दूसरा); तैल
(तीसरा); सोमेश्वर (चौथा); कल्याण के प-
श्चिमी सोलंकियों का वंशवृक्ष तथा उनके राजत्व-
काल का नक्शा.

१२५—१३४

प्रकरण नवां.

पूर्वी सोलंकी राज्य का स्थापित होना; विष्णुवर्द्धन
(कुब्जाविष्णुवर्द्धन); जयसिंह; इन्द्रभट्टारक; वि-
ष्णुवर्द्धन (दूसरा); मंगियुवराज; जयसिंह (दू-
सरा); कोकिलि; विष्णुवर्द्धन (तीसरा); विजयादि-
त्य; विष्णुवर्द्धन (चौथा); विजयादित्य (दूसरा);
विष्णुवर्द्धन (पांचवां); विजयादित्य (तीसरा).

१३५—१५३

प्रकरण दसवां.

भीम; विजयादित्य (चौथा); अम्म; विजयादित्य
(पांचवां); ताडप; विक्रमादित्य; भीम (दूसरा);
युद्धमल्ल; भीम (तीसरा); अम्म (दूसरा); दा-
नार्णव; अस्वामिक अवस्था; शक्तिवर्मा; विमला-
दित्य; राजराज.

१५४—१६६

प्रकरण ग्यारहवां.

राजेन्द्रचोड (कुलोत्तुंगचोड); विक्रमचोड; कुलो-
त्तुंगचोड (दूसरा); राजराज (दूसरा).

१७०—१८४

प्रकरण बारहवां.

राजाधिराज; कुलोत्तुंगचोड (तीसरा); राजराज
(तीसरा); राजेन्द्रचोल (दूसरा); पूर्वी सोलं-
कियों का वंशवृक्ष तथा उनके राजत्वकाल का
नक्शा; पिढापुरं के पूर्वी सोलंकी; श्रीकूर्मम् के
पूर्वी सोलंकी; विशाखपट्टन जिले के पूर्वी सोलंकी;
दक्षिण के सोलंकियों का फुदकर वृत्तान्त.

१८५—२०८

सोलंकियों का प्राचीन इतिहास .

प्रथम भाग.

प्रकरण पहिला.

गुप्तों का महाराज्य नष्ट होने बाद हिंदुस्तान में अनेक राज-वंशों के स्वतन्त्र राज्य स्थापन हुए, उनमें सोलंकियों * के समान प्रभावशाली और विस्तृत राज्य किसी वंश का नहीं रहा. इस देश के अधिकतर राजवंशों का प्राचीन लिखित इतिहास नहीं मिलता, परन्तु सौभाग्य की बात है, कि सोलंकी वंश के कई राजा विद्यानुरागी और विद्वानों का सन्मान कर

* प्राचीन शिलालेख, ताम्रपत्र और पुस्तकों में बहुधा इस वंश का नाम चौलुक्य, चालुक्य अथवा चुलुक्य लिखा मिलता है, और कहीं कहीं उराके चालुक्क, चलुक्य, चलिक्य, चल्क्य, चौलुकिक, चुलुक्क और चुलुग पाठ भी मिल आते हैं, परन्तु भाषा में सोलंकी या सोलंकी नाम प्रसिद्ध है, जो चौलुक्य शब्द का अपभ्रंश है.

आधुनिक प्राचीन शोधकों में से कोई कोई 'चालुक्य' और 'चौलुक्य' दो भिन्न वंशों के नाम अनुमान करते हैं, परन्तु हम उनका अनुमान सर्वथा स्वी नहीं कर सकते, क्योंकि लाट देश के सोलंकी कीर्तिराज के ताम्रपत्र में उक्त वंश का नाम 'चालुक्य' लिखा है (बीम्ना ओरिएण्टल् जर्नल, जिल्द ७, पृ० ८८), और उसी के पौत्र त्रिलोचनपाल के ताम्रपत्र में 'चौलुक्य' मिलता है (इस्थमन्न भवेत्तन्त्रसन्ततिर्विवृतता किल । चौलुक्यात्प्रथिता नद्याः..... इण्डियन् ऐंटिकेरी, जि० १२, पृ० २०१). गुजरात के सोलंकी राजाओं का पुरोहित सोमेश्वर 'चौलुक्य' और 'चुलुक्य' दोनों शब्दों का प्रयोग करता है (अथ चौलुक्यभूपालः पालयामास तत्पुरम् ।....सोमेश्वर रचित कीर्तिकौमुदी, स० २, श्लो० १; अणहिलपुरमस्ति स्वस्तिपात्रं प्रजानामजरजिरघुतुल्यैः पालयमानं चुलुक्यैः ।

विद्या की वृद्धि करने वाले हुए, जिससे अनेक विद्वानों ने उनकी कीर्ति चिरस्थायी रखने के चास्ते अपने रचे हुए पुस्तकों में उनका कुछ कुछ इतिहास लिखा है, जिनमें से प्रसिद्ध कश्मीरी पंडित बिल्हण कृत 'विक्रमाङ्कदेवचरित', प्रसिद्ध जैन 'आचार्य हेमचन्द्र' विरचित 'द्वाश्रयमहाकाव्य' और 'कुमारपालचरित' (प्राकृत), मेरुतुङ्ग प्रणीत 'प्रबन्धचिन्तामणि' और 'विचार-श्रेणी,' जिनप्रभसूरि रचित 'तीर्थकल्प', जिनमण्डनोपाध्याय का 'कुमारपालप्रबन्ध', कृष्णवीर जयसिंहसूरि प्रणीत 'कुमारपालचरित', सोमेश्वर प्रणीत 'कीर्तिकौमुदी', अरिसिंह रचित

॥ ३ ॥ ॥ विरचयति वस्तुपालश्चुलुक्यसचिवेषु कविषु च प्रवरः ।
 ॥ १४ ॥ सोमेश्वर रचित आबू पर के वस्तुपाल तेजपाल के मन्दिर की प्रशस्ति); हेमचन्द्र (हेमाचार्य) ने गुजरात के सोलंकियों के लिये 'चौलुक्य' के अतिरिक्त 'चुलुक्य', 'चालुक', 'चुलुक' और 'चुलुग', शब्दों का प्रयोग किया है (कुन्तेन सर्वसारेणावधील्लक्षं चुलुक्यराट् । द्व्याश्रयमहाकाव्य, सर्ग ५ । १२८; उद्दालिआ दसरणाण सिरी चालुक सुहडेहिं । सर्ग ६ । ८४, जत्थ चुलुकानि-वाणं परिमलजम्भो जसो कुसुमदामं । सर्ग १ । २२ । धवलगेहम् अहनिचलाकि-दी वच्छलो चुलुगवंसदीवओ । सर्ग २ । ६१, कुमारपालचरित); ऐसे ही कृष्ण कवि ने अपनी रत्नमाला में उन के लिये 'चालुक्य', 'चुलुक्य', 'चुलुक' और 'चौलुक्य' शब्दों का प्रयोग किया है (असौ वंश चालुक्य को शुभ रीति, पुनी वंश चापोत्कटा को समीति । पृष्ठ ३५. नराधीप चालुक्य के देह रंगं, सुन्यौ लेख तैसो कक्षौ ज्यौ उमंगं । पृ० ३५. नृप भुवर नाग चुलुक्यवंशी, अमर अंशी तिह रहै । पृ० २१. नृपति चुलुक वंश के उजाला, नृप सिधराय चरित्र रत्न-माला । पृ० २०. चौलुक्य बंरा नृप भुवर नाम । पृ० ४३); और पृथ्वी-राजरासे में सोलंकियों के लिये 'चालुक' शब्द ही लिखा मिलता है (फुनि प्रगट्यौ चालुक । ब्रह्मचारी व्रत धारिय ॥ बनारस का छपा हुआ पृथ्वीराजरासा, आदिपर्व, पृ० ४६). इन सब प्रमाणों से स्पष्ट है, कि ये सब भिन्न भिन्न नाम एक ही वंश के सूचक हैं.

‘सुकृतसंकीर्त्तन’, राजशेखर रचित ‘चतुर्विंशतिप्रबन्ध’, धर्म-सागर कृत ‘प्रवचनपरीक्षा’, जिनहर्षगणि विरचित ‘वस्तुपाल-चरित’, चारिध्रमुन्दर रचित ‘कुमारपालचरित्र’, जयकौंडान् रचित ‘कालिंगतुषरणी’ (तामिल भाषा का), और कृष्ण कवि रचित ‘रत्नमाला’ (हिंदी) आदि पुस्तक उपलब्ध हो चुके हैं. इनके अतिरिक्त इस वंश के राजाओं के समय के बने हुए अनेक प्राचीन संस्कृत पुस्तकों के प्रारंभ वा अन्त में भी उनका कुछ कुछ हाल लिखा मिलता है, और उनकी दानशीलता प्रकट करने-वाले १०० से अधिक दानपत्र, और उनके राजत्वकाल के ६०० के करीब शिलालेख तथा थोड़े से सिक्के भी मिले हैं, जो उनके इतिहास के लिये बड़े ही उपयोगी हैं. ऐसे ही चीनी और अरब यात्रियों के सफरनामों, तथा अरबी और फ़ारसी के ऐतिहासिक पुस्तकों में भी उनके समय का कुछ २ वृत्तान्त दिया हुआ है. इसी सामग्री से उनके समय की मुख्य २ ऐतिहासिक घटनाओं का संग्रह इस पुस्तक में किया जाता है, जिससे मुसलमानों के पूर्व के उनके इतिहास की अपूर्णता का कुछ अंश मिटने की संभावना है.

सोलंकियों की उत्पत्ति.

इस समय सोलंकी और बघेल (सोलंकियों की एक शाखा) अपने को अग्निवंशी बतलाते हैं, और वासिष्ठ ऋषि द्वारा अग्नि-कुंड से अपने मूलगुरुष चौलुक्य या चालुक्य का आबू पर्वत पर उत्पन्न होना मानते हैं, परन्तु उन्हीं के पूर्वजों के अनेक प्राचीन शिलालेख, ताम्रपत्र, और ऐतिहासिक पुस्तकों में कहीं उनका अग्निवंशी होना नहीं लिखा, अतएव उनकी उत्पत्ति के विषय के जो जो प्रमाण उन्हीं के लेखादि से मिले हैं वे पाठकों के विचारार्थ नीचे उद्धृत किये जाते हैं:—

पश्चिमी सोलंकी राजा विक्रमादित्य छठे के समय के (विक्रम संवत् ११३३ और ११८३ के बीच के) शिलालेख में लिखा है,

कि “चालुक्य (सोलंकी) वंश भगवान् ब्रह्मा के पुत्र अत्रि के नेत्र से उत्पन्न होने वाले चंद्र के वंश के अंतर्गत है” * . उक्त राजा के समय के एक दूसरे शिलालेख में भी ऐसा ही लिखा है ॥

पूर्वी सोलंकी राजा राजराज प्रथम के समय के (वि० संवत् १०७६—११२०=ईसवी सन् १०२२—१०६३) एक ताम्रपत्र में लिखा है, कि “भगवान् पुरुषोत्तम के नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए, उनसे क्रमशः अत्रि, सोम, बुध, पुरुरवा, आयु, नहुष, ययाति, पुरु, जनमेजय, प्राचीश, सैन्ययाति, हयपति, सार्वभौम, जयसेन, महाभौम, देशानक, क्रोधानन, देवकि, ऋभुक, ऋक्षक, मतिवर, कात्यायन, नील, दुष्यन्त, भरत, भूमन्यु, सुहोत्र, हस्ति, विरोचन, अजमील, संवरण, सुधन्वा, परिक्षित, भीमसेन, प्रदीपन, शांतनु, विचित्रवीर्य, पाण्डु, अर्जुन, अभिमन्यु, परिक्षित, जनमेजय, क्षेमुक, नरवाहन, शतानीक, और उदयन हुए. उदयन से लगाकर ५६ चक्रवर्ती राजा अयोध्या में हुए, फिर उस वंशका राजा विजयादित्य विजय की इच्छा से दक्षिण में गया, जिसका वंशज राजराज ॥ था” . उक्त राजा के राज्यवर्ष

* ओं स्वस्ति समस्तजगत्प्रसूतेर्भगवतो ब्रह्माणः पुत्रस्यात्रेर्वैत्रसमुत्पन्नस्य यामिनीकामिनीललामभूतस्य सोमस्यान्वये सत्यत्यागशौर्यादिगुणमिलयः केवलनिजध्वजिनीजवक्षपितप्रतिपक्षक्षितीशवंशः श्रीमानस्ति चालुक्यवंशः (इंडिअन् ऐंटिकेरी, जि० २१, पृ० १६७). यह शिलालेख बंई इहाते के धारवाड़ जिले के गडग गांव में वीरनारायण के मंदिर में लगा है. उक्त लेख में ‘चालुक्यवंशः’ के स्थान पर ‘चालुक्यवंशः’ खुदा है, और दक्षिण के सोलंकियों के कई दूरे संस्कृत लेखों में भी ‘ल’ के स्थान में ‘ळ’ खुदा हुआ मिलता है, परन्तु हग उसका शुद्धरूप ‘ल’ ही सर्वत्र लिखेंगे.

॥ कर्णाट देश इन्स्क्रिप्शन्स, जि० १, पृ० ४१५.

॥ ओं श्रीधाम्नः पुरुषोत्तमस्य महतो नारायणस्य प्रभोर्त्तर्णीपंकरुहाद्भूव जगतस्त्रया स्वयंभूस्ततः । जज्ञे मानसमूनुरत्रिरिति यस्तस्मान्गुनेरत्रितरसोमो वंशक-

३२ वें (शक सं० ६७५=वि० सं० १११०=ई० स० १०५३) के ताम्रपत्र में भी इसी तरह वंशावली दी है * . ऐसे ही उपर्युक्त राजराज के पिता विमलादित्यके राज्यवर्ष आठवें (शक सं० ६४०=वि० सं० १०७५=ई० स० १०१८) के ताम्रपत्र † में; चोडगंग राजराज के तेकि ‡ गांव से मिले हुए दानपत्र § में, जो उसके पिता के राज्यवर्ष १७ वें (शक सं० १००८=वि० सं० ११४३=ई० स०

रस्मुधांशुरुदितः श्रीकण्ठचूडामणिः ॥ तस्मादारीत्सुधासूतेर्बुधो बुधनुतस्ततः । जातः पुरुरवा नाम चक्रवर्त्ती सविक्रमः ॥ तस्मादायुरायुपो नहुषः ततो ययातिश्चक्रवर्त्ती वंशकर्त्ता ततः पुरुरिति चक्रवर्त्ती । ततो जनमेजयोश्चमेधत्रितयस्य कर्त्ता ततः प्राचीशः तस्मात्तौन्ययातिः ततो हयपतिस्ततस्सार्वभौमः ततो जयरोनः ततो महाभौमः तस्माद्देशानकः । ततः क्रोधाननः । ततो देवकिः देवकेर्ऋभुकः तस्मादृक्षकः । ततो मतिवरस्सत्रयागयाजी रारखतीनदीनाथः ततः कात्यायनः कात्यायनान्नीलः ततो दुष्यन्तः तत आर्य्यः । गंगायमुनातीरे यदविच्छिन्नान्निखाय यूपान्क्रमशः । कृत्वा तथाश्चगोधन्नाम महाकर्म भरत इति योलभत ॥ ततो भरताद्वृमन्सुः तस्मात्पुहोत्रः ततो हस्ती । ततो विरोचनः तस्मादजमीलः ततरसंवरणः तस्य च तपनसुतायास्तपस्याश्च सुधन्वा । ततः परिक्षित् । ततो भीमरोनः । ततः प्रदीपनः । तस्माच्छांतनुः ततो विचित्रवीर्य्यः । ततः पाण्डुराजः तत आर्य्यः । पुत्रास्तस्य च धर्मजभीमाज्जुननकुलराहदेवाः । पंचेन्द्रियवत् पंच स्युः ॥ ततोर्जुनादभिमन्युः ततः परिक्षित् ततो जनमेजयः ततः क्षेमुकः ततो नरवाहनः ततश्शतानीकः तस्माद्बुदयनः । ततः परं तत्प्रभृतिष्वविच्छिन्नसन्तानेष्वयोध्यासिंहासनासीनेष्वेकोनपष्टिचक्रवर्त्तिषु सत्तशयो विजयादित्यो नाम राजा विजिगीषया दक्षिणापथं गत्वा''' (ई० ए० जि० १४, पृ० ५०—५५).

* एपिग्राफिका इंडिका, जि० ४, पृ० ३०३-६.

† ए० ई० जि० ६, पृ० ३५१-५८.

‡ गद्वारा इहाते के रागचंद्रपुर तच्छल्लुके में.

§ ए० ई० जि० ६, पृ० ३३६-४४.

१०८६) का है, वीरचोड के दो ताम्रपत्रों * में, जो उसके पिता के राज्यवर्ष २१ और २३ वें (श० सं० १०१२ और १०१४=वि० सं० ११४७ और ११४९=ई० स० १०६० और १०६२.) के हैं, और राजा मल्लदेव के श० सं० ११२४ (वि० सं० १२५६=ई० स० १२०२) के ताम्रपत्र † में भी ठीक उसी प्रकार वंशावली दी है, जैसी कि ऊपर राजराज के ताम्रपत्र से उद्धृत की है.

सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोडदेव दूसरे के शक सं० १०६५ (वि० सं० १२००=ई० स० ११४३) के ताम्रपत्र में सोलंकियों का चंद्रवंशी, मानव्य गोत्री, और हारीति का वंशज होना लिखा है ‡. मानव्य और हारीति कौन थे इस विषय में उक्त ताम्रपत्र में कुछ भी नहीं लिखा, परन्तु पश्चिमी सोलंकी राजा जयसिंह दूसरे के समय के श० सं० ६४७ (वि० सं० १०८२=ई० स० १०२५) के लेख में उनका परिचय इस प्रकार दिया है, कि ब्रह्मा से स्वयंभुव मनु उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र मानव्य के वंशज मानव्य गोत्री कहलाये. मानव्य का पुत्र हरित, उसका पंचशिखिहारिति हुआ. उसके पुत्र चालुक्य से जो वंश चला वह चालुक्य (सोलंकी) वंश कहलाया +.

* साउथ इंडियन इन्सक्रिप्शन्स, जि० १, पृ० ५३-५७; ए० इ० जि० ५, पृ० ७४-८४.

† ए० इ० जि० ४, पृ० २३१-३८.

‡ जयति जगति नित्यं सोमवंशो महीभृच्छिरसि निहितपादस्संश्रयः कीर्तिवल्ल्याः । जलधिवलयितोर्वीचक्रवालालवालाद्रिपुनूपरुधिरोदैरुक्षितादुद्गतायाः ॥ स्वस्ति श्रीमतां सकलभुवनसंस्तूयमानमानव्यसगोत्राणां हारीतिपुत्राणां..... चालुक्यानां कुलमलंकरिण्योः... (इ० ऐ० जि० १४, पृ० ५६). उक्त ताम्रपत्र में श० सं० १०५६ खुदा है, जहां पर १०६५ होना चाहिये (देखो आगे पूर्वी सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोडदेव दूसरे का वृत्तान्त).

+ कर्णाट देश इन्सक्रिप्शन्स, जि० १, पृ० ४८; बम्बई गैज़ेटियर, जि० १,

सोलंकी राजा राजराज (प्रथम) के वंशज विजयादित्य * और पुरुषोत्तम † के दो शिलालेखों में सोलंकियों का चंद्रवंशी होना लिखा है, जो क्रमशः शक सं० ११६५ और १२४० (वि० सं० १३३० और १३७५=ई० सं० १२७३ और १३१८) के हैं.

सोलंकी राजा राजराज (प्रथम) के दानपत्र में, जहां उसका राज्याभिषेक श० सं० ६४४ (वि० सं० १०७६=ई० सं० १०२२) में होना लिखा है, वहां उसको 'सोमवंश तिलक' कहा है ‡.

सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोडदेव (राजेन्द्रचोल) प्रथम के इतिहास सम्बन्धी 'कलिंगतुपरणी' + नामक तामिल भाषा के काव्य में उक्त राजा का चंद्रवंश में उत्पन्न होना लिखा है.

उपर्युक्त वीरचोड के ताम्रपत्र (श० सं० १०१२=वि० सं०

भा० २, पृ० ३३६. सोलंकियों का मानव्य गोत्री और हारीति का वंशज होना दक्षिण के कई शिलालेख और ताम्रपत्रों में लिखा मिलता है.

* स्वस्ति । श्रीमानभूत् पुरा कश्चित्सोमवंशे महायशाः । चालुक्यविगलादित्य-चक्रवर्त्ती नृपामणीः ॥ ... ॥ तस्मादभूत् क्षितिपतिप्रणतांघ्रिपद्मः श्रीराजराजनृपतिः प्रविशालकीर्तिः । ॥ तद्वंशे विजयादित्य इति ख्यातो नृपोभवत् । (ए० इ० जि० ५, पृ० ३२-३३).

† न० सोमान्वये रामभवद्भुवि राजराजदेवस्सतामभिमतो नृपचक्रवर्त्ती । तत्सूनु-रासविजयो विजयार्कदेवनामा मनोज्ञचरितस्सुकृती कृतज्ञः ॥ तद्भ्राता पुरुषोत्तमो गुणनिधिर्देवो दयावारिधेः (ए० इ० जि० ५, पृ० ३६).

‡ यस्सोमवंशतिलकः शकवत्सरेषु वेदांबुराशिनिधिवर्त्तिषु सिंहगेर्क्षे । कृष्ण-द्वितीयदिवसोत्तरभद्रिकायां धारे गुरोर्व्वणिजि लग्नवरेभिषिक्तः ॥ (ए० इ० जि० ४, पृ० ३०७).

+ इ० ऐ० जि० १६, पृ० ३३८. यह पुस्तक उक्त राजा के समय (वि० सं० ११२७—११७६=ई० सं० १०७०—१११६) का बना हुआ है.

११४७=ई० स० १०६० के) में उसके दादा राजराज को सोम-कुल (चंद्रवंश) का भूषण लिखा है *.

सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोडदेव दूसरे के सामंत बुद्धराज के श० सं० १०६३ (वि० सं० १२२८=ई० स० ११७१) के दानपत्र में कुलोत्तुंगचोडदेव के प्रसिद्ध पूर्वज कुब्जविष्णु (कुब्जविष्णुवर्द्धन) का चंद्रवंशी होना लिखा है †.

प्रसिद्ध जैन आचार्य हेमचंद्र रचित 'द्वयाश्रयमहाकाव्य' ‡ के नवमें सर्ग में गुजरात के सोलंकी राजा भीमदेव के दूत और चेदी देश के राजा कर्ण + के वार्तालाप का विस्तार से वर्णन है, जिसमें भीमदेव का चंद्रवंशी होना लिखा है. उक्त वर्णन का सारांश यह है, कि "दूत ने राजा कर्ण से पूछा कि राजा भीम आप से यह जानना चाहता है, कि आप हमारे मित्र हैं वा शत्रु ? इसके उत्तर में कर्ण ने कहा, कि कभी निर्मूल न होने वाला सोम (चंद्र) वंश विजयी है. इसी वंश में जन्म लेकर

* तत्तनयो नयशाली जयलक्ष्मीधाम राजराजनरेन्द्रश्चत्वारिंशतमब्दानेकं च पुनर्महीमपालयदखिलां । श्रीमत्सोमकुलैकभूषणमणिर्हीनैकचितामणिः । (सा० ई० ई० जि० १, पृ० ५४).

† ओं अस्ति श्रीस्तनकुंकुमांकितविराजव्यूढवक्षस्थलो देवश्रीतमयूखवंशतिलकः श्रीकुब्जविष्णुर्नृपः । (ए० ई० जि० ६, पृ० २६६).

‡ यह पुस्तक गुजरात के सोलंकी राजा कुमारपाल के समय वि० सं० १२१७ (ई० स० ११६०) के आस पास बनाया गया था, जिसमें उक्त आचार्य के रचे हुए 'सिद्धहैम' नामक संस्कृत व्याकरण के सूत्रों के क्रमशः उदाहरण और गुजरात के सोलंकी राजा मूलराज से कुमारपाल तक का इतिहास ये दोनों आशय होने से ही उसका नाम 'द्वयाश्रयमहाकाव्य' रखा गया है.

+ कर्ण या कर्णदेव चेदी देश के हैहय (कलचुरि) वंशी राजा कौकलदेव का पौत्र और गांगेयदेव का पुत्र था.

पुखरवा ने पृथ्वी का पालन किया था, इन्द्र के अभाव से भय-भीत बने हुए स्वर्ग का रक्षण करने वाला भूर्तिमान् क्षात्र धर्म-रूप नहुष इसी वंश में उत्पन्न हुआ था, इसी वंश के राजा भरत ने निरंतर संग्राम करने और अनीति के मार्ग पर चलने वाले दैत्यों का संहार कर अतुल यश प्राप्त किया था, इसी वंश में जन्म लेकर धर्मराज युधिष्ठिर ने उद्धत शत्रुओं का संहार किया था, जनमेजय तथा अन्य अक्षय यशवाले तेजस्वी राजा इसी वंश में हुए, और इन सब पूर्व के राजाओं की समानता करने-वाला भीम (भीमदेव) इस समय विजयी है. सत्पुरुषों में परस्पर मैत्री होना स्वाभाविक है, अतएव हमारी मैत्री के विरुद्ध कौन कुछ कह सकता है. मेरी तरफ से ये उपायन की वस्तुएं लेजाकर भीम के भेट करना और सुभ्र को उनका मित्र सम्भना * ”.

* तन्नृपापचितिह्वनं श्रीभीमो ह्वनवानिति । स्वामाह किमरिर्मित्रं वारि मे ह्व-
त्तिकृद्विधा ॥ ४० ॥ विस्तीर्णवानथ नयानुत्तीर्णं लूनसंशयं । कर्णः कर्णा-
वतीर्णानु यशोलीन इदं वचः ॥ ४१ ॥ अलूनि रोगवंशश्रीकृतलीनिर्जयत्यसौ ।
अधोलीनवतां तापं लूननान् पूर्तिपावनः ॥ ४२ ॥ पूर्णिर्णागवलीः पूर्तः पूर्ववान्
क्षमां पुखरवा । यशोगिः पूर्णवानाशास्तत्र पूर्णोन्मुनिर्गलैः ॥ ४३ ॥ भयं
धिचेन्द्रशक्तेर्धोर्नहुपच्छिन्नवानिह । मूर्त्तौ नु तेजसां राशिः क्षात्रो धर्मो नु मूर्त्तवान्
॥ ४४ ॥ रणप्रमत्तान् दुर्मतवतः सुनानयानिह । अदूनोदूनवान्दैत्यान्गरतः
सूनवान्यशः ॥ ४५ ॥ अनिद्राणवतः शत्रून्निद्राणोत्र वृक्णवान् । वृक्ण
पापो ध्यातधर्मः ख्यातः पूतो युधिष्ठिरः ॥ ४६ ॥ पूनावाद्यूनयज्ञानेः समक्ता-
विन्द्रतक्षकौ । पात्रोदक्ताहुतेर्यस्मादभूत्पारीक्षितोत्र सः ॥ ४७ ॥ क्षीणधूता-
स्तथेहान्येप्यशिनप्रासतेजसः । अद्याप्यक्षीणवंतो नु यशोगिः क्षितिवर्जितैः ॥ ४८ ॥
अन्यून एभ्यः पूर्वभ्यो भीमो जयति सम्प्रति । यत्र न क्षितकः कोपि क्षी-
णकः केवलं कलिः ॥ ४९ ॥ मैत्री हि सहजा सखिः सतामित्यावयोरिमां ।
अन्यथा ख्यापयकोसु क्षितायुः क्षीणसंततिः ॥ ५० ॥ । मेरुभित्ततया

जिनहर्षगणि रचित 'वस्तुपालचरित' * में गुजरात के सोलंकी राजा भीमदेव को चंद्रवंश की शोभा बढ़ाने वाला (चंद्रवंशी) लिखा है †.

कश्मीरी पंडित विल्हण ने अपने रचे हुए 'विक्रमाङ्कदेवचरित' ‡ नामक काव्य में लिखा है, कि "एक समय जब कि ब्रह्मा संध्यावंदन कर रहे थे, इन्द्र ने आकर पृथ्वीपर धर्मद्रोह बढ़ने और देवताओं को यज्ञविभाग न मिलने की शिकायत कर उसके निवारण के लिये एक वीरपुरुष उत्पन्न करने की प्रार्थना की, जिसपर ब्रह्मा ने संध्याजल से भरे हुए अपने चुलुक (अंजली वा चुल्लू) की ओर ध्यानमय दृष्टि दी, जिससे उस चुलुक से धैलोक्य की रक्षा करने की सामर्थ्यवाला एक वीर पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसके वंशमें क्रमशः हारीत और मानव्य हुए. इन क्षत्रियों ने पहिले अयोध्या में राज्य किया, जहां से विजय करते हुए वे दक्षिण में गये" +.

वित्तं स्वर्णवित्तमुपायनं ॥ ५८ ॥ एतज्जुहुषि भीमस्य मित्रं मां विद्धि शाधि च ।
... ॥ ५९ ॥ (द्रुपदश्रयमहाकाव्य, सर्ग ९).

* 'वस्तुपालचरित' वि० सं० १४६७ (ई० स० १४४०) के आसपास बना था.

† सोमवंशमलंकर्तुं पुनर्भीम इवाभवत् । भूपतिस्त्यागिनां सीमा भीमो भीमपराक्रमः ॥ १ । ७६ ॥

‡ यह पुस्तक पश्चिमी सोलंकी राजा विक्रमादित्य (छठे) के समय वि० सं० ११४२ (ई० स० १०८५) के आसपास बना था.

+ संध्यासमाधौ भगवान्स्थितोथ शक्रेण बद्धाञ्जलिना प्रणम्य । विज्ञापितः शेखरपारिजातद्विरेफनादद्विगुणैर्वचोभिः ॥ ३६ ॥ ॥ निवेदितश्चारजनेन नाथ तथा क्षितौ संप्रति विप्लवो मे । मन्ये यथा यज्ञविभागभोगः स्मर्तव्यता मेष्यति निर्जराणाम् ॥ ४४ ॥ धर्मद्रुहामत्र निवारणाय कार्यस्त्वया कश्चिदवार्यवी

इसी प्रकार (ब्रह्मा के चुलुक से) उत्पन्न होना गुजरात के सोलंकी राजा कुमारपाल के समय के वि० सं० १२०८ (ई० स० ११५१) के वडनगर * के, तथा प्रसिद्ध चित्तौड़ † के किले के लेखों में, और ई० स० की तेरहवीं शताब्दी के खंभात के कुंतनाथ के मंदिर के लेख ‡ में लिखा है.

लाटदेश के सोलंकी त्रिलोचनपाल के श० सं० ६७२ (वि० सं० ११०७=ई० स० १०५१) के ताम्रपत्र में लिखा है, कि “दै-
त्यों की तकलीफ से उत्पन्न होनेवाले चिन्तारूप भंदराचल से

र्यः । रवेरिवांशुप्रसरेण यस्य वंशेन सुस्थाः ककुभः क्रियन्ते ॥ ४५ ॥ पुरंदरेण प्र-
तिपाद्यगानमेवं समाकर्ण्य वचो विरिञ्चिः । संध्याम्बुपूर्णे चुलुके मुमोच ध्यानानुवि-
द्धानि विलोचनानि ॥ ४६ ॥ अथाविरासीत्सुगटस्थिलोकत्राणप्रवीणश्चुलुका-
द्विधातुः ॥ ५५ ॥ ॥ जगाभृत्कुलानामुपरि प्रतिष्ठापवाप्य रत्नाकरभोगयो-
ग्यः । क्रमेण तस्मादुदियाय वंशः शैरेः पदाद्गाङ्ग इव प्रवाहः ॥ ५७ ॥ विप-
क्षवीराद्भुतकीर्तिहारी हारीत इत्यादिपुमान् स यत्र । मानव्यनागा च बभूव मानी
मानव्यथं यः कृतवानरीणाम् ॥ ५८ ॥ ॥ प्रसाध्य तं रावणमध्युवारा यां
मैथिलीशः कुलराजधानीम् । ते क्षत्रियास्तामवदातकीर्तिं पुरीमयोभ्यां विदधुर्निवा-
सम् ॥ ६३ ॥ जिगीषवः केपि विजित्य विश्वं विलासदीक्षारशिकाः क्रमेण ।
चक्रुः पदं नागरखण्डचुम्बि पूगद्रुमायां दिशि दक्षिणरथां ॥ ६४ ॥ (विक्रमाङ्कदेवच-
रितं, सर्ग १).

* वेधाः संध्यानमस्यन्नपि निजचुलुके पुण्यगंगांनुपूर्णे । राणो वीरं चुलुवया-
ह्वयमसृजदिमं (वडनगर का लेख, ए० ई० जि० १, पृ० २६६).

† संध्याम्भश्चुलुकेपि पंकजभुवा सृष्टश्चुलुवयाह्वयो वीरः कोप्यभितः प्रतापदह-
नेनाक्रान्त । (चित्तौड़ का लेख).

‡ ध्यातुर्विधातुः पुरा रांध्यांभश्चुलुकाद्भट्टोभवदिति दैत्यैः समं कंपयन्
॥ ५ ॥ (श्रीमान् भावनगर के महाराज साहिब का दणवाया हुआ ‘कलेक्शन
आफ प्राकृत ऐण्ड सांस्कृत इन्स्क्रिप्शन्स’ नामक पुस्तक, पृ० २२४)

मथन करते हुए ब्रह्मा के चुलुकरूप समुद्र से एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जो उनसे प्रणाम कर बोला, कि महाराज ! सुभे क्या आज्ञा है ? इस पर ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर उसे कहा, कि हे चौलुक्य ! तू कन्याकुब्ज (कन्नौज) में राष्ट्रकूट (राठौड़) राजा की पुत्री से विवाह कर, उससे तेरे सन्तान होगी, और इस प्रकार पृथ्वी पर चौलुक्य (सोलंकी) क्षत्रियों का विस्तृत वंश होगा *'.

ऊपर जो प्रमाण उद्धृत किये गये हैं वे सोलंकियों के ही शिलालेख, लाग्रपत्र, और ऐतिहासिक पुस्तकों से संग्रह किये हैं. उनमें कहीं उनका अग्निवंशी होना नहीं लिखा, केवल 'पृथ्वीराजरासा' नामक राजस्थानी भाषा के काव्य में उनका अग्निवंशी होना लिखा है, परन्तु वह पुस्तक इतिहास के लिये सर्वथा निरूपयोगी है, और न वह सोलंकियों के इतिहास का पुस्तक है, अतएव उनका अग्निवंशी होना किसीप्रकार माना नहीं जा सकता. उपर्युक्त प्रमाणों में से अधिकतर उनका चन्द्रवंशी होना प्रकट करते हैं, और उसी को हम स्वीकार सकते हैं. ब्रह्मा के चुलुक से उत्पन्न होने की बात प्रकट करनेवाले केवल पांच प्रमाण मिले हैं, जिनके विषय में यही अनुमान होता है, कि संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार 'चौलुक्य' शब्द 'चुलुक' शब्द से बनता है, इसी पर से यदि निरंकुश कावियों ने ब्रह्मा के चुलुक (अंजली वा चुल्लू) से उनकी उत्पत्ति होने की कल्पना करली हो तो आश्चर्य नहीं, क्योंकि बिल्हारी (ज-

* कदाचिद्वैत्यखेदोत्थाचिन्तामन्दरमन्थनात् । विरिञ्चेश्चुलुकाग्बोधे राजरत्नं पुमानभूत् ॥ ४ ॥ देव किं करवाणीति नत्वा प्राह तमेव सः । समादिष्टार्थसंसिद्धौ तुष्टः सष्टाब्रवीच्च तं ॥ ५ ॥ कन्याकुब्जे महाराज राष्ट्रकूटस्य कन्यका । लब्ध्वा सुखाय तस्यां त्वं चौलुक्यामुहि सन्ततिम् ॥ ६ ॥ इत्थमत्र भवेत्क्षत्रसन्ततिर्द्वि- तता किल । चौलुक्यात्प्रथिता नद्याः सोतांसीव गहीधरात् ॥ ७ ॥ (इ० पें० जि० १२, पृ० २०१).

बलपुर जिले में) से मिले हुए हैहय (कलचुरि) वंशी राजा युवराजदेव दूसरे के समय के लेख के तय्यार करनेवाले कवि-ने 'चौलुक्य' शब्द की उत्पत्ति 'चुलुक' शब्द से बतलाते हुए यह कल्पना की है, कि "भरद्वाज के वीर्य से महाबली भारद्वाज (द्रोण) उत्पन्न हुआ, उसने अपना अपमान करनेवाले राजा द्रुपद को शाप देने के लिये अपने चुलुक में जल लिया, तो उसमें से साक्षात् विजय की मूर्तिरूप एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जिससे चौलुक्य (सोलंकी) वंश चला *". इसप्रकार भिन्न भिन्न पुरुषों के चुलुक से उत्पन्न होने की कल्पना से यही कहा जा सकता है, कि 'चुलुक' से 'चौलुक्य' शब्द बनता है इस पर लक्ष रखकर कितने एक कवियों ने अपनी कल्पना के मनमाने घोड़े दौड़ाये हैं, परन्तु प्राचीन लिखित प्रमाण जो उपलब्ध हुए हैं उनसे सोलंकीयों का चन्द्रवंशी न होना ही स्थिर होता है.

—*—

* भरद्वाजो नाग च्युतकलुपदोपस्तगवद्य एकस्सर्व्वपागुपशमधनानामधिपतिः । तदीयात्तेजस्तः कृतकलशवासाद्यदभवत्ता वै भारद्वाजस्त्रिभुवनचमत्कारिचरितः ॥....॥ अथात्तेपात्तेन द्रुपदविपदर्थोद्धतधिया यदात्तं शापाम्भस्तरलितकरावद्धचुलु-कम् । पुमानासीत्तस्मिन्विजय इव राक्षसादनु च तं कुलं चौलुक्यानामनगुगुणसी-म.प्रववृते ॥ (ए० ई० जि० १, पृ० २५७).

इस लेख में संवत् नहीं है, परन्तु युवराजदेव दूसरे का पौत्र गांगेयदेव क-लचुरि संवत् ७८६ (वि० सं० १०६४=ई० स० १०३७) में विद्यमान था, अ-तएव युवराजदेव दूसरा वि० सं० १०५० (ई० स० १०१३) के आसपास विद्य-मान होना चाहिये. यह लेख हैहय (कलचुरि) वंशियों का है, परन्तु युवराज-देव दूसरे के दादा केशूरवर्ध (युवराजदेव प्रथम) की राणी नोहला सोलंकी अवनिवर्गा की पुत्री थी, इसी से उक्त लेख के तय्यार करनेवाले ने प्रसंगवशात् उसमें सोलंकीयों की उत्पत्ति का हाल लिखा है.

न० कोई कोई आधुनिक शोधक चावड़ा, पडिहार, परमार, चौहान, तंवर,

प्रकरण दूसरा.

दक्षिण के सोलंकियों का इतिहास.

सोलंकियों के कितने एक ताम्रपत्रों, शिलालेखों, और 'वि-
क्रमाङ्कदेवचरित' से पाया जाता है, कि उनका राज्य पहिले
अयोध्या में रहा, जहां से वे दक्षिण में गये; और भाटों के पु-
स्तकों * में भी उनका राज्य पहिले गंगातट पर होना लिखा
मिलता है, अतएव उत्तर से उनका दक्षिण में जाना, फिर वहां
से गुजरात, राजपूताना, बघेलखंड आदि में फैलना पाया जाता
है, इसलिये हम प्रथम दक्षिण के सोलंकियों का इतिहास लि-
खते हैं, जिस के पीछे गुजरात आदि के सोलंकियों का घुसा-
न्त लिखेंगे.

कितने एक ताम्रपत्र और शिलालेखादि में लिखा मिलता
है, कि " उदयन के अनन्तर ५६ राजाओं ने अयोध्या में, और
उनके पीछे १६ राजाओं ने दक्षिण में राज्य किया, फिर सोलं-
कियों की राज्यलक्ष्मी कुछ कालतक दूसरों के हाथ में रही,

कछावा आदि राजपूतों का 'गूजर' होना अनुमान करने लगे हैं, और उनमें वे सोलं-
कियों को भी शामिल करते हैं, परन्तु आजतक के प्राचीन शोध से जो कुछ ज्ञात
हुआ है उसमें सोलंकियों का 'गूजर' होना कहीं नहीं लिखा, किन्तु चंद्रवंशी होना
जगह जगह लिखा मिलता है. खाली पृथ्वीराजरासे में उन (सोलंकियों) को अ-
ग्निवंशी लिखा है, उसी परसे वे अपने अनुमान के घड़े दौड़ाते हैं, अतएव हम
उनसे किसी प्रकार सहमत नहीं हो सकते.

* टाड राजस्थान, जि० १, पृ० १०४ (कलफत्ते की छपी).

जिसके पीछे राजा जयसिंह ने सोलंकी राज्य की पीछी स्थापना की" * . इसके सिवाय जयसिंह के पूर्व का दक्षिण के सोलंकियों का कुछ भी वृत्तान्त नहीं मिलता, अतएव राजा जयसिंह से ही इतिहास प्रारंभ किया जाता है.

जयसिंह और रणराग.

दक्षिण में सोलंकियों का राज्य पीछा स्थिर करनेवाला राजा जयसिंह हुआ, जिसके विरुद्ध (खिताब) 'वल्लभ' और 'वल्लभेन्द्र' मिलते हैं. येवूर * के शिलालेख और भीरज † से मिले हुए ताम्रपत्र में लिखा है, कि "उस (जयसिंह) ने राष्ट्रकूट (राठौड़) कृष्ण के पुत्र इन्द्र को जीता, जिसके सैन्य में ८०० हाथी रहते थे, और ५०० राजाओं को नष्ट करके सोलंकियों की राज्यलक्ष्मी को फिर धारण किया" †. इससे अनुमान होता है, कि राठौड़ और अन्य वंश के राजाओं के राज्य छीन

* तज्जेपु राज्यमनुपाल्य गतेपु राजस्वेकोनपट्टिगणनेपु पुरादयोध्यां । तद्वंशजास्तदनु पोडशभूमिपालाः क्त्वा दक्षिणापथजुषां विभरां वभूवुः ॥ दुष्टावष्टब्धायां च कतिपयपुरुषांतरांतरितायां चालुक्यकुलसंपदि भूयश्चालुक्यवंश्य एव ॥ वृत्तं ॥ कंदः कीर्तिलताकुरस्य कमलं लक्ष्मीविलारास्पदं वज्रं वैरिमहीभृतां प्रतिनिधिर्देवस्य वैद्यद्वहः । राजासीज्जयसिंहवल्लभ इति ख्यातश्चरित्रैर्निजैर्यो रेजे चिरगादिराजचरितोत्कंठप्रजानाहरन् ॥ (येवूर का शिलालेख और भीरज का ताम्रपत्र, इ० ऐ० जि० ८, पृ० १२).

* बम्बई इहाते के कलाङ्गी जिले के सोरापुर विभाग में.

† सदेर्न (दक्षिणी) मराठा प्रदेश में.

+ योराष्ट्रकूटकुलमिन्द्र इति प्रसिद्धं कृष्णाक्षस्य सुतमष्टशतेभसैन्यं । निर्जित्य दग्धनृपपंचशतो बभार भूयश्चालुक्यकुलवल्लभराजलक्ष्मीं ॥ (येवूर का लेख और भीरज का ताम्रपत्र — इ० ऐ० जि० ८, पृ० १२).

कर उसने अपना राज्य जमाया था. उसके पीछे उसका पुत्र रणराग राज्यसिंहासन पर बैठा, जो शरीर का प्रचंड, युद्धरसिक, और शिवभक्त * था. इसके सिवाय इन दो राजाओं का कुछ भी इतिहास नहीं मिलता †. रणराग का उत्तराधिकारी उसका पुत्र पुलकेशी ‡ हुआ.

* चटुलरिपुत्रगपटुभटकरटिघटाकोटिघटितरणरागः । सुकुतहरचरणरागस्त-
नयोभूतस्य रणरागः ॥ (इ० ऐ० जि० ८, पृ० १२). येवूर के लेख और मीरज के ताम्रपत्र में रणराग का शिवभक्त होना लिखा है, परन्तु दक्षिण के सोलंकियों के कुलदेवता विष्णु होने चाहियें, क्योंकि उनके ताम्रपत्रों के साथ की मुद्रा (मुहर) में वराह का चिन्ह मिलता है, जो उनके कुलदेवता का सूचक होना चाहिये. उनके ताम्रपत्रों में उक्त चिन्ह के विषय में यह भी लिखा मिलता है, कि “भगवान् विष्णु की कृपा से उनको वराह का चिन्ह प्राप्त हुआ था, जिसके प्रभाव से वे शत्रुओं के राज्य अपने आधीन करते थे” (भगवन्नारायणप्रसादसमा-
रादितवरवराहलाञ्छनेक्षणक्षणावशीकृतारातिमण्डलानां””चतुर्व्यानां”” (प्राचीन लेखमाला, भाग १, पृ० २१३). कुलदेवता विष्णु होने पर भी शिवभक्त होना संभव है.

† जयसिंह और रणराग के समय का कोई लेख अबतक नहीं मिला, जिससे उनका ठीक ठीक समय ज्ञात नहीं हुआ, परन्तु रणराग के पुत्र पुलकेशी के राज्य की समाप्ति वि० सं० ६२४ (ई० स० ५६७) में हुई यह निश्चित है, अतएव यदि प्रत्येक राजा का राजत्वकाल २० वर्ष माना जावे, तो जयसिंह के राज्य का प्रारंभ वि० सं० ५६४ (ई० स० ५०७) और रणराग की गद्दी नशीनी वि० सं० ५८४ (ई० स० ५२७) के आसपास होना स्थिर होगा.

‡ पूर्वी सोलंकी राजा राजराज (दूसरे) और वीरचोड आदि के समय के कितने एक ताम्रपत्रों में पुलकेशी के पहिले का वृत्तान्त इस तरह दिया है, कि “उदयन से लगाकर ५६ चक्रवर्ती राजा अयोध्या में होने बाद उक्तवंश का राजा विजया-

पुलकेशी *

दक्षिण के सोलंकियों (जयसिंह के वंशजों) में प्रथम राजा

दित्य विजय की इच्छा से दक्षिण में गया, जहां त्रिलोचन पल्लव (पल्लव-वंशी राजा) पर हमला करने में वह मारा गया, जिससे उसकी सगर्भा राणी अन्तःपुर की कितनी एक स्त्रियों तथा पुरोहित आदि सहित 'मुडिवेमु' नामक अग्रहार (दान में दिये हुए गांव) में विष्णुभट्ट सोमयाजी ब्राह्मण के यहां रही, जहां पर उसके विष्णुवर्द्धन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसने चलुक्य गिरि पर जाकर भगवती गौरी की आराधना की, और कार्तिकस्वामी, नारायण तथा मातृगण (देवियों) को प्रसन्न कर उनसे कुलपरंपरा के साम्राज्यचिह्न, अर्थात् श्वेतछत्र, एक शंख, पञ्चमहाशब्द, पालिध्वज, प्रति-ठक्का, वराह का चिह्न, मोरछल, भाला, सिंहारण, मकरतोरण, सोने की छड़ी, गंगायमुना (उक्त चिह्न अथवा नामवाले ध्वज हों) आदि प्राप्त किये और कर्दववंशी तथा गंगावंशी राजाओं को विजय कर रेतु (रामेश्वर) और नर्मदा नदी के बीच के ७५०००० (? गांववाले) दक्षिणापथ (दक्षिण देश) पर राज्य किया. उसने पल्लव वंश की राजकन्या से विवाह किया, जिससे विजयादित्य उत्पन्न हुआ, जिसका पुत्र पुलकेशी वल्लभ था'' (राजराज दूसरे का दान-पत्र-इं० ऐं० जि० १४, पृ० ५१). इन ताम्रपत्रों के अनुरार पुलकेशी (प्रथम) का दादा विष्णुवर्द्धन और पिता विजयादित्य होना पाया जाता है, परन्तु ये ताम्रपत्र पुलकेशी के समय से कई सौ वर्ष पीछे के हैं, और ऊपर जो उनके स्थान में जयसिंह तथा रणराग नाम लिखे हैं वे स्वयं पुलकेशी के पुत्र के समय के शिलालेख से उद्धृत किये हैं, जो सर्वथा विश्वास योग्य हैं, अतएव विष्णुवर्द्धन और विजयादित्य पुलकेशी के दादा और पिता के सही नाम नहीं हो सकते. थां तो वे उन ताम्रपत्रों में गलती से दर्ज होगये हों, या सोलंकियों के दक्षिण में आने बाद के १६ राजाओं के नाम जो नहीं मिलते उनमें से किसी दो के हों, जिनको पीछे से शृंखला मिलाने के वास्ते पुलकेशी के नाम के पूर्व धरदिये हों, अथवा वे जयसिंह और रणराग के उपनाम हों.

* पुलकेशी नाम के 'पुलिकेशी', 'पुलुकेशी', 'पोलिकेशी', और 'पोलेकेशी'

पुलकेशी ही प्रतापी हुआ, इसी से पिछले बहुधा कुल ताम्रपत्रों में उसी से वंशावली प्रारंभ होती है. उसके विरुद्ध 'महाराज', 'सत्याश्रय' *, 'रणविक्रम' †, 'श्रीवल्लभ' और 'वल्लभ' ‡ मिलते हैं. उस ने वातापी (बादामी+) नगरी को अपनी राजधानी बनाया, जो कीर्तिवर्मा दूसरे के समय तक पश्चिमी सोलंकी राज्य की राजधानी ×

पाठान्तर भी लेखादि में मिलते हैं.

* सत्याश्रय=सत्य का स्थान.

† रणविक्रम=रण में पराक्रम बतलानेवाला.

‡ 'वल्लभ' (प्रिय), 'श्री वल्लभ' 'वल्लभेन्द्र', 'वल्लभनरेन्द्र', पृथ्वीवल्लभ' आदि विरुद्ध दक्षिण के सोलंकी राजाओं ने धारण किये थे, उनमें मुख्य 'वल्लभ' था, और उसीपर से अन्य (श्रीवल्लभादि) विरुद्धों की उत्पत्ति हुई है. इनमें से एक या अधिक विरुद्ध बहुतसों के नाम के साथ लगे हुए मिलते हैं. जब सोलंकी राजा कीर्तिवर्मा दूसरे का राज्य राठौड़ दंतिदुर्ग ने छीन लिया, तब से 'वल्लभ', 'वल्लभराज' आदि सोलंकियों के विरुद्ध दक्षिण के राठौड़ों ने धारण किये, और उन्हीं विरुद्धों पर से राठौड़ों के राज्य समय में जो अरब मुसाफिर हिंदुस्तान में आये उन्होंने राठौड़ों को 'वल्लहरा' लिखा है, जो 'वल्लभराज' के प्राकृतरूप 'वल्लहराय' का अपभ्रंश है.

+ तस्याभवत्तनूजपोलेकेशीथः श्रितेन्दुकान्तिरपि । श्रीवल्लभोप्ययासीद्वातापिपुरीवधूवरताम् ॥ (श० सं० ५५६=वि० सं० ६११=ई० स० ६३४ के एहोले के लेख से—ए० ई० जि० ६, पृ० ४). वातापी (बादामी) बम्बई इलाके के बीजापुर जिले के बादामी विभाग का मुख्य नगर है.

× बादामी राजधानी रहने के कारण जयसिंह से लगाकर कीर्तिवर्मा दूसरे तक के इस वंश के राजाओं को हम 'बादामी के सोलंकी' नाम से प्रकट करेंगे, और कीर्तिवर्मा दूसरे के राज्यच्युत होने बाद राजा तैलप ने सोलंकी राज्य की पुनः स्थापना की उसके पीछे कल्याण (कल्याणी) नगर उनकी राजधानी रहा, अतएव तैलप और उसके वंशजों को 'कल्याण के सोलंकी' कहेंगे.

रही. उस प्रतापी राजाने अश्वमेध, अग्निष्टोम, अग्निचयन, वाज-
पेय, बहुसुवर्ण, और पौण्डरीक नामक यज्ञ * कर ऋत्विजों को
बहुत १ से गांव दिये. वह मानव धृ (मनुस्मृति), पुराण, रा-
मायण, भारत (महाभारत), इतिहास, और नीति में कुशल था.
उस के दो पुत्र कीर्तिवर्मा और मंगलीश थे, जिनमें से बड़ा की-
र्तिवर्मा श० सं० ४८६ (वि० सं० ६२४=ई० स० ५६७) में +उ-
सका उत्तराधिकारी हुआ.

* तस्म सदृशगुणस्य नृपते प्रियतनूजस्सत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभरणविक्रमाङ्क-
नृपः अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयबहुसुवर्णपौण्डरीकाश्वमेधावभृथस्नानपुण्यपवित्रीकृ-
तशरीरः—(मङ्गलीश के समय के महाकूट के लेख से—ई० ए० जि० १६, पृ०
१७). उपर्युक्त एहोले के लेख में अश्वमेध यज्ञ करना ही लिखा है (भूश्च येन
हयमेधयाजिना प्रापितावभृथमज्जना बभौ), जिसका कारण यही होना चाहिये,
कि उन यज्ञों में अश्वमेध मुख्य होने से उसी का नाम लिखा हो. नेरूर के ता-
म्रपत्र में भी उपर्युक्त राण यज्ञों का करना लिखा है.

न० थेवूर के शिलालेख और गीरज के ताम्रपत्र में लिखा है, कि 'पुलकेशी
ने अश्वमेध यज्ञ में २००० गांव ऋत्विजों को दिये थे' (वयमपि पुलकेशि-
त्त्वापत्तिं वरुण्यंतः पुलककलितदेहाः पश्यतामपि संतः । स हि तुरगगजेन्द्रो
ग्रामसारं राहखद्वयपरिमितमृत्विक्साच्चकाराश्वमेधे), परन्तु यह कथन अतिशयोक्ति
से खाली नहीं है, इसीसे हमने ऊपर बहुत से गांव देना लिखा है.

धृ मानवपुराणरागायणभारतेतिहाराकुशलः नीतौ बृहस्पतिसमः अग्नि-
ष्टोमवाजपेयपौण्डरीकबहुसुवर्णाश्वमेधावभृथस्नानपवित्रीकृतशरीरः स्वगुणैर्लोक-
वल्लभो वल्लभः—(मङ्गलीश के समय के नेरूर के ताम्रपत्र से - ई० ए०
जि० ७, पृ० १६१).

+ कीर्तिवर्मा के समय के बादामी के एक शिलालेख में श० सं० ५००
(वि० सं० ६३५=ई० स० ५७८) में उसके राज्य का बारहवां वर्ष होना
लिखा है, जिससे पुलकेशी का देहांत (राज्य की समाप्ति), और कीर्तिवर्मा का
राज्याभिषेक श० सं० (५००-११=) ४८६ (वि० सं० ६२४=ई० स०
५६७) में होना निश्चय होता है.

पुलकेशी के समय के दो ताम्रपत्र श० सं० ३१० * (वि० सं० ४४५=ई० सं० ३८८), और ४११ न० (वि० सं० ५४६=ई० सं० ४८६) के मिले हैं, जो कृत्रिम हैं, क्योंकि उस समय उसका जन्म भी नहीं हुआ होगा.

कीर्तिवर्मा ध३.

कीर्तिवर्मा के विरुद्ध 'पुरुषपराक्रम' +, 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराज,' और 'वल्लभ' मिलते हैं. एहोले x के लेख से पाया जाता है, कि 'उसने नल, मौर्य, और कदंब वंशियों को नष्ट किया, शत्रुओं की लक्ष्मी को लूटा, और कदंब वंशियों के बड़े समूह को तोड़ने में महा पराक्रम बतलाया था' (). उसके समय नल वंशी राजा नलवाड़ी [] प्रदेश के, मौर्यवंशी (मोरी) कौकण के, और कदंबवंशी राजा उत्तरी कानड़ा प्रदेश के मालिक थे, अतः एव उसने ये प्रदेश अपने अधीन किये होंगे. महाकूट (+) के लेख में ऐसा लिखा है, "कि उसने बहुमुवर्ण, और अग्निप्रोम

* ई० ऐं० जि० ६, पृ० २६४--६६.

न० ई० ऐं० जि० ७, पृ० २११--१४.

ध३ कीर्तिवर्मा को कीर्तिराज भी लिखा है (केवल एक स्थल में).

+ राजा पुरु के समान रण में पराक्रम बतलानेवाला.

x एहोले—बम्बई इहाते के बीजापुर जिले में है.

() नलमौर्यकदम्बकालरात्रिस्तनयस्तस्य बभूव कीर्तिवर्मा । परदारनिवृत्त-
चित्तवृत्तेरपि धीर्यस्य रिपुश्रियानुकृष्टा ॥ रणपरावक्रमलब्धजयश्रिया रापदि येन वि-
रुणमशेषतः । नृपतिगन्धगजेन महौजरा पृथुकदम्बकदम्बकदम्बकम् ॥ (ए०
ई० जि० ६, पृ० ४--५).

[] नलवाड़ी=बम्बई इहाते के बेल्लारी और कर्नूल जिलों का कितना एक अंश.

(+) बादामी से ३ मील एक पहाड़ी पर मन्दिरों का समुदाय है, जो 'महा-
कूट' नाम से प्रसिद्ध है.



घञ्ज किये, और अंग *, बंग, कर्लिंग, वट्टूर, मगध, मद्रक, केरल, गंग, मूषक, पाण्ड्य, द्रमिल, चोलिय, आलुक और वैजयन्ती आदि के अनेक शत्रु राजाओं को जीता था;” ५ परन्तु उसके विजय का यह वृत्तान्त उक्त लेख के तय्यार करनेवाले ने शायद अतिशयोक्ति से लिखा हो, क्योंकि इतने दूर दूर के देशों के राजाओं को विजय करना किसी अन्य लेख से सिद्ध नहीं होता, अतएव हम ऐहोले के लेख से उसके विजय का वृत्तान्त जो ऊपर उद्धृत किया गया है उसी को विश्वास योग्य मानते हैं. पुलकेशी दूसरे के समय

* अंग = बङ्गाल का पश्चिमी हिस्सा. बङ्ग = बंगाल का पूर्वी हिस्सा. कर्लिंग = गोदावरी और महानदी के बीच का पूर्वी समुद्रतट का प्रदेश (उत्तरी सरकार). वट्टूर = शायद यह दक्षिण के किसी शहर का नाम हो. मगध = बिहार. मद्रक = पंजाब के वायव्य कोण का एक देश. केरल = मलबार तट पर. गंग = गंगवाड़ी, माहसोर राज्य के अंतर्गत. मूषक = मलबार तट पर का किलोन और कन्याकुमारी के बीच का प्रदेश. पाण्ड्य = गद्रास इहाते का दक्षिणी हिस्सा, जिरागे मद्रा और तिनेवेल्ली विभाग है. द्रमिल = द्रविड़देश, जिरा की राजधानी कांचीपुरी (कांजीवरम्) थी. चोलिय = चोलदेश, अर्थात् पूर्वी समुद्र तट का वह देश, जो पाण्ड्य देश की उत्तरी सीमा से लगाकर परालु नदी तक फैला हुआ है. आलुक = शायद यह किसी शहर का नाम हो, अथवा यह नाम 'शेष' शब्द का पर्याय होने से नागवंशियों का सूचक हो, जिनका राज्य सोलंकी राज्य की पश्चिमी सीमा की ओर था. वैजयन्ती = उत्तरी कानडा प्रदेश के बनवासी विभाग की राजधानी, जहाँपर कदम्बवंशियों का राज्य था.

५ ज्येष्ठः श्रेष्ठगुणरामुदयोदितपुस्तरणपराक्क्रमाङ्गप्रियः स्वबाहुबलपराक्क्रमो-
पार्जितराज्यसंपन्नः बहुसुवर्णाग्निष्टोमावभूथस्नानपुण्यपवित्रीकृतशरीरः बं-
गाङ्गकलिङ्गवट्टूरगगधमद्रककेरलगङ्गमूषकपाण्ड्यद्रमिलचोलियालुकवैजयन्त्यप्रभृत्य-
नेकपरन्तुपतिरामूहावगर्हलब्धविजये दिवगधिरूढे ... (इ० ऐ० जि० १६,
पृ० १७).

के चिप्लून * के दानपत्र में उस (कीर्त्तिवर्मा) की राणी को सेन्द्रकवंशी महाराज श्रीवल्लभ सेनानन्द की बहिन, और उसको वातापी (बादामी) नगर का 'प्रथम विधाता' लिखा है †. 'प्रथम विधाता' का आशय 'प्रथम बसानेवाला' या 'प्रथम राजधानी काइम करनेवाला' नहीं, किन्तु ऐसा होना सम्भव है, कि 'उसने पहिले पहिले उक्त शहर की सौन्दर्यता बढ़ाई हो', क्योंकि वह तो पहिले ही से आबाद था, और पुलकेशी (प्रथम) ने उसको अपनी राजधानी बनाया था. बादामी की सुन्दरता बढ़ानेवाला विष्णु का मन्दिर जो पहाड़ को काट काट कर बनाया गया है वह भी कीर्त्तिवर्मा के ही समय उसके छोटे भाई मंगलीश ने बनाया था, और अन्य भी ऐसे ही उक्त शहर की शोभा बढ़ानेवाले महत् शिल्पकार्य उसके समय में हुए हों यह सम्भव है. देहान्त के समय उसके ४ पुत्र पुलकेशी, विष्णुवर्द्धन, जयसिंहवर्मा और बुद्धवरसराज विद्यमान थे, परन्तु चारों बालक होने के कारण उसका छोटा भाई मंगलीश उसके राज्य का मालिक ‡ बन बैठा.

* चिप्लून=बम्बई इहाते के रत्नागिरि जिले में.

† ए० इ० जि० ३, पृ० ५१.

‡ येवूर के शिलालेख और मीरज तथा कौथूम से मिले हुए ताम्रपत्रों में लिखा है, कि 'अपने बड़े भाई का पुत्र बाल्यावस्था के कारण [राज्य-प्रबन्ध करने को] अशक्त था, इसवास्ते मंगलीशने राज्य का भार अपने हाथ में लिया, परन्तु जब सत्याश्रय (पुलकेशी दूसरा) युवान् हुआ, तब राज्य पीछा उसको सौंप दिया' (ज्येष्ठभ्रातुस्सति सुतवरेप्यर्भकत्वादशक्ते यस्मिन्नात्मन्यकृत हि धुरं मंगलीशः पृथिव्याः । तस्मिन्प्रत्यर्प्यदथ महीं यूनि सत्याश्रयेसौ चालुक्यानां क इव हि पथो धम्म्यतः प्रच्यवेत ॥ इ० ए० जि० ८, पृ० १३), परन्तु यह लिखना सर्वथा विश्वास योग्य नहीं है, क्योंकि ये लेखादि मंगलीश के समय से ४०० से भी अधिक वर्ष पीछे के हैं, जिन में उस राजा का अपयश छिपाने का यत्न किया गया है, जब कि स्वयं पुलकेशी दूसरे के समय के एहोले के लेख से यही पाया

कीर्तिवर्मा के समय का एक शिलालेख * बादामी के विष्णु मंदिर (गुफारूप) से मिला है, जो उसके राज्यवर्ष १२ वें और श० सं० ५०० (वि० सं० ६३५=ई० स० ५७८) कार्तिक शुक्ल १५ का है. उसका आशय यह है, कि 'कीर्तिवर्मा के राज्य समय उसके छोटे भाई मंगलीश के बनाये हुए उक्त मन्दिर की उस रोज प्रातिष्ठा हुई, और मंगलीश ने लंजीश्वर का गांव उसके भेट किया.'

मंगलीश †.

मंगलीश के विरुद्ध 'उरुणविक्रान्त', 'रणविक्रान्त', और 'पृथिवीवल्लभ' मिलते हैं. एहोले के लेख से पाया जाता है, कि 'उसने पूर्वी और पश्चिमी समुद्रतटों पर अपना अश्वसैन्य रक्खा था (अर्थात् दोनों समुद्रतटों के बीच के प्रदेश पर उसका अधिकार था), तलवार के बल से युद्ध में हस्तिसमूह को नष्ट कर कलचुरी (हैहय) वंश के राजा की लक्ष्मी छीन ली, और रेवती द्वीप ‡ को विजय किया × उक्त लेख में कलचुरी राजा

जाता है, कि कीर्तिवर्मा के पीछे मंगलीश राजा बन बैठा, और पुलकेशी जब राज्यलक्ष्मी धारण करने योग्य हुआ तो वह उसपर द्वेष रखने, और अपने पीछे अपने पुत्र को राज्य देने का उद्योग करने लगा, जिसमें उसको अपना महाराज्य और प्राण दोनों छोड़ने पड़े.

* इ० ऐ० जि० ६, पृ० ३६३.

¶ लंजीश्वर गांव बादामी के पास है और इस समय नंदिकेश्वर कहलाता है.

‡ मंगलीश के स्थान पर मंगलराज, मंगलेश और मंगलेश्वर नाम भी लिखे मिलते हैं.

+ रेवती द्वीप=बंबई इहाते के रत्नागिरि जिले में बैंगुरला से ८ मील दक्षिण में 'रेडी' नाम से प्रसिद्ध है, जो यथार्थ में द्वीप नहीं किन्तु समुद्र में गई हुई भूशलाका है.

× तस्मिन्सुरेश्वरविभूतिगताभिलाषे राजाभवत्तदनुज × किल मङ्गलेशः ।

का नाम नहीं दिया, परन्तु महाकूट के उपर्युक्त लेख में उसका नाम बुद्धनृप (बुद्धराज), और नेरूर * से मिले हुए ताम्रपत्र में उसको शंकरगण का पुत्र बुद्धराज † लिखा है. बुद्धराज चेदी देश के कलचुरी राजाओं का पूर्वज और गुजरात के लाट प्रदेश का राजा था, अतएव मंगलीश ने लाटदेश तक अपने राज्य की उत्तरी सीमा बढ़ा दी होगी. नेरूर के ताम्रपत्र में यह भी लिखा है, कि 'उस (मंगलीश) ने अठारह युद्ध में जय पानेवाले चलिक्क्य (सोलंकी) वंशी स्वामिराज को मारा था' ‡, परन्तु स्वामिराज कहाँ का राजा था इसका पता नहीं चलता.

मंगलीश विष्णुभक्त था. उसने श० सं० ५०० (वि० सं० ६३५=ई० सं० ५७८) में बादामी के पहाड़ को कटवा कर गुफा-रूप सुन्दर विष्णु का मन्दिर अपने बड़े भाई के राज्य समय बनवाया, और लंजीश्वर नामक गांव उसके भेद कर उसकी

यः पूर्वपश्चिमसमुद्रतटोपिताश्च सेनारजः पटविनिर्मितदिग्वितानः ॥ स्फुरन्मयूखैर-
सिद्धीपिकाशतैर्व्युदस्य मातङ्गतमिन्नसञ्चयम् । अवासवान्यो रणरङ्गमन्दिरे कट-
चचुरिश्चीललनापरिग्रहम् ॥ पुनरपि च जिघृक्षोस्सैन्यमाकक्रान्तसालं रुचिरबहुप-
त्ताकं रेवतीद्वीपमाशु । सपदि महदुदन्वतोयसंक्रान्तबिम्बं वरुणबलमिवाभूदागतं य-
स्य वाचा ॥ (ए० इ० जि० ६, पृ० ५).

* नेरूर=बंबई इलाते के सावंतवाड़ी राज्य के अन्तर्गत है.

† कलचुरि (हैहय) वंशी राजा बुद्धराज का आनंदपुर (गुजरात में) से दिया हुआ एक दानपत्र मिला है (ए० इ० जि० ६, पृ० २६७-२६), जिसमें उसको शंकरगण का पुत्र और कृष्णराज का पौत्र लिखा है. वह दानपत्र कलचुरि सं० ३६१ (वि० सं० ६६६=ई० सं० ६०६) कार्तिक व० १५ (अमावास्या) का है.

‡ तेन राज्ञा शंकरगणपुत्रं गजतुरगपदातिकोशबलसंपन्नं बुद्धराजं विद्राव्य चलिक्क्यवंशसम्भवं अष्टादशसमरविजयिनं स्वामिराजं च हत्वा.... (इ० ई० जि० ७, पृ० १६१).

आमद से प्रतिदिन नारायणबलि करने, और १६ ब्राह्मणों को भोजन कराने के उपरान्त जो बचत रहे उससे परिव्राजकों (संन्यासियों) को भोजन कराने की व्यवस्था की थी.

उसने अपने बड़े भाई के पुत्र पुलकेशी को, जो राज्य का हकदार था, महरूम रख अपने पीछे अपने पुत्र को राज्य देने का यत्न किया, परन्तु उसमें उसको सफलता प्राप्त न हुई इतना ही नहीं, किन्तु अपना प्राण भी खोना पड़ा *.

रेवती द्वीप में नियुक्त किये हुए ४ विषयों (जिलों) के हाकिम सत्याश्रय धुवराज इन्द्रचर्मा के श० सं० ५३२ (वि० सं० ६६७=ई० सं० ६११) के दानपत्र ^{१०} में विजयराज्यसंवत्सर २० वां लिखा है. रेवती द्वीप मंगलीश ने ही विजय किया था, अतएव वहां के हाकिम के दानपत्र का राज्यसंवत्सर (सन् जुलूस) यदि मंगलीश का राज्यसंवत्सर माना जावे, तो उसके राज्य पाने और कीर्तिचर्मा के देहान्त का समय श० सं० (५३२-१६=) ५१६ ई० (वि० सं० ६४८=ई० सं० ५६१) स्थिर होगा. हैदरा-

* तस्याग्रजस्य तनये नहुमानुभावे लक्ष्म्या किलागिलपिते पुलिकेशिनाग्नि ।
सासूयमात्मनि भवन्तमतः पितृव्यं ज्ञात्वापरुद्धचरितव्यवसायनुद्धौ ॥ स यदुपचित-
मन्त्रोत्साहशक्तिप्रयोगक्षपितबलविशेषो मङ्गलेशस्समन्तात् । स्वतनयगतराज्यारम्भ-
यत्नेन सार्द्धं निजमतनु च राज्यञ्जीवितञ्चोञ्जकति स्म ॥ (ए० ई० जि० ६,
पृ० ५).

^{१०} बंबई की एशियाटिक सोसाइटी का जर्नल जि० १०, पृ० ३६५.

ई० फ्लीट साहिब ने मंगलीश के समय का महाकूट का लेख छपवाया (ई० ऐ० जि० १६, पृ० १६-१८) है, जिसमें 'तदुत्तरोत्तरप्रवर्द्धमानराज्यपञ्चमश्रीवर्षे प्रवर्त्तमाने सिद्धार्थे वैशाखपूरणमास्यामिमं प्रतिष्ठापितवान्' पढ़ा है, और सिद्धार्थ संवत्सर अर्थात् श० सं० ५२४ को उसका पांचवां राज्य-वर्ष मानकर वर्तमान श० सं० ५२० (वि० सं० ६५४=ई० सं० ५६७) ज्येष्ठकृष्ण १, और वर्तमान श० सं० ५२१ (वि० सं० ६५५=ई० सं० ५६८)

बाद (दक्षिण का) से एक ताम्रपत्र श० सं० ५३४ (वि० सं० ६६६=ई० स० ६१२) का * मिला है, जिसमें पुलकेशी (दूसरे) का तीसरा राज्यवर्ष होना लिखा है, अतएव मंगलीश का मारा जाना और पुलकेशी का राज्याभिषेक श० सं० (५३४-२=) ५३२ (वि० सं० ६६७=ई० स० ६१०) में स्थिर होता है.

मंगलीश के समय के दो शिलालेख और दो दानपत्र मिले हैं, जिनमें से एक बादामी का लेख [†] कनड़ी भाषा का है, और उसमें उपरोक्त लंजीश्वर गांव देनेका उल्लेख है. दूसरा शिलालेख महाकूट [‡] का है, जो इतिहास के लिये विशेष उपयोगी है. इन दोनों लेखों में संवत् नहीं है. नेरूर का दानपत्र + भी बिना संवत् का है, और उपर्युक्त सत्याश्रय धुवराज इन्द्रवर्मा का श० सं० ५३२ (वि० सं० ६६७=ई० स० ६११) का दानपत्र X भी उसी के राज्य समय का होना चाहिये.

वैशाख शु० १५ के बीच मंगलीश का राज्य पाना निर्णय किया है, परन्तु उक्त साहिब ने उस लेख की जो छाप (फोटो लिथो) दी है, उसको सूक्ष्मदर्शक काच की सहायता से पढ़ा तो 'पञ्चम' शब्द स्पष्ट पढ़ा नहीं जाता इतना ही नहीं, किन्तु जिस अस्पष्ट अक्षर को वे 'म' ('पंचम' का) पढ़ते हैं, उसके और 'श्री' ('श्रीवर्ष' के) के बीच ३ अस्पष्ट अक्षर और भी खुदे हुए हैं, जिनका उन्होंने विचार तक नहीं किया. ऐसी दशा में जबतक किसी स्पष्ट लेख से उनका मानना विवाद रहित सिद्ध न हो तबतक हम उनके निर्णय को स्वी नहीं कर सकते.

* (इ० ऐं० जि० ६, पृ० ७३-७४).

† इ० ऐं० जि० १०, पृ० ६०.

‡ इ० ऐं० जि० १६, पृ० १६-१८.

+ इ० ऐं० जि० ७, पृ० १६१-६२.

X बंध० ए० सो० ज० जि० १०, पृ० ३६५

प्रकरण तीसरा.

पुलकेशी * (दूसरा).

मंगलीश के मारे जाने पर उसके बड़े भाई का ज्येष्ठ पुत्र पुलकेशी दूसरा राजा हुआ, जो राजनीतिकुशल, उत्साही, और बुद्धिमान होने से ही अपना गया हुआ राज्य पीछा लेने को समर्थ हुआ. मंगलीश और पुलकेशी के बीच के बखेड़े के समय पहिले के आधीन किये हुए कितने एक राजा फिर स्वतंत्र होने लगे, और शत्रुओं को उसका राज्य दबाने का अवसर मिला, परन्तु उसने अपने बाहुबल और बुद्धिमानी से सब उपद्रव शांत कर अपने राज्य को बहुत कुछ बढ़ाया. सोलंकी वंश में उसके समान प्रतापी दूसरा कोई राजा नहीं हुआ. उसके समय हिन्दुस्तान में दोही प्रबल राजा थे. नर्मदा से उत्तर में कन्नौज का वैशवंशी राजा श्रीहर्ष (हर्षवर्द्धन), और दक्षिण में पुलकेशी (दूसरा). श्रीहर्ष ने दक्षिण को भी अपने आधीन करने की इच्छा से उसपर चढ़ाई की थी, परन्तु पुलकेशी से परास्त होकर उसे लौटना पड़ा था. श्रीहर्ष जैसे महाप्रतापी राजा को जीतना साधारण गौरव की बात न थी.

उसके विरुद्ध 'सत्याश्रय', 'पृथिवीवल्लभ', 'वल्लभ', 'वल्लभराज', 'महाराज', 'महाराजाधिराज', 'भट्टारक', और 'परमेश्वर' मिलते हैं. वह शिव का परमभक्त था. श० सं० ५५६ (वि० सं० ६६१ = ई० सं० ६३४) में एहोले का लेख तय्यार हुआ उस समय तक का अर्थात् उसके राज्य के पहिले २४ वर्ष का हाल उक्त लेख में इस प्रकार दिया है:—

* पुलकेशी के स्थानपर पुलिकेशी और पोलेकेशी भी लिखा मिलता है.

“छत्रभंग होने (मंगलीश के मारे जाने) के समय राज्य पर शत्रुरूप अन्धकार छा गया, जिसको उसने अपने अतुल प्र-
तापरूप प्रकाश से मिटाया. ऐसे समय में अचसर पाकर अप्पा-
यिक और गोविंद अपने हस्तिसैन्य सहित भीमरथी * नदी के
उत्तर के प्रदेश पर चढ़ आये, जिनमें से एक † तो हारकर भाग ग-
या, और दूसरे ने मैत्री करके लाभ उठाया. अपने महान् सैन्य
से उसने वरदा ‡ नदी तट के बड़ी समृद्धिवाले बनवासी+ के
किले पर घेरा डालकर उसे विजय किया, गंगावंशी× और अ-
लूपवंशी § राजा आधीनता स्वीकार कर उसकी सेवा में
आरहे, कौंकण के मौर्यवंशी (मोरी) राजा को उसके प्र-
चंड सैन्य ने परास्त किया, पश्चिमी समुद्र की लक्ष्मी रूप
'पुरी' ‡ नगरी पर सैंकड़ों नौकाओं से हमला कर उसे

* भीमरथी=भीमा नदी (बम्बई इहाते के अहमदनगर जिले में).

† अप्पायिक.

‡ वरदा = बनवासी के किले के पास बहनेवाली नदी.

+ बनवासी=बम्बई इहाते के उत्तरी कानड़ा प्रदेश में. बनवासी नगर कर्द-
वंशी राजाओं की राजधानी था.

× गंगावंशी राजा उस समय गंगवाड़ी (चेरा देश) के राजा थे, जो इस
समय माहसोर राज्य के अन्तर्गत है.

§ अलूप (नाग) वंशी राजाओं का अधिकार उस समय मलबार पर
होना चाहिये.

‡ पुरी = कौंकण के मौर्य (मोरी) वंशी राजाओं की राजधानी, जो पी-
छे से शिलारा वंश के राजाओं की भी राजधानी रही थी. यह नगरी पश्चिमी स-
मुद्र तट पर होनी चाहिये, परन्तु उसके स्थान का ठीक २ पता नहीं लगा. कोई
उसको बम्बई से ४ मील पूर्व समुद्र के भीतर का घारापुरी नामक स्थान अनुगा-
न करते हैं, परन्तु वह स्थान राजधानी के योग्य नहीं है.

लेलिया, लाट *, मालव † और गूर्जर ‡ के राजाओं ने उसकी आधीनता स्वीकार की, उसने अपरिमित समृद्धिशाली अनेक सामन्तवाले राजा हर्ष (कन्नौज के श्रीहर्ष) के हरितसैन्य का संहार कर उसका हर्ष मिटा दिया, विन्ध्याचल पर्वत के निकट रेवा (नर्मदा) नदी के तट पर उसने प्रबल सैन्य रख छोड़ा था, अपनी तीनों शक्तियों + के प्रभाव से वह ६६००० × गांववाले तीन देशों से बने हुए महाराष्ट्र देश का स्वामी बना,

* लाट = वर्तमान गुजरात देश का वह हिस्सा, जो मही और नर्मदा नदियों के बीच में है. उक्त देश की सीमा समय समय पर बढ़ती घटती रही थी.

† मालव = वर्तमान मालवे का पश्चिमी हिस्सा, जो पूर्वी गुजरात से मिला हुआ है.

‡ गूर्जर = गूर्जरो के आधीन का देश, जो पीछे से गुजरात नाम से प्रसिद्ध हुआ. पुलकेशी (दूसरे) के समय गूर्जर (गूर्जर) राजाओं का राज्य लाट देश पर भी था, और उनकी राजधानी भड़ौच नगर थी. पुलकेशी ही के समय चीनी यात्री ह्वेन्त्संग ने गूर्जर देश की राजधानी गीनमाल होना लिखा है, जो इस समय जोधपुर राज्य में है. कन्नौज के पड़िहार राजा भोजदेव प्रथम के वि० सं० ६०० (ई० सं० = ४३) के साम्रपत्र से पाया जाता है, कि उस समय तक जोधपुर राज्य का डीडवाना जिला, जो अजमेर से उत्तरपश्चिम और बीकानेर राज्य से दक्षिणपूर्व में है, गुजरात में गिना जाता था. वर्तमान राजपूताने का बहुतसा हिस्सा पहिले गूर्जरो के आधीन रहने से गुजरात (गूर्जरत्रा) कहलाता था, और जब उनका राज्य पीछे से वर्तमान गुजरात देश पर हुआ तब से वह देश भी गुजरात कहलाने लगा, और अब उसी को गुजरात कहते हैं.

+ तीन शक्ति = उत्तराहशक्ति, मंत्रशक्ति और प्रभुत्वशक्ति.

× महाराष्ट्र देश में ६६००० गांवों का होना खाली अनिश्चित जनश्रुति के आधार से वा अतिशयोक्ति से लिखा हो.

दूसरे राजाओं को जीतनेवाले कोसल * और कलिंग देश के राजा उसके सैन्य को देख भयभीत होगये, पिछपुर † को पीस कर वहाँ का किला उसने लेलिया, कुनालवालों ‡ का संहार कर वहाँ के जल को रुधिर से लाल कर दिया, बड़ी सेना के साथ कांचीपुरी (कांजीवरम्) को घेर वहाँ के पल्लववंशी राजा को किले में भगाया, और चोल देश जीतने की इच्छा से अपने हस्तिसेन्य सहित कावेरी नदी को पार करने बाद चोल, पाण्ड्य और केरल के राजाओं से तो मैत्री करली, परन्तु पल्लव राजा के सैन्य का नाश किया. इस प्रकार चौतरफ़ विजय किया, और जीते हुए राजाओं को छोड़ वह पीछा वातापी (बादामी) में आकर राज्य करने लगा ” +.

उपरोक्त वृत्तान्त अतिशयोक्ति के साथ नहीं लिखा गया, किन्तु बहुधा सत्य घटनाएँ प्रकट करता है. उसमें लिखा हुआ अप्पायिक कहां का राजा था यह मालूम नहीं हो सका. गोविन्द राष्ट्रकूट (राठौड़) वंश के इन्द्र का पुत्र और कर्कराज का पिता (गोविन्द प्रथम) होना चाहिये, जो पुलकेशी का समकालीन था. जब सोलंकी राजा जयसिंह ने राठौड़ कृष्ण के पुत्र इन्द्र से राज्य छीना तब से राठौड़ अपना गया हुआ राज्य पीछा लेने के उद्योग में लगे हों यह संभव है, और उनका उद्योग

* कोसल = यह दक्षिण कोसल देश (उड़ीसा से दक्षिणपश्चिम का मध्य-प्रांतों का वह हिस्सा, जो महानदी और गोदावरी की उत्तरी शाखाओं के बीच है) होना चाहिये.

† पिछपुर = मद्रास इलाके के पूर्वी समुद्र तट पर के एक राज्य की राजधानी, जो इस समय 'पिछापुरम्' नामक ज़मींदारी का मुख्य नगर है.

‡ कुनाल = पिछापुरम् से दक्षिण के 'कोल्लेरु' नामक जलाशय के निकट का प्रदेश.

+ ए० इ० जि० ६, पृ० ५-६.

सोलंकी राजा कीर्तिवर्मा दूसरे के समय पूर्णरूप से सफल हुआ था. बनवासी के कंदब वंशी राजा को कीर्तिवर्मा ने अपने आधीन किया था, परन्तु मंगलीश के साथ के बखेड़े के समय वहां का राजा फिर स्वतंत्र होगया हो, जिससे फिर उसपर चढ़ाई करना पड़ा हो. हर्ष (श्रीहर्ष=हर्षवर्द्धन=शीलादित्य) कन्नौज का प्रतापी राजा था, जिसने सारे उत्तरापथ (नर्मदा से उत्तर के देश) को अपने आधीन कर लिया था. उसको विजय करने पर पुलकेशी ने 'परमेश्वर' विरुद्ध * धारण किया था. चीनी यात्री हुएन्त्संग ने भी, जो उस समय हिन्दुस्तान में था, पुलकेशी के इस महान् विजय का उल्लेख अपनी यात्रा के पुस्तक १० में किया है. उस समय श्रीहर्ष के समान कोई दूसरा प्रतापी राजा उत्तरी हिन्दुस्तान में (नर्मदा से उत्तर में) न था, अतएव उसको विजय करना सोलंकियों के लिये बड़े ही गौरव की बात थी. उसको नर्मदा से दक्षिण में बढ़ते हुए रोकने के लिये वहाँ पर पहिले से प्रबल सैन्य रखना यह पुलकेशी की दूरदर्शिता और राज्यप्रबंध की दक्षता प्रकट करता है. कांचीपुरी का राजा उस समय पल्लववंशी महेन्द्रवर्मा होना चाहिये. उक्त नगर पर पुलकेशी ने घेरा डाला था, परन्तु वह विजय नहीं हुआ हो ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि चोल, केरल, और पाण्ड्य देश के राजाओं से मैत्री करने बाद फिर उसको पल्लव राजा से लड़ना पड़ा था, ऐसा उपर्युक्त लेख से स्पष्ट है.

पुलकेशी ने श्रीहर्ष को विजय करने बाद हिन्दुस्तान में बड़ी

* समरसंसक्तसकलोत्तरापथेश्वरश्रीहर्षवर्द्धनपराजयोपलब्धपरमेश्वरापरनामधेयस्य सत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरभट्टारकस्य.... (पुलकेशी के ज्येष्ठ पुत्र चन्द्रादित्य की राणी विजयभट्टारिका के दान पत्र से—इं० ऐं० जि० ७, पृ० १६३—६४).

१० बुद्धिस्ट रेकर्ड ऑफ़ दी वेस्टर्न वर्ल्ड—सीयुकि, जि० २, पृ० २५७.

प्रसिद्धि पाई इतनाही नहीं, किन्तु उसकी ख्याति हिन्दुस्तान के बाहिर के देशों में भी फैल गई थी, और बाहिर के राजाओं से भी उसकी मैत्री थी. तबरी नामक इतिहास लेखक अपने पुस्तक (अरबी भाषा के) में लिखता है, कि “ईरान के बादशाह खुस्रो दूसरे के सन् जुलूस (राज्यवर्ष) ३६ वें में उसका एल्ची पुलकेशी के पास पत्र और तुहफा (सौगात की चीजें) लेकर गया, और पुलकेशी का एल्ची पत्र और तुहफा लेकर उसके पास आया था *”. खुस्रो के एल्ची ने अपने बादशाह की तरफ का तुहफा उसके नज़र किया उस समय के दर्बार का एक सुन्दर रंगीन चित्र † प्रसिद्ध अजंटा की गुफा में

* रॉयल एशियाटिक सोसाइटी का जर्नल, न्यू सीरीज, जि० ११, पृ० १६५.

† उक्त रंगीन चित्र का भाव नीचे अनुसार है:—

“राजा गद्दी बिछे हुए सिंहासन पर लम्बगोलाकृतिक तकिये के सहारे बैठा हुआ है. आस पास चमर तथा पंखा करनेवाली स्त्रियां, तथा अन्य परिचारक स्त्री पुरुष, कोई खड़े और कोई बैठे हुए हैं. राजा के सम्मुख बाईं ओर तीन पुरुष, और एक लड़का सुन्दर मोतियों के आभूषण पहिने हुए बैठे हैं (जो राजा के कुंवर, भाई या अमात्य वर्ग में से होने चाहियें). राजा अपना दाहिना हाथ उठाकर ईरानी एल्ची से कुछ कह रहा है. उस (राजा) के सिर पर मुकुट, गले में बड़े बड़े मोती व माणक की एक लड़ी कंठी, और उसके नीचे सुन्दर जड़ाऊ कंठा है. दोनों हाथों में भुजबन्ध, और कड़े हैं. यज्ञोपवीत के स्थान पर पचलड़ी मोतियों की माला है, जिसमें प्रवर (ग्रंथि) के स्थान पर पांच बड़े मोती हैं, और कमर में रत्नजटित कंदोरा है. पोशाक में आधी जांघ तक कछनी, और बाकी सारा शरीर नंगा है. दक्षिणी लोग जैसे समेट कर दुपट्टा गले में डालते हैं, उसी प्रकार समेटा हुआ केवल एक दुपट्टा कन्धों से हटकर पीछे के तकिये पर पड़ा हुआ है, और उसके दोनों समेटे हुए किनारे गद्दी के आगे पड़े हुए दीखते हैं. उसका शरीर भूचंड, पुष्ट और गौर वर्ण है (चिहरे के स्थान का चूना उखड़ जाने से वह नहीं दीख सकता). दर्बार में जितने हिन्दुस्तानी पुरुष हैं उन के शरीर पर

एक दीवार पर अब तक विद्यमान है. खुस्रौ दूसरे ने ई०स० ५६१ से ६२८ (वि० सं० ६४८ से ६८५) तक राज्य किया था, जिससे उस के राज्य का ३६ वां वर्ष (५६१+३५=) ई०स० ६२६ (वि० सं० ६८३) था, इस वास्ते पुलकेशी के राज्य के १६ वें वर्ष के आसपास खुस्रौ का एल्ची उस के दरबार में आया होगा.

आधी जांघ तक कछनी के सिवाय कोई वस्त्र नहीं दीखता, और न किसी के डाढ़ी या मूँछ हैं. स्त्रियों के शरीर का कमर से लगाकर आधी जांघ या कुछ नीचे तक का हिरसा वस्त्र से ढका हुआ है, और किसी किसी के स्तनों पर कपड़े की पट्टी बंधी हुई है, बाकी सारा शरीर खुला है (यहां के प्राचीन चित्रादि में स्त्रियों के स्तन बहुधा खुले हुए पाये जाते हैं, या कभी कभी उनपर पट्टियां बंधी हुई दीख पड़ती हैं. पट्टियें बांधने का रिवाज प्राचीन है. श्रीमद्भागवत के दशमस्कंध में भी उसका वर्णन मिलता है— तदगरंगप्रमुदाकुलोन्द्रियाः केशान्दुकूलं कुचपट्टिकां वा । नाजः प्रतिव्योढुमलं ब्रजस्त्रियो विस्त्रस्तमालाभरणाः कुरुद्वह ॥ ३३ । १८ ।). राजा की तरफ एक टुक टप्टि लगाकर हाथ में ली हुई गोतियों की कई लट्टें या कई लड़वाली कंठी नजर करता हुआ ईरानी एल्ची सन्मुख खड़ा है, जिससे राजा कुछ कह रहा है. उसके पीछे एक दूसरा ईरानी हाथ में बोतल सी कुछ चीज लिये खड़ा है, जिस के पीछे तीसरा ईरानी लुहरे की चीजों से भरी हुई किशूती धरे हुए है. उसके पीछे पीठ फेर कर खड़ा हुआ चौथा ईरानी बाहिर से हाथ में कुछ चीज लेकर दरवाजे में आते हुए एक दूसरे ईरानी की तरफ देख रहा है, और उस के पारा एक ईरानी सिपाही कमर में तलवार लगाये खड़ा है, और दरवाजे के बाहर ईरानियों के साथ के अन्य पुरुष और घोड़े खड़े हैं. ईरानियों और हिन्दुस्तानियों की पोशाक में रात दिन का सा अंतर है. जब कि हिन्दुस्तानियों का करीब करीब सारा शरीर खुला है, तो उनका करीब २ सारा ढका हुआ है. उनके सिर पर ऊंची ईरानी टोपी, कमरतक अंगरखा, नुस्त पायजामा, और कितने एक के पैरों में मोजे भी हैं, और डाढ़ी मूँछ सब के हैं. ईरानी एल्ची (जिससे राजा कुछ कह रहा है) के गले में बड़े २ गोतियों की एक लड़ी पानदार कंठी, कानों में लटकते हुए गोतियों के भूषण, और कमर में मो-

पुलकेशी के राज्य समग्र ई० स० ६३६ (वि० सं० ६६६) के आस पास चीनी यात्री हुएन्त्संग यात्रा करता हुआ महाराष्ट्र देश में पहुंचा था, जिसने अपने यात्रा के पुस्तक में उक्त देश का वृत्तान्त नीचे अनुसार लिखा है:—

“ महाराष्ट्र (मो-हो-ल-च)— इस देश की परिधि करीब ५००० ली (१ ली = करीब $\frac{1}{2}$ मील) है, जिसकी राजधानी * की पश्चिम तरफ एक बड़ी नदी है. राजधानी की परिधि ३० ली है. यहां की ज़मीन उत्तम और उपजाऊ है, जिसमें खेती बराबर होती रहती है, और पैदावारी खूब होती है. यहां की आवहवा उष्ण है. लोग सादे, प्रामाणिक, शरीर के ऊंचे, स्वभाव के कठोर बदला लेनेवाले, उपकार करनेवालों का अहसान माननेवाले और शत्रु के लिये निर्दयी हैं. वे अपना अपमान करनेवाले से बदला लेने में अपनी जान तक भोंक देते हैं. परन्तु यदि तर्कलीफ़ के समय उनसे कोई मदद मांगे, तो उसको मदद देने की त्वरा में वे अपने शरीर की कुछ पर्वा नहीं करते. यदि वे बदला लेना चाहें तो शत्रु को पहिले से सावधान कर देते हैं, फिर दोनों शस्त्र धारण कर एक दूसरे पर भाले से हमला करते हैं. जब एक भाग जाता है तो दूसरा उसका पीछा करता है, परन्तु

तियों से जड़ी हुई कमरपेटी है. दूसरे किसी ईरानी के शरीर पर ज़ेवर नहीं है. दरबार में सब जगह फर्श पर पुष्प बिखरे हुए हैं, राजा के सिंहारान के आगे पीकदानी पड़ी हुई है, और चौकियों पर ढकनवाले पानदान आदि पात्र रखे हुए हैं”— (दी पैटिंग्ज ऑफ़ अजंटा— जॉन ग्रिफ़िथ साहिब की बनाई, पेन्टिंगें ५).

* हुएन्त्संग ने महाराष्ट्र की राजधानी का नाम नहीं दिया किन्तु वह सोलंकियों की राजधानी बादामी से कोई भिन्न नगर होना चाहिये, क्योंकि हुएन्त्संग का वर्णन उक्त शहर के लिये वास्तविक नहीं हो सकता. कोई उस को नाशिक, कोई कल्याण और कोई पैठण अनुमान करते हैं.

शरण में आजाने पर मारते नहीं. यदि कोई सेनापति युद्ध में हार जावे तो उसको दंड नहीं देते, किन्तु उसको स्त्री की पोशाक भेद करते हैं, जिसपर उसको स्वयं मरना पड़ता है. देश (राज्य) की ओर से कई सौ बीर योद्धे नियत हैं, जो युद्ध के लिये सज्ज होते हैं उस समय प्रथम नशा कर मत्त हो जाते हैं; फिर उन में से एक एक पुरुष हाथ में भाला लेकर ललकारता हुआ १०००० आदमियों का सामना करता है. यदि उनमें से कोई योद्धा मार्ग में चलता हुआ किसी आदमी को मार डाले तो उसको सजा नहीं होती. जब वे बाहिर (लड़ने को) जाते हैं, तब अपने आगे ढोल बजाते जाते हैं. सैंकड़ों हाथियों को नशे से मत-वाले कर उनको भी लड़ने के लिये ले जाते हैं. वे लोग पहिले नशा कर लेते हैं, फिर एक साथ आगे बढ़कर हर एक चीज को बर्बाद कर देते हैं, जिससे कोई शत्रु उनके आगे नहीं ठहर सकता”.

“इन योद्धाओं और हाथियों के कारण यहां का राजा अपने पड़ोसियों की ओर तिरस्कार की दृष्टि से देखता है. राजा जाति का क्षत्रिय है, और उसका नाम पुलकेशी (पु- लो-कि-शे) है. उसके विचार और कार्य विस्तृत हैं. उसके उपकार के कामों का लाभ दूर दूर तक पहुंचता है, और उसकी प्रजा पूर्ण विनय के साथ उसकी आज्ञा का पालन करती है. इस समय शिलादित्य (कन्नौज का राजा श्रीहर्ष-हर्षवर्द्धन) महाराज ने पूर्व से पश्चिम तक के देश विजय कर लिये हैं, और दूर दूर के देशों पर चढ़ाइयां की हैं, परन्तु केवल इस देश (महाराष्ट्र) वाले ही उसके आधीन नहीं हुए. यहां वालों को दण्ड देने, और आधीन करने के लिये उसने अपने राज्य के पांचों विभागों का सैन्य एकत्र किया, सब राज्यों के बहादुर सेनापतियों को बुलाया, और वह स्वयं लश्कर की हरावल में रहा, तो भी यहां के सैन्य को जीत न सका”.

“यह उनके स्वभाव का हाल है. यहां के लोग विद्यानुरागी हैं, और वेद धर्म तथा बौद्ध धर्म दोनों के ग्रन्थ पढ़ते हैं. इस देश में अनुमान १०० संघाराम * हैं, जिन में ५००० साधु (भ्रमण भिक्षुक) रहते हैं, जो महायान और हीनयान दोनों मार्ग (बौद्धों के दो मुख्य भेद) को माननेवाले हैं. यहां पर अनुमान १०० देव मन्दिर हैं, जिनमें बहुत से भिन्न भिन्न मतावलंबी नास्तिक (बौद्ध धर्म को न माननेवाले अर्थात् वेद-धर्मानुयायी) रहते हैं.”

“राजधानी के भीतर और बाहिर के मिला कर (यहां पर) पांच स्तूप[†] हैं, जो ४ अतीत (गत) बुद्धों के फिरने और बैठने के स्थानों के सूचक हैं और राजा अशोक ‡ के बनाये हुए हैं. इनके अतिरिक्त ईंट और पत्थर के बने हुए स्तूप इतने अधिक हैं, कि जिनका गिनना कठिन है. राजधानी से थोड़ी दूर एक संघाराम है, जिसमें अवलोकितेश्वर बोधिसत्व + की पाषाण की

* संघाराम = बौद्धों का मठ, जहां पर बहुधा भ्रमण (साधु) लोग और कभी कभी यात्री ठहरा करते थे.

† स्तूप = बौद्धों में पवित्र धर्मस्थान माना जाता है, जिसकी आकृति गुम्बजसी होती है. प्राचीन काल में बौद्धधर्मावलंबी बुद्धदेव अथवा किसी प्रसिद्ध धर्मोपदेशक की हड्डी, दांत आदि अंगावयव अथवा भस्म पर, वा किसी स्थान की पवित्रता की यादगार में स्तूप बनवाते थे, और पवित्र मूर्तियों के समान उनका पूजन करते थे. प्राचीन काल में जैन लोग भी स्तूप बनाते थे.

‡ अशोक = मौर्य (मौर) वंश के राजा चन्द्रगुप्त का पौत्र था. यह राजा बड़ा ही प्रतापी हुआ, जिसने बौद्ध धर्म की बड़ी भारी उन्नति की थी.

+ बोधिसत्व = उस जीव (मनुष्य, पशु, पक्षी या देवता) को कहते हैं, जो भविष्य में बुद्ध (पूर्णज्ञानी) होने वाला हो. शाक्यमुनि ने शुद्धोदन राजा के यहां जन्म लिया उस समय वे भी बोधिसत्व थे, और ३४ वर्ष तक बोधिसत्व रहने बाद बुद्ध (पूर्णज्ञानी) हुए थे. बौद्धों में अवलोकितेश्वर बोधिसत्व पृथ्वी

मूर्ति है. उस मूर्ति का चमत्कार दूर दूर तक प्रसिद्ध है, क्योंकि उसकी गुप्त प्रार्थना करनेवालों में से बहुतों की कामना पूर्ण हुई है."

"इस देश की पूर्वी सीमा पर ऊँचे ऊँचे शिखरोंवाला एक बड़ा पहाड़ है, जिसकी चटान पर चटानवाली श्रेणी बराबर चली गई है. इस पर्वत के नीचे के अधेरे हिस्से में एक संघाराम * बना है, जिसके ऊँचे मण्डप और उनके बाजू के गहरे स्थान चटानों को खोद खोद कर उनके भीतर बनाये गये हैं. यह संघाराम अर्हत् १^१ अचल धं (ओ-चे-लो) ने बनवाया था, जो पश्चिमी हिन्दुस्तान का निवासी था. यहाँ से करीब १००० ली पश्चिम में चलकर नर्मदा नदी उतरने पर भरुकच्छप (भड़ौच) के राज्य में पहुँचते हैं +".

और मनुष्यों का पालन करनेवाला माना जाता है, और बड़ा शक्तिमान होने के कारण उनके यहाँ उसका वह दर्जा है, जो हमारे यहाँ इन्द्र वा शिव का माना जाता है. बौद्धों में बोधिसत्वों की मूर्तियाँ बनाकर देवताओं की नाई उनका पूजन करने का प्रचार पीछे से हुआ है, जो बुद्ध की आज्ञा के विरुद्ध माना जाता है.

* यह अजगटा की प्रसिद्ध बौद्ध गुफाओं का वर्णन है, जो इंध्याद्रि पर्वत को खोद खोद कर उसके भीतर बनाई गई हैं.

१^१ अर्हत् = सब से ऊँचे दर्जे का बौद्ध साधु (श्रमण), जिसको भूत और भविष्यत् का ज्ञान प्राप्त हुआ हो.

धं अजगटा की २४ नम्बर की गुफा के लेख में भी रथविर (अर्हत्) अचल को बुद्ध का शैलगृह (पर्वतीय संघाराम) बनानेवाला लिखा है, जैसे कि हुफुत्संग लिखता है (रथविराचलेन मुनिना शासनमुद्रावयत् कृतज्ञेन। कृतकृत्येनापि सता शैलगृहं कारितं शास्तु: ॥ आर्किआलोजिअल् सर्वे ऑफ़ वेस्टर्न इंडिया, जि० ४, पृ० १३४).

+ बुद्धिस्ट रेकर्ड ऑफ़ दि वेस्टर्न वर्ल्ड-सिमुकि, जि० २, पृ० २५५-५६.

ई० स० ६३६ (वि० सं० ६६६) के करीब चीनी यात्री हुएन्त्संग महाराष्ट्र में पहुँचा उस समय तक तो पुलकेशी के राज्य की दिनोदिन उन्नति होती रही, परन्तु उस (पुलकेशी) के अन्तिम समय में उसके राज्य पर विपत्ति आन पड़ी हो ऐसा पाया जाता है, क्योंकि कूरम * गांव से मिले हुए पल्लववंशी राजा परमेश्वरवर्मा के समय के एक ताम्रपत्र में उसके दादा नरसिंहवर्मा के वृत्तान्त में लिखा है, कि “उसने कई बार चोल, केरल, कलभ्र, और पाण्ड्य देशवालों को जीता; परियल, मणि-मंगल, शूरमार आदि स्थानों की लड़ाइयों में पुलकेशी की पीठ पर विजय शब्द लिखा (अर्थात् उसको हराया), और वातापी को जीता” †. यह वृत्तान्त पुलकेशी के शत्रुओं का लिखा हुआ है, तो भी उसकी सत्यता में कोई शंका नहीं है, क्योंकि पल्लववंशी राजा नंदिवर्मा के ताम्रपत्र में भी नरसिंहवर्मा को वातापी जीतनेवाला लिखा है ‡. तिरुक्कलुकुण्णरं (पत्नीतीर्थ §) स्थान के लेख में भी नरसिंहवर्मा का खिताब ‘वातापीकोण्ड’ + लिखा है, जिसका अर्थ ‘वातापी को जीतनेवाला’ है. लंका के इतिहास ‘महावंस’ (महावंश) से भी पाया जाता है,

* कूरम गांव=कांचीपुर (कांजीवरम्) के निकट है.

† नरसिंहवर्मणः स्वयमिव भगवतो नृपतिरूपावतीर्णस्य नरसिंहस्य मुहु-
रवजितचोलकेरलकलभ्रपाण्ड्यस्य...परियलमणिमंगलशूरमारप्रभृतिरणविदर्शितपु-
लकेशिपृष्ठपट्टलिखितविजयाक्षरस्य कलशयोनेरिव मथितवातापेः पौत्रो....(सा०
इ० इ० जि० १, पृ. १४८).

‡ लंकाजयाधरितरामपराक्रमश्रीरुद्रतशत्रुकुलसंहारधूमकेतुः । वातापिनिर्ज-
यविडम्बितकुम्भजन्मा वीरस्ततोजनि जयी नरसिंहवर्मा—(कशाकूडी से मिला हु-
आ दानपत्र—सा० इ० इ० जि० २, भा० ३, पृ. ३४६).

§ मद्रास इहाले के चिंमलेपट जिले में.

+ ए० इ० जि० ३, पृ. २७७.

कि वल्लभ (पुलकेशी) और नरसिंहवर्मा के बीच कोई लड़ाई हुई थी, जिसमें लंका का राजकुमार मानवर्मा नरसिंहवर्मा के पक्ष में रह कर लड़ा था *; चातापी (बादामी) के

* "मानवर्मा कश्यप (कश्यप) का पुत्र था, और मलय के राजा की पुत्री संघा से उसका विवाह हुआ था. विवाह होने बाद वह अपनी स्त्री सहित उत्तरी प्रदेश में गुप्त रहता था, परन्तु जब यह वृत्तान्त राजा हर्षदाठ को मालूम हुआ तब वह अपनी स्त्री सहित हिन्दुस्तान में जाकर राजा नरसिंह (नरसिंहवर्मा) की सेवा में रहा, जिसने बड़े सम्मान के साथ उसको रक्खा, और लंका का राज्य उसको दिलाने का संकल्प किया. मानवर्मा नरसिंह के यहां रहता था, उन दिनों राजा वल्लभ (पुलकेशी दूसरा) उस पर चढ़ आया. नरसिंह मानवर्मा को अपनी राजधानी में छोड़ कर लड़ने को गया, परन्तु वह अपनी कृतज्ञता का परिचय दिलाने की इच्छा से तुरंत ही रणक्षेत्र में जा शामिल हुआ, जिससे नरसिंह उसपर बहुत प्रसन्न हुआ. दोनोंने मिलकर वल्लभ के सैन्य का संहार किया. इस लड़ाई में मानवर्मा ने बड़ी वीरता दिखलाई, जिसपर नरसिंह ने प्रसन्न होकर अपनी राजधानी में पहुंचने बाद अपना सैन्य देकर उसे लंका पर भेजा, परन्तु उस सैन्य के कम होने के कारण अधिक सैन्य और राहायता के लिये वह फिर नरसिंह के पास गया, तो उसने अपना बहुतसा सैन्य, और राज्यचिन्ह आदि देकर उसे पीछा भेजा. उस सैन्य से हारकर भागता हुआ हर्षदाठ मारा गया, और लंकाद्वीप पर मानवर्मा का अधिकार होगया"—(महावंश अध्याय ४७ वां). विजयसिंह मुडलियर ने महावंश के अंग्रेजी भाषान्तर के साथ लंका के राजाओं की नामावली और उन के राज्य समय का नक्शा दिया है, उस में मानवर्मा का ई० स० ६६१ से ७२६ (वि० सं० ७४८ से ७८३) तक राज्य करना लिखा है, परन्तु प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डाक्टर हुल्श साहिब ने लंका के राजाओं के उक्त संवत्तों में ५० वर्ष का फर्क होना प्रकट किया है (एन्थुअलरिपोर्ट, आर्किआलॉजिकल् सर्वे, मद्रास—सन् १८६१—६२, पृ० ५ का नोट). यदि उनका निर्णय ठीक हो तो मानवर्मा के राज्यपाने का समय ई० स० (६६१—५०८) ६४१ (वि० सं० ६६८) के आस पास स्थिर होगा.

पास के एक चटान पर किसी पल्लव राजा के समय का एक लेख* खुदा हुआ है, जिसका अधिक हिस्सा बिगड़ जाने पर भी उस में 'दुश्मनों की वातापी', 'राजाओं के अग्रणी पल्लव' 'सिंह-विष्णु' आदि आशय सूचक शब्द स्पष्ट पढ़े जाते हैं, जो नर-सिंहवर्मा का बादामी विजय करना प्रकट करते हैं, और पुल-केशी के पुत्रों के ताम्रपत्रों से भी ऐसाही पाया जाता है.

अकेला नरसिंहवर्मा ही पुलकेशी का विरोधी नहीं था, किन्तु चोल, पाण्ड्य, और केरल के राजा भी उसके सहायक हुए हों, ऐसा पिछले ताम्रपत्रों से पाया जाता है. उक्त घटना का ठीक समय मालूम नहीं हो सका, परन्तु चीनी यात्री हुएन्त्संग महाराष्ट्र में आया उस के बाद किसी समय उसका होना पा-या जाता है. पुलकेशी अपने देहान्त समय राज्य को विपत्ति ग्र-स्त ही छोड़ गया था.

पुलकेशी के भाई पुलकेशी का दूसरा भाई विष्णुवर्द्धन था, जिसको 'कुब्ज विष्णुवर्द्धन' † भी कहते थे. कई घोर संग्रामों में विजय पाने के कारण उसको 'विषमसिद्धि' ‡ लिताव मि-ला था. उसका एक ताम्रपत्र × सितारा से भिजा है, जो पुलके-शी के राज्य के आठवें वर्ष का है, और उसमें अलंदतीर्थ (अ-लंदा गांव) दान करना लिखा है. उसमें वह अपने तई पुलके-शी का प्रिय छोटा भाई और युवराज लिखता है. अलंदा गांव

* इ० ऐ० जि० ६, पृ० १०० के पास की पेट. उक्त लेख की लिपि दक्षिण के सोलंकियों के लेखों की लिपि से भिन्न, और पल्लवों के लेखों की लिपि से ठीक मिलती हुई है.

† 'कुब्ज' का अर्थ 'कुबड़ा' है, इससे अनुमान होता है, कि शायद कुबड़ा होने से ही उसको 'कुब्जविष्णुवर्द्धन' लिखा हो.

‡ कठिन काम को सिद्ध करनेवाला.

× इ० ऐ० जि० १६, पृ० ३०६-१०.

सितारा से ३० मील उत्तर में होने से अनुमान होता है, कि सितारा के आस पास का प्रदेश प्रथम उसको जागीर में मिला हो, अथवा उक्त प्रदेश का वह शासक (हाकिम) नियत किया गया हो, परन्तु पीछे से उसको पुलकेशी के विस्तीर्ण राज्य का पूर्वी हिस्सा अर्थात् बेंगी देश * मिला †, जहाँ पर उसके वंशजों ने ६०० वर्ष से अधिक समय तक राज्य किया. इस प्रकार महान् सोलंकी राज्य के दो विभाग हो गये, जिनमें से पश्चिमी अर्थात् बादामी का राज्य तो (जो उक्त राज्य का बहुत बड़ा हिस्सा था) पुलकेशी तथा उसके वंशजों के आधीन रहा, और पूर्वी अर्थात् बेंगी का राज्य कुब्जविष्णुवर्द्धन और उसके वंशजों के आधीन रहा. इसी से हमने बादामी के सोलंकियों का पश्चिमी और बेंगीवालों का पूर्वी सोलंकी नाम से परिचय दिया है. पश्चिमी सोलंकियों का इतिहास समाप्त होने बाद कुब्जविष्णुवर्द्धन के वंशजों (पूर्वी सोलंकियों) का इतिहास लिखेंगे.

* बेंगीदेश=दक्षिणी कृष्णा और गोदावरी के बीच का पूर्वी समुद्रतट पर का प्रदेश.

† किसी लेख अथवा ताम्रपत्र में यह स्पष्ट नहीं लिखा, कि पुलकेशी ने अपनी खुशी से बेंगीदेश कुब्जविष्णुवर्द्धन को दिया, अथवा वहाँ पर उसे शासन करने को भेजा, जिससे वह उस मुल्क को दबाकर वहाँ का राजा बन बैठा, परन्तु वह बेंगीदेश पर राज्य करता था उस समय भी अपने तर्ह पुलकेशी का प्रिय छोटा भाई लिखता रहा था, जिससे अनुमान होता है, कि पुलकेशी ने ही पिट्टापुरम् आदि के विजय के बाद उधर का प्रदेश (बेंगीदेश) अधिक प्रीति के कारण उस को दे दिया हो. यदि इसके विपरीत हुआ होता तो दोनों भाइयों के बीच प्रीति का बर्ताव रहना संभव न था, और ऐसी दशा में पुलकेशी उक्त देश पर हमला करके उसे पीछा अपने राज्य में मिलाने की चेष्टा अवश्य करता, परन्तु ऐसा होना पाया नहीं जाता, जिससे भी ऊपर का अनुमान दृढ़ होता है.

पुलकेशी का तीसरा भाई जयसिंहवर्मा था, जिसका विरुद्ध 'धराश्रय' मिलता है. उसके पुत्र नागवर्द्धन के समय का एक ताम्रपत्र बम्बई इहाते के नाशिक जिले के निरपाण गांव से मिला है, जिस में * उस (नागवर्द्धन) का विरुद्ध 'त्रिभुवनाश्रय' मिलता है. उसने 'बेलग्राम' कपालेश्वर के अर्पण किया, जो इस समय 'बेलगांव तरालहा' नाम से प्रसिद्ध है और नाशिक जिले में है. इससे पाया जाता है, कि जयसिंहवर्मा को नाशिक जिले में जागीर मिली हो.

उसका चौथा भाई बुद्धवरसराज था, जिसका एक ताम्रपत्र † उमर ‡ गांव से मिला है, जिससे पाया जाता है. कि उसने पिनुक में रहते समय अपने भतीजे विक्रमादित्य के राज्य समय सगल दीक्षित को आम्रचाटिका (आम का बाग) और क्षेत्र दान किये थे. पिनुक बम्बई इहाते के कोलाबा जिले का पेन गांव होना चाहिये. इससे अनुमान होता है, कि उसको उक्त जिले में जागीर मिली हो.

पुलकेशी के चार पुत्र चन्द्रादित्य, आदित्यवर्मा, विक्रमादित्य और जयसिंह होना ताम्रपत्रादि से पाया जाता है. उनमें से तीसरा पुत्र विक्रमादित्य उसका उत्तराधिकारी हुआ. दूसरे तीन पुत्रों की जागीर आदि का हाल विक्रमादित्य के इतिहास के साथ लिखा जायेगा.

पुलकेशी (दूसरे) के समय के दो शिलालेख + और पांच

* इ० एं० जि० ६, पृ० १२४.

† बंब० ए० सो० जि० २०, पृ० ४३-४४.

‡ उमर गांव=बंबई इहाते के थाणा जिले के दाहानु विभाग में.

+ ए० इ० जि० ६, पृ० ४-७ (एहोले का लेख); ए० इ० जि० ५, पृ० ७ (येकेशी के चटान पर का लेख).

ताम्रपत्र * मिले हैं, जिनमें से हैदराबाद का ताम्रपत्र श० सं० ५३४ (वि० सं० ६६६=ई०स० ६१२) का उसके राज्य के तीसरे वर्ष का है. एहोले का शिलालेख ७० भारतयुद्धसंवत् ३७३५ और शक सं० ५५६ (वि० सं० ६६१=ई० स० ६३४) का है, जो दक्षिण के सोलंकियों के इतिहास के लिये बड़ा ही उपयोगी है. इन दो के सिवाय किसी में संवत् नहीं है. चिप्लून का ताम्रपत्र उसके मामा सेंद्रकथंशी श्रीवल्लभ सेनानंद का दान प्रकट करता है, जो उसका सामंत था. बाक़ी के ताम्रपत्रों में से दो जाली हैं.

* इ० ऐं० जि० ६, पृ० ७३-७४ (हैदराबाद का); इ० ऐं० जि० ८, पृ० ४३-४४ (नेरूर का); ए० इ० जि० ३, पृ० ५१-५२ (चिप्लून का); इ० ऐं० जि० १४, पृ० ३३०-३१ (कांडल गांव का-जाली); और इ० ऐं० जि० ८, पृ० ६६-६७ (होमूर का-जाली).

७० एहोले के शिलालेख का रचयिता जैन कवि रविकीर्ति अपनी कविता की कीर्ति कालिदास और भारवि के समान होना प्रकट करता है (थेनायोजि नवेशम-स्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेशम । स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदास-भारविकीर्तिः), जिससे यह भी निर्णय होता है, कि श० सं० ५५६ (वि० सं० ६६१=ई० स० ६३४) के पूर्व किसी समय महाकवि कालिदास और भारवि हुए, और उस समय उनकी कविता की प्रसिद्धि दक्षिण तक भली भांति फैल चुकी थी. रविकीर्ति की कविता से पाया जाता है, कि वह कालिदास के ग्रन्थों का अभ्यासी था इतना ही नहीं, किन्तु उसने अपनी कविता में कालिदास का बहुत कुछ अनुकरण किया है.

प्रकरण चौथा.



विक्रमादित्य.

विक्रमादित्य के बिरुद 'सत्याश्रय', 'वल्लभ', 'श्रीवल्लभ', 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'महार्क', 'राजमल्ल', और 'रणरसिक' मिलते हैं. ताम्रपत्रों में उसको पुलकेशी (दूसरे) का प्रियपुत्र और चन्द्रादित्य का छोटा भाई लिखा है. अपने बड़े भाई के विद्यमान होने पर भी उसको राज्य मिलने का कारण शायद ऐसा हो, कि उसके पिता के अंतिम समय शत्रुओं ने उसपर हमला कर उसकी राजधानी वातापी (बादामी) जीत ली थी, उस समय अपने बड़े भाइयों से अधिक पराक्रम बतलाने, वा उसकी माता पर पुलकेशी का अधिक प्रेम होने, वा ऐसे ही किसी अन्य कारण से वह उस (पुलकेशी) का अधिक प्रीतिपात्र * हो गया हो, और उसी से उसने अपने पीछे उसको राज्य मिलने का प्रबन्ध करदिया हो, अथवा उसके पीछे अपने ही बाहुबल से शत्रुओं का उपद्रव मिटाकर वह अपने पिता के राज्य सिंहासन पर बैठ गया हो, और उसका बड़ा भाई उससे दब गया हो.

* प्राचीन समय से हिन्दु राजाओं में यही प्रथा चली आती है, कि ज्येष्ठ पुत्र ही अपने पिता का उत्तराधिकारी होता है, परन्तु प्राचीन शिलालेखादि में ऐसे भी उदाहरण मिल आते हैं, कि कभी कभी छोटा पुत्र भी पिता का प्रीतिपात्र होने से राज्य का मालिक हो जाता था. रजवाड़ों के इतिहास से भी ऐसे कई प्रमाण मिल सकते हैं.

कर्नूल * से मिले हुए ताम्रपत्र में उसके विषयमें यह लिखा है, कि "उसने चित्रकंठ नाम के उत्तम अश्वपर सवार होकर तलवार के बल से अपने पिता की राज्यलक्ष्मी, जिसे तीन राजाओं ने मिलकर नष्ट की थी, फिर प्राप्त की, और सारा राज्य अपने आधीन करने पर देवता और ब्राह्मणों को दिये हुए दान (गांव आदि), जो उक्त तीन राजाओं ने हर लिये थे, (फिर से) बहाल कर दिये, और स्थान स्थान पर शत्रुराजाओं का पराजय किया †, (जिसमें उसके कई घाव लगे थे).

पुलकेशी की राज्यलक्ष्मी को नष्ट करनेवाले तीन राजा कौन थे यह उक्त ताम्रपत्र में स्पष्ट रूप से नहीं लिखा, परन्तु विक्रमादित्य के पुत्र विनयादित्य के समय के ताम्रपत्र में उनको चोल, पाण्ड्य और केरल के राजा बतलाये हैं ‡. ऊपर लिख आये हैं, कि पुलकेशी (दूसरे) ने उक्त तीनों राज्यों के राजाओं से मैत्री करली थी, परन्तु पल्लवों के ताम्रपत्रादि से

* कर्नूल=मद्रास इलाके के कर्नूल जिले में. वहां से विक्रमादित्य के समय के तीन ताम्रपत्र मिले हैं, परन्तु एक में भी संवत् नहीं है.

† सत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभगहाराजपरमेश्वरस्य प्रियतमयः चित्रकण्ठाख्यः प्रवरतुरङ्गमेणैकेनैव प्रतीतानेकसमरमुखेषु रिपुनृपतिरुधिरजलाखादनरसनायमानज्वलदमलनिशितनिर्लिशधारया धृतधरणिधर ... भुजगभोगसदृशनिजभुजविजितविजिगीषुः आत्मकवचावमग्नानेकप्रहारस्त्वगुरोश्श्रयमवनिपतित्रितयान्तरितामात्मसात्कृत्वा, कृतैकाधिष्ठिताशेषराज्यभरस्तस्मिन् राजत्रयविनष्टानि देवस्वब्रह्मदेयानि...स्वमुखेन स्थापितवान् ॥ रणाशिरशि रिपुनरेन्द्रान् दिशि दिशि जित्वा स्ववंशजां लक्ष्मीं प्राप्य च परमेश्वरतामनिवारितविक्रमादित्यो विक्रमादित्यसत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभगहाराजधिराजपरमेश्वरः... (बंब० ए० सो० ज० जि० १६, पृ० २३६-३७).

‡ पल्लवपतिपराजयानंतरपरिगृहीतकांचीपुरस्थ प्रभावकुलिशदलितचोलपाण्ड्यकेरलधरणीधरत्रयमानमानशृंगस्य- (इ० ०० जि० १६, पृ० १५०)

पाया जाता है, कि पीछे से उन्होंने (पल्लवों) ने उन तीनों राज्यों को अपने आधीन कर लिया था, अतएव वे राजा या तो पल्लवों का सहायक होकर सोलंकियों के राज्यपर चढ़े हों, या पुलकेशी और पल्लवों के बीच की लड़ाई के समय उस का मुल्क छीनने को आये हों.

हैदराबाद के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'उस (विक्रमादित्य) ने नरसिंह का यश मिटाया, महेन्द्र का प्रताप नष्ट किया, और नीति से ईश्वर (ईश्वरपोतवर्मा) को जीत कर पल्लवों को कुचल डाला, और ईश्वरपोतराज से दुर्लब्ध तथा चौड़ी खाई से घिरी हुई कांचीपुरी छीन ली *'. उक्त ताम्रपत्र में लिखा हुआ नरसिंह † पुलकेशी से लड़नेवाला पल्लववंशी राजा नरसिंहवर्मा ; महेन्द्र उसका पुत्र, जो महेन्द्रवर्मा (दूसरा) नाम से प्रसिद्ध था; और ईश्वर या ईश्वरपोतराज महेन्द्रवर्मा का पुत्र ईश्वरपोतवर्मा होना चाहिये, जिसको परमेश्वर वर्मा भी कहते थे. इस प्रकार लगातार पल्लवों से लड़ते रहने बाद वह (विक्रमादित्य) ईश्वरपोतवर्मा के समय कांचीपुरी विजय करने में समर्थ हुआ था. पल्लवों के साथ की लड़ा-

* मृदितनरसिंहयशसा विहितमहेन्द्रप्रतापविलयेन नयविजितेश्वरेण प्रभुणा श्रीवल्लभेन जितः कृतपल्लवमर्दो दक्षिणदिग्गुवातिमत्तकाञ्चिकायां भृशमभिरमन्नपि सुतरां श्रीवल्लभत्वमिदं वहति....॥दुर्लब्धदुष्करविभेदविशालसाला दुर्गाधदुस्तरबृहत्परिखापरीता । अग्राहि येन जयतेश्वरपोतराजकाञ्चीव दक्षिणदिशाक्षितिपेन काञ्ची ... (ई० ऐं० जि० ६, पृ० ७७—यह ताम्रपत्र विक्रमादित्य का ही है).

† विक्रमादित्य का नरसिंहवर्मा और उसके पुत्र तथा पौत्र से लड़ना लिखा है, जिससे अनुमान होता है, कि नरसिंहवर्मा के साथ की लड़ाई उसके कुंवर पदे के समय से संबंध रखती हो, यदि अपने राज्य समय वह तीनों से लड़ा हो तो उस का राज्य बहुत ही अधिक समय तक रहना चाहिये, परन्तु ऐसा पाया नहीं जाता.

इयों में विक्रमादित्य को कहीं कहीं हार कर भागना भी पड़ा था, जिसका उल्लेख सोलंकियों ने अपने ताम्रपत्रों में नहीं किया, तो भी उपरोक्त कूरम गांव से मिले हुए पल्लवों के ताम्रपत्र में लिखा मिलता है, कि 'परमेश्वरवर्मा * (ईश्वरपोतवर्मा) ने कई लाख सेना के स्वामी विक्रमादित्य को रणखेत से भगाया था,' और उदयेन्दिरम् † से मिले हुए ताम्रपत्र में पेरुवलनल्लूर के पास की लड़ाई में विक्रमादित्य का परमेश्वरवर्मा (ईश्वरपोतवर्मा) से पराजय होना लिखा है ‡. उस (विक्रमादित्य) के समय की लड़ाइयों में उसका पुत्र विनयादित्य और पौत्र विजयादित्य भी शामिल थे.

विक्रमादित्य बड़ा प्रतापी और रणविजयी हुआ, जिससे उसको 'रणरसिक' कहते थे. उसने अपने पिता का विस्तीर्ण राज्य पीछा अपने आधीन किया इतना ही नहीं, किन्तु चोल, पाण्ड्य और केरल के राजाओं को, तथा कांची के अनमी राजा को जीतकर वह तीन समुद्रों के बीच के सारे दक्षिणी हिंदुस्तान का स्वामी बना था.

उसके राज्य पाने का समय + ठीक २ मालूम नहीं हुआ,

* परमेश्वर वर्मा.....योनेकलक्षसाधनमायोधनशिरसि विक्रमादित्यं कर्प-
टगात्रपरिच्छदभेकाफी पलायितमकृत"" (सा० इ० इ० जि० १, पृ० १४८—४९).

† उदयेन्दिरम्—मद्रास इलाते के उत्तरी आर्कट जिले के गुडियातम् तालुके में है.

‡ पेरुवलनल्लूर्युद्धे विजितवल्लभवलः परमेश्वरवर्मा..... (सा० इ० इ० जि० २, पृ० ३६६).

+ विक्रमादित्यके राज्याभिषेकका समय निर्णय करने के लिये अबतक ठीक २ साधन उपलब्ध नहीं हुए, तथापि उसका कुछ अनुमान चंद्रादित्य की राणी विजयभट्टारिका के ताम्रपत्र से हो सकता है, जो विक्रमादित्य के समय का है. उस

परन्तु उसका देहान्त श० सं० ६०२ (वि० सं० ७३७=ई० स० ६८०)

में यह लिखा है, कि 'विक्रमादित्य ने शत्रुराजाओं को मारकर सर्वत्र विजय किया, और अपने वंश की लक्ष्मी तथा राज्य पाया (राजा रिपुनरेन्द्रान् हत्वा दिशि दिशि जित्वा स्ववंशजानाम् लक्ष्मीं प्राप्य प्राप्य च परमेश्वरतामनियारितविक्रमादित्यः... ई० सं० जि० ७, पृ० १६४), जिससे इतना तो स्पष्ट है, कि वह ताम्रपत्र उक्त विजय के पीछे का है. उसमें संवत् नहीं दिया, परन्तु उसमें स्वराज्यवर्ष पांचवां आश्विन शुक्ल २ विपुवसंक्रमण (तुल संक्रांति) का दिन लिखा है (स्वराज्यपंचमसंवत्सर आश्वयुजपौर्णमासस्य द्वितीयायां विपुवे). विक्रमादित्य के राज्यसमय के निकट तीन बार अर्थात् चैत्रादि वि० सं० ६१७, ७१६, और ७३५ (ई० स० ६४०, ६५६, और ६७८) में आश्विन शु० २ को विपुवसंक्रमण हुआ था (बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ३६५). वि० सं० ६१७ (ई० स० ६४०) में पुलकेशी दूसरा विद्यमान होना चाहिये, और वि० सं० ७३५ (ई० स० ६७८) से दो वर्ष बाद विनयादित्य ने राज्य पाया था, अतएव उक्त ताम्रपत्र में लिखा हुआ विपुवसंक्रमण वि० सं० ७१६ (ई० स० ६५६) का होना संभव है, और उपरोक्त विजय उक्त संवत् से पूर्व होना चाहिये. उक्त ताम्रपत्र में जो 'स्वराज्यसंवत्सर' अर्थात् अपने राज्य का पांचवां वर्ष लिखा है, वह उस राणी के पति चंद्रादित्य का राज्यवर्ष होना चाहिये, अर्थात् उस समय चंद्रादित्य को राज्य या अलग जागीर मिले पांचवां वर्ष था. इस हिसाब से उसको वि० सं० ७१२ (ई० स० ६५५) के आस पास जागीर मिलना चाहिये. पुलकेशी ने अपने अन्तिम समय अपने छोटे पुत्र विक्रमादित्य को राज्य देना निश्चय कर ज्येष्ठपुत्र चंद्रादित्य को अलग जागीर दे दी हो, अथवा उस के मरने बाद विक्रमादित्य ने राज्य पाने पर उसको जागीर दी हो यह संभव है, अतएव विक्रमादित्य के राज्य का प्रारम्भ वि० सं० ७१२ (ई० स० ६५५) के आस पास होना अनुमान किया जा सकता है. उक्त समय के आस पास अथवा कुछ समय पहिले पुलकेशी दूसरे का देहान्त होना चाहिये."

में * होना निश्चित है. उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र विनयादित्य हुआ.

विक्रमादित्य के भाई

विक्रमादित्य का बड़ा भाई चंद्रादित्य था, जिसको अपने पिता का राज्य नहीं मिला. उसकी राणी विजयमहादेवी (विजयभट्टारिका) के नेरूर † के ताम्रपत्र में पुलकेशी दूसरे के पीछे विक्रमादित्य को राजा लिख, उस के पीछे चंद्रादित्य का नाम दिया है, और उसको विक्रमादित्य का बड़ा भाई लिखा है. उसके नाम के साथ केवल 'महाराज' लिखा होने और पिछले ताम्रपत्रों में राजाओं की नामावली में उसका नाम न होने से पाया जाता है, कि वह राजा होने नहीं पाया, किन्तु अपने छोटे भाई के आधीन था. उसकी राणी का दूसरा ताम्रपत्र कोचरेम ‡ गांव से मिला है, जिसमें कोचरक (कोचरेम) गांव के एक ब्राह्मण को भूमि देने का उल्लेख है. उसमें चन्द्रादित्य को 'महाराजाधिराज' लिखा है. इन ताम्रपत्रों से अनुमान होता है, कि उसको सावंतवाड़ी के आस पास के प्रदेश में जागीर मिली हो.

विक्रमादित्य का दूसरा बड़ा भाई आदित्यवर्मा था, जो

* विक्रमादित्य के पुत्र विनयादित्य के श० सं० ६११ (वि० सं० ७४६ = ई० स० ६८६) के ताम्रपत्र में उसके राज्य का १० वां वर्ष होना लिखा है (विदितमस्तु वोस्माभिरैकादशोत्तरपट्ट्यतेपु शकवर्षेष्वतीतेपु प्रवर्द्धमानविजयराज्य संवत्सरे दशमे वर्त्तमाने बंव० ए० सो० ज० जि० १६, पृ० २४४), जिससे विक्रमादित्य का देहान्त और विनयादित्य का राज्याभिषेक श० सं० (६११-९=) ६०२ (वि० सं० ७३७ = ई० स० ६८०) में होना निश्चित है.

† नेरूर = बंबई इलाते के सावंतवाड़ी राज्य में.

‡ कोचरेम = बंबई इलाते के रत्नागिरि जिले में.

विक्रमादित्य से बड़ा * और चंद्रादित्य से छोटा होना चाहिये. उसके राज्यवर्ष पहिले का एक ताम्रपत्र कर्नूल से मिला है, जिसमें वह अपने तई पुलकेशी (दूसरे) का प्रियपुत्र, 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'पृथिवीवल्लभ', और अपने बाहुबल से जीती हुई सारी पृथ्वी पर राज्य करनेवाला लिखता है १. इन खिताबों से तो उसका स्वतंत्र राजा होना पाया जाता है, परन्तु विजयभट्टारिका के दोनों ताम्रपत्रों में, जो विक्रमादित्य

* आदित्यवर्मा को विक्रमादित्य से बड़ा मानने का कारण यह है, कि येवूर के शिलालेख, और मीरज तथा कौथूम के ताम्रपत्रों में सत्याश्रय (पुलकेशी दूसरे) का पुत्र नेडमरि, उसका आदित्यवर्मा और आदित्यवर्मा का पुत्र विक्रमादित्य होना लिखा है (सत्यादिसर्वगुणरत्नगणाकरस्य सत्याश्रयत्वमुपलक्षणमेव यस्य ॥.....नडमरिद्वितीपोजनि तत्सुतः ॥ सुतस्तदीयो गुणरत्नमाली भूवल्लभोभूजवीर्यशाली । आदित्यवर्मोर्जितपुण्यकर्मा तेजोगिरादित्यसमानधर्मा ॥ तत्सुतो विक्रमादित्यो.....इं. ऐ० जि० ८, पृ० १३-१४). ये तीनों विक्रमादित्य के समय से कई सौ वर्ष पीछे के हैं, जिससे उनमें भूल होना संभव है. उनमें विक्रमादित्य को आदित्यवर्मा का पुत्र लिखा है, वह सर्वथा विश्वास योग्य नहीं है (क्योंकि स्वयं विक्रमादित्य, उसके पुत्र, और विजयभट्टारिका के ताम्रपत्रों में उसको पुलकेशी दूसरे का पुत्र लिखा है). उनके तय्यार करनेवालों को कदाचित् यह मालूम हो, कि पुलकेशी दूसरे और विक्रमादित्य के बीच राज्य के दो हकदार और थे, जिनके हाल से ठीक परिचित न होने के कारण उन्होंने उनको राजा मान पिता पुत्र ठहरादिये हों. नेडमर या तो चंद्रादित्य का दूसरा नाम हो, या चंद्रादित्य के स्थान पर भूल से लिखा गया हो, परन्तु उनसे आदित्यवर्मा का विक्रमादित्य से बड़ा होना स्पष्ट है.

१. समरसेसक्तसंकलोत्तरापथेश्वरश्रीहर्षवर्द्धनपराजयोपलब्धपरमेश्वरशब्दालंकृतस्य...सत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरस्य प्रियतनयः स्वभुजवलपराक्रमाक्रान्तसकलमहीमण्डलाधिराज्यः श्रीमदादित्यवर्मपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरः कुशली... (बंब० ग० सो० ज० जि० १६, पृ० २३४).

के समय के हैं, उसका राजा होना नहीं लिखा, और न पिछले नज़दीक के ताम्रपत्रों में उसका नाम मिलता है, जिससे यही अनुमान होता है, कि पुलकेशी (दूसरे) के अंतिम समय सोलंकी राज्य पर शत्रुओं का हमला हुआ उस समय, अथवा विक्रमादित्य अपने बड़े भाई चंद्रादित्य के विद्यमान होने पर भी अपने पिता के राज्य का मालिक बन बैठा, उस समय उसने कुछ मुल्क अपने आधीन कर वहाँ पर स्वतन्त्रता के साथ कुछ समय तक राज्य किया हो, परन्तु पुलकेशी के राज्य का स्वामी तो विक्रमादित्य ही हुआ था, जैसे कि पिछले ताम्रपत्रों से पाया जाता है.

विक्रमादित्य का चौथा और छोटा भाई जयसिंहवर्मा था, जिसको 'धराश्रय' भी कहते थे. उसको लाटदेश में जागीर मिली थी. उसका और उसके पुत्रों का वृत्तान्त हम गुजरात के सोलंकियों के साथ लिखेंगे.

विक्रमादित्य के तीन ताम्रपत्र कर्नूल से मिले हैं, जिनमें से एक * उसके राज्य के तीसरे वर्ष का, दूसरा १० वें वर्ष † का और तीसरे ‡ में संवत् या राज्यवर्ष कुछ भी नहीं लिखा है. उसका चौथा दानपत्र हैदराबाद † (दक्षिण) से मिला है. इन-

* उस ताम्रपत्र में नलवाड़ी विषय (जिले) के रत्नगिरि गांव में एक ब्राह्मण को भूमिदान करने का उल्लेख है—(रत्नगिरि गांव बंबई इलाके के बेल्हारी जिले के मडुकशिरा ताल्लुके का रत्नागिरि गांव हो)—बंब० ए० सो० ज० जि० १६, पृ० २३५—३७.

† उसमें सेन्द्रक वंशी राजा देवशक्ति के निवेदन करने पर ब्राह्मणों को रत्नगिरि में भूमि देने का उल्लेख है (बंब० ए० सो० ज० जि० १६, पृ० २३८—३९).

‡ उसमें एक ब्राह्मण को दो गांव दान करने का हाल है (बंब० ए० सो० जि० १६, पृ० २४०—४२).

+ उसमें ब्राह्मणों को एक गांव देना लिखा है (इ० ए० जि० ६, पृ० ७६—७७).

के अतिरिक्त एक जाली ताम्रपत्र * कुर्तकोटी † से मिला है. चंद्रादित्य की राणी विजयभट्टारिका के उपरोक्त दोनों ताम्रपत्र ‡ भी विक्रमादित्य के राजत्वकाल के हैं.

विनयादित्य ॥

विनयादित्य के विरुद्ध 'सत्याश्रय', 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' 'भट्टारक', और 'युद्धमल्ल' मिलते हैं. वह कुंवरपदे के समय से ही रण में यश प्राप्त कर चुका था. कर्नूल जिले से मिले हुए उसके राज्य के ११ वें वर्ष के ताम्रपत्र में लिखा है, कि "उसने अपने पिता की आज्ञा से तीन राजाओं (चोल, पाण्ड्य और केरल के राजाओं) के और पल्लवों के उद्धत सैन्य को नष्ट किया, और राज्य भर में शांति फैलाकर अपने पिता को प्रसन्न किया" +. इससे अनुमान होता है, कि पुलकेशी दूसरे के अन्तिम समय उसके राज्य पर चढ़ाई हुई थी, उस प्रसंग की ल-

* उस ताम्रपत्र की लिपि विक्रमादित्य के समय की लिपि से नहीं मिलती; इतना ही नहीं, किन्तु उसमें श० सं० ५३२ (वि० सं० ६६७=ई० सं० ६१०) में विक्रमादित्य का राजा होना लिखा है, जो किसी प्रकार संभव नहीं हो सकता, क्योंकि उक्त वर्ष में पुलकेशी दूसरे ने राज्य पाया था (इ० ऐ० जि० ७, पृ० २१६-२०).

† कुर्तकोटी=बंबई इलाते के धारवाड़ जिले में.

‡ विजयभट्टारिका के ताम्रपत्रों के अतिरिक्त लाट के सोलंकी जयसिंह (धराश्रय) के पुत्रों के ताम्रपत्र भी विक्रमादित्य के समय के होने चाहियें. ऐसे ही उपर्युक्त आदित्यवर्मा का ताम्रपत्र भी उसी (विक्रमादित्य) के राजत्वकाल का है.

+ पितुराज्ञया बालेन्दुशेखरस्येव सेनानीर्द्वैत्यवल्लमातिसमुद्धतं त्रैराज्यपल्लववल्लमवष्टभ्य समस्तविषयप्रशमनाद्विहित[तन्]मनोनुरञ्जनः अत्यन्तवत्सलत्वाद्युधिष्ठिर इव श्रीरामत्वाद्वामुदेव इव नृपाकुशत्वात्परशुराम इव राजाश्रयत्वाद्भरत इव विनयादित्यसत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरभट्टारकस्सर्वानेवमाज्ञापयति...
.....(इ० ऐ० जि० ६, पृ० ८६).

झाड़्यों में विनयादित्य ने अच्छी वीरता दिखलाई होगी, और उस समय वह बालक नहीं होगा. उसके राज्य के १४ वें वर्ष का ताम्रपत्र हरिहर * गांव से मिला है, जिससे पाया जाता है, कि 'उसने पल्लव, कलभ, केरल, हैहय, विल, मालव, चोल, पाण्ड्य आदि के राजाओं को अपने कुलपरम्परा के सेवक अलूप, और गंगा वंशियों † की नाई अपना सेवक बनाया' ‡. कलभ, हैहय, विल और मालववालों को जीतना उपरोक्त उसके राज्य के ११ वें वर्ष के ताम्रपत्र में नहीं लिखा, अतएव वहां के राजाओं-पर उसके राज्य के ११ वें और १४ वें वर्ष के बीच किसी समय चढ़ाई हुई हो. उसके पुत्र विजयादित्य के समय के, और पिछले ताम्रपत्रों में उस (विनयादित्य) के विषय में यह भी लिखा मिलता है, कि 'उसने कावेर †, पारसीक × और सिंहल ÷ आदि द्वीपों के राजाओं को अपने आधीन किया, और

* हरिहर गांव=मार्हसोर राज्य में.

† अलूप और गंगावंशी राजा पुलकेशी दूसरे के समय से ही सोलंकियों के सेवक बन गये थे, इसीसे उनको कुल परंपरा के सेवक कहे हैं.

‡ पल्लवकलभकेरलहैहयविलमालवचोलपाण्ड्याद्याः येनाज्वगङ्गाद्यैर्मौलै-
स्समभृत्यताव्रीताः... (इ० ऐ० जि० ७, पृ० ३०२). यह ताम्रपत्र श० सं० ६१६ (वि० सं० ७५१ = ई० स० ६६४) का है.

+ कावेर = कावेरी नदी के तट पर का प्रदेश-(कहीं कहीं कावेर के स्थान पर केरल भी लिखा है).

× पारसीक = यह शब्द बहुधा ईरान या ईरानियों का बोधक समझा जाता है, परन्तु यहां पर उनसे कुछ संबंध हो ऐसा पाया नहीं जाता, क्योंकि ईरान पर उसने चढ़ाई की हो यह असंभव है, अतएव यहां पर उक्त शब्द का प्रयोजन सीरिअन् लोगों से होना चाहिये, जो उस समय मलबार के तट पर तथा वहां के द्वीपों में बसे हुए थे.

÷ सिंहल = सिंहलद्वीप; लंका.

सारे उत्तरापथ (उत्तरी हिन्दुस्तान = नर्मदा के उत्तर के समस्त देश) के स्वामी * को विजय कर उसके पालिध्वजादि ७

* यह राजा कौन था इसका निश्चय नहीं हो सका, परन्तु सम्भव है, कि वह राजा वज्रट हो, जिसको कर्णाटक (सोलंकियों) के सैन्य ने जीता था, ऐसा राठौड़ राजा दंतिदुर्ग के ताम्रपत्र से पाया जाता है (कांचीशकेलनराधिपचोल-पाण्ड्यश्रीहर्षवज्रटविभेदविधानदत्तं । कर्णाटकं बलम् ... ई० ऐ० जि० ११, पृ० ११२).

७ पालिध्वज = यह शब्द प्राचीन शिलालेख, ताम्रपत्र और जैनग्रन्थों में मिलता है, परन्तु किसी कोश में पाया नहीं जाता. वह साधारण ध्वज (झंडे) का नाम नहीं, किन्तु भिन्न २ प्रकार के कई ध्वजों की एक स्थान में की हुई सजावट का नाम है. वि० सं० ६०० से कुछ पूर्व प्रसिद्ध राठौड़ राजा अमोघवर्ष के गुरु दिगंबर जैन साधु जिनसेनाचार्य ने 'आदिपुराण' नामक जैन ग्रंथ रचा, जिसमें पालिध्वज का वर्णन इस प्रकार किया है:—

“ध्वज १० प्रकार के होते हैं, जिनमें से एक तो सादा (बिना किसी चिन्ह का) और बाकी नव पर, माला, मयूर, कमल, हंस, गरुड़, सिंह, वृष, हाथी और चक्र के चिन्ह होते हैं इनमें से हर एक प्रकार के १०८ (अर्थात् १०८०) ध्वज प्रत्येक दिशा में रहते हैं, और चारों दिशाओं के मिलाकर ४३२० होते हैं. इस प्रकार पंक्तियों में जमाये हुए ध्वजों को पालिध्वज कहते हैं. 'जिन' भगवान् ने मोह (गाया) को जीतकर यह ध्वज प्राप्त किया था, जो उनका त्रिभुवन का स्वामी होना प्रकट करता है” (स्रग्वल्लसहस्रानाब्जहंसवीनमृगेशिनां । वृषभैर्भद्रचक्राणां ध्वजाः स्युर्दशभेदकाः ॥ २१६ ॥ अष्टोत्तरशतं ज्ञेयाः प्रत्येकं पालिकेतनाः । एकैकस्यां दिशि प्रोच्चास्त-रंगास्तोयधेरिव ॥ २२० ॥ ... ॥ इत्यमी केतवो मोहनिर्जयोपार्जिता बभूवुः । विभोस्त्रिभुवनेशत्वं शंसन्तोऽनन्यगोचरं ॥ २३७ ॥ दिश्यैकस्यां ध्वजारसर्वे सदृशं स्यादशीति युक् । चतसृष्वथ ते दिक्षु शून्यद्वित्रिकसागराः ॥ २३८ ॥ (आदिपुराण अध्याय २२ वां-ई० ऐ० जि० १४, पृ० १०४-५). कितने एक बरसों पहिले कोल्हापुर (बंबई इलाते में) में महावीर स्वामी के उत्सव पर इस प्रकार का पालिध्वज बनाया गया था.

ऐश्वर्य के चिन्ह छीन लिये' *। उपरोक्त श० सं० ६१६ (वि० सं० ७५१ = ई० स० ६६४) के ताम्रपत्र में इस घटना का उल्लेख नहीं है, और उस (विनयादित्य) का देहांत श० सं० ६१८ (वि० सं० ७५३ = ई० स० ६६६) में हुआ था, अतएव यह विजय वि० सं० ७५१ और ७५३ (ई० स० ६६४ और ६६६) के बीच हुआ होगा।

उस (विनयादित्य) के राज्य समय का एक शिलालेख १० और ४ ताम्रपत्र मिले हैं, जिनमें से एक ताम्रपत्र राज्यवर्ष १० वें का ऋ० श० सं० ६११ (वि० सं० ७४६ = ई० स० ६८६) कार्तिक शु० १५ का; दूसरा राज्यवर्ष ११ वें का + श० सं० ६१३ (वि० सं० ७४८ = ई० स० ६८८) माघ शु० १५ का, तीसरा राज्यवर्ष ११ वें का x श० सं० ६१४ (वि० सं० ७४९ = ई० स० ६८९) का,

* करदीकृतकावेरपारसीकसिंहलादिद्वीपाधिपस्य सकलोत्तरापथनाथमथनोपा-
र्जितोर्जितपालिध्वजादिसमस्तपारमैश्वर्यचिह्नस्य (इ० ऐं० जि० ६, पृ० १२७)।

१० यह शिलालेख बलगांव (माहसोर राज्य के शिकारपुर विभाग में) से मिला है। उसमें संवत् नहीं है, परन्तु उससे इतना पाया जाता है, कि विनया-
दित्य का सामंत सेन्द्रक वंशी महाराज पोगिलि नायरखंड (नागर खंड = बनवा-
सी प्रदेश का एक विभाग) का स्वामी था (इ० ऐं० जि० १६, पृ० १४४-४५)।

४४ तोगरचेडू (मद्रास इहाते के कर्नूल जिले में) से मिला हुआ (इ० ऐं० जि० ६, पृ० ८६-८७)।

+ मद्रास इहाते के कर्नूल जिले से मिला हुआ। इसमें युवराज विजयादित्य के निवेदन करने पर ब्राह्मणों को एक गांव देने का उल्लेख है (इ० ऐं० जि० ६, पृ० ८९-९०)।

x सोरब गांव (माहसोर राज्य में) से मिला, जिसमें अलूप वंशी राजा गुण-
सागर के पुत्र महाराज चित्रवाह के अर्ज करने पर एक ब्राह्मण को गांव देने का उल्लेख है (इ० ऐं० जि० १६, पृ० १४६-४७)।

और चौथा राज्यवर्ष १४ वें का * श० सं० ६१६ (वि० सं० ७५१ = ई० स० ६६४) कार्तिक शु० १५ का है †.

श० सं० ६१८ (वि० सं० ७५३ = ई० स० ६६६) में उसका देहान्त होने पर उसका पुत्र विजयादित्य सोलंकी राज्य का मालिक हुआ.

विजयादित्य.

विजयादित्य के विरुद्ध 'सत्याश्रय', 'समस्तभुवनाश्रय', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'भट्टारक' मिलते हैं. नेरूर गांव से मिले हुए उसके राज्य के चौथे वर्ष अर्थात् श० सं० ६२२ (वि० सं० ७५७ = ई० स० ७००) के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'बाल्यावस्था में ही उसने अस्त्रविद्या का ज्ञान संपादन कर लिया था, अपने पितामह (विक्रमादित्य) ने दक्षिण के देशों पर चढ़ाई की उस समय उसने [शङ्खरूप] कांटों को उखेड़ डाला था; उसके पिता ने उत्तरापथ (नर्मदा से उत्तर के सारे प्रदेश) पर हमला किया उसमें उस-

* हरिहर गांव (माइसूर राज्य में) से मिला हुआ (ई० ऐं० जि० ७, पृ० ३०१—२).

† उपर्युक्त लेख और ताम्रपत्रों के अतिरिक्त मीरज राज्य (बंबई इलाते में) के लक्ष्मेश्वर स्थान के शंखवस्ति नामक जैन मन्दिर में प्राचीन कनड़ी लिपि का एक शिलालेख है, जो ई० स० की ग्यारहवीं शताब्दी का खुदा हुआ है. उसमें श० सं० ८१० (वि० सं० १०२५ = ई० स० ९६८) में राजा मारासिंह (गंगावंशी) ने जो दान दिया उसका उल्लेख करने के पश्चात् श० सं० ६०८ (वि० सं० ७४३ = ई० स० ६८६) में विजयादित्य सत्याश्रय का दान देना, और उक्त संवत् में उसके राज्य का पांचवां वर्ष होना लिखा है, परन्तु वह लेख विजयादित्य के राज्य समय का खुदा हुआ नहीं है, और न श० सं० ६०८ (वि० सं० ७४३ = ई० स० ६८६) में उस के राज्य का पांचवां वर्ष था.

ने अपनी तलवार के बल से शत्रुदल का संहार कर उसको भगाया, और गंगा*, यमुना तथा पालिध्वज, महाशब्ददक्का (ढोल), माणिक्य, हाथी आदि छीन कर अपने पिता के नज़र किये. एक समय भागते हुए शत्रुओं ने दैववशात् उसको पकड़ लिया था, परन्तु वहां से भी वत्सराज † की नाई बिना

* गंगा और यमुना ये उक्त चिन्हवाले ध्वजों के नाम हैं.

† वत्सराज, जिसको उदयन भी कहते थे पांडुवंशी जनमेजय का प्रपौत्र था, उसके कैद होने और वहां से छूटने का वृत्तान्त इस तरह है:—

“कौशांबी (कौसम = प्रयाग के निकट) का राजा उदयन योगंधरायण आदि मंत्रियों पर राज्यभार डालकर वीणा बजाने तथा मृगयादि विनोद में सदा आसक्त रहता, और वीणा के मधुर स्वर से हाथियों को वश कर बन में से पकड़ लाया करता था. उस समय उज्जैन का राजा चंडमहासेन था, जिसके वासवदत्ता नामक एक बड़ी रूपवती कन्या थी. उसके लिये उदयन (वत्सराज) ही योग्य वर था, परन्तु उसके साथ वैर होने के कारण चंडमहासेन को यह शङ्का थी, कि शायद वह मेरी पुत्री से विवाह करना स्वीकार न करे, जिस से उसने अपनी इच्छा वत्सराज से प्रकट करना उचित न समझा, परन्तु उसके लिये ऐसा यत्न करना चाहा, कि जिससे वह खुशी के साथ वासवदत्ता का पाणिग्रहण करले. वत्सराज वीणा के सुस्वर से वशकर हाथियों को पकड़ने के लिये अकेला जंगलों में फिरा करता है, यह बात मालूम होने पर उस (चंडमहासेन) ने काष्ठ का हाथी बनवाया, और शस्त्र सजे हुए वीर पुरुषों को उसके भीतर छिपाकर वत्सराज को कैद करने की इच्छा से उस (हाथी) को जंगल में रखवा दिया. दैवयोग से वह वीणा बजाता हुआ एक दिन उस कृत्रिम हाथी के निकट अकेला आ पहुंचा, ऐसे में उसके भीतर छिपे हुए योद्धाओं ने बाहिर निकल उसको पकड़ लिया, और वे उसे चंडमहासेन के पास ले गये, जिसने उसको कैद किया. फिर अपनी पुत्री वासवदत्ता को गांधर्व विद्या सिखलाने का काम उसको इस विचार से सौंपा, कि उस रसिक प्रसंग में उन दोनों के बीच प्रेमबन्धन हो जावे तो उनका विवाह कर दिया जावे. कुछ दिनों बाद वे दोनों परस्पर प्रे-

किसी की मदद के वह छूट आया, और अपने बाहुबल से सारा देश अपने आधीन किया *'. उसके राज्य के तीसरे वर्ष बांदामी में ब्रह्मा, विष्णु और शिव की मूर्तियाँ स्थापित हुईं. उसने पटलकड़ † में विजयेश्वर का मंदिर बनवाया, जो अब संगमेश्वर नाम से प्रसिद्ध है, और ब्राह्मणों, शिवालयों, तथा जिनालयों को कई गांव भेंट किये. उपर्युक्त लक्ष्मेश्वर के लेख से

मबद्ध होगये और वत्सराज मौक्त देखकर उस राजकन्या सहित वहाँ से भाग निकला और विंध्याटवी में होता हुआ कौशांबी पहुँचा. चंडमहासेन अपनी इच्छा पूर्ण होने से प्रसन्न हुआ, और उसने अपने पुत्र गोपालक को कौशांबी भेजकर उन दोनों का विवाह करा दिया". कथा सरित्सागर में वारावदत्ता के पिता का नाम चंडमहासेन लिखा है, परन्तु कन्नोज के प्रसिद्ध और विद्वान् राजा श्रीहर्ष (हर्षवर्द्धन) ने अपनी रची हुई 'प्रियदर्शिका' नाटिका में उसका नाम प्रद्योत लिखा है (प्रद्योततनयामपहृत्य वत्सराजः कौशाम्बीमागतः....पृ० ३. न खलु सर्वो वत्सराजः। य एवं वासवदत्तामवाप्य बन्धनान्निर्यास्यति....पृ० ४—बम्बई की छपी हुई), और महाकवि कालिदास के मेघदूत की हस्त लिखित पुस्तकों में प्रद्योत और चंड दोनों पाठ मिलते हैं (प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं वत्सराजोऽत्र ज-हे—और किसी में 'चंडस्यात्र प्रियदुहितरं' पाठ है), अतएव चंडमहासेन और प्रद्योत ये दोनों एक ही राजा के नाम होने चाहियें, जैसे कि उदयन (कथा-सरित्सागर में) और वत्सराज (प्रियदर्शिका—मेघदूत आदिमें).

* शैशव एवाधिगताशेषास्त्रशास्त्रो दक्षिणाशाविजयिनि पितामहे समु-न्मूलितनिखिलकण्टकसंहतिरुत्तरापथविजिगीषोगुंरोरग्रत एवाहवव्यापारमाचरन्नराति-गजघटापाटनविशीर्यमाणकृपाणधारस्समग्रविग्रहाग्रेसरस्सत्साहसरासिकः पराङ्मुखी-कृतशत्रुमण्डलो गङ्गायमुनापालिध्वजपटद्वकामहाशब्दचिन्हमाणिक्यमतंगजादीन्पि-तृसात्कुर्वन्परैः पलायमानैरासाद्य कथमपि विधिवशादपनीतोपि प्रतापादेव विषयप्र-कोपमराजकमुत्सारयन्वत्सराज इवानपेक्षितापरसहायकस्तदवग्रहान्निर्गत्य स्वभुजावष्ट-म्भप्रसाधिताशेषविश्वम्भर।....(इ० ऐ० जि० २, पृ० १२७-२८).

† पटलकड़=बम्बई इहाते के कलाङ्गी जिले में.

पाया जाता है, कि उसने अपने राज्य के ३४ वें वर्ष श० सं० ६५१ (वि० सं० ७८६ = ई० स० ७२६) में पूज्यपाद * के शिष्य जैन पंडित उदयदेव को 'शंखजिनेन्द्र' मन्दिर के निमित्त कर्दम गांव दिया था.

उसके राजत्वकाल के ४ शिलालेख † और दो ताम्रपत्र ‡ मिले हैं, जिनमें से राज्यवर्ष तीसरे का (लेख) श० सं० ६२१ (वि० सं० ७५६ = ई० स० ६६६) का, राज्यवर्ष चौथे का (ताम्रपत्र) श० सं० ६२२ (वि० सं० ७५७ = ई० स० ७००) का, और राज्यवर्ष १० वें का (ताम्रपत्र) श० सं० ६२७ (वि० सं० ७६२ = ई० स० ७०५) का है. बाकी किसी में संवत् नहीं है. इनके अतिरिक्त उपरोक्त लक्ष्मेश्वर के लेख में श० सं० ६४५ (वि० सं० ७८० = ई० स० ७२३) में उसके राज्य का २८ वां, और श० सं० ६५१ (वि० सं० ७८६ = ई० स० ७३०) में ३४ वां वर्ष होना लिखा है. एहोले के कनड़ी लेख में, जो उसके राज्य के १३ वें वर्ष का है, आश्विन महीने में उसके उक्त राज्यवर्ष का तीसरा महीना होना

* पूज्यपाद (देवनंदी) दिगंबर जैन साधु था. जैनेन्द्रव्याकरण का कर्ता शायद यही पूज्यपाद हो. यदि यह अनुमान ठीक हो तो उक्त पुस्तक के बनने का समय ई० स० की सातवीं शताब्दी का अंत होना चाहिये.

† बादामी का श० सं० ६२१ (वि० सं० ७५६ = ई० स० ६६६) का (इ० ऐ० जि० १०, पृ० ६०), एहोले का (कनड़ी भाषा का) राज्यवर्ष १३ वें का (इ० ऐ० जि० ८, पृ० २८५), महाकूट का (इ० ऐ० जि० १०, पृ० १०३) कनड़ीभाषा का, और पट्टलकड़ का कनड़ीभाषा का (इ० ऐ० जि० १०, पृ० १६५), अंतिम दो में संवत् नहीं है.

‡ दोनों नेखर गांव से मिले हैं, जिनमें से एक श० सं० ६२२ (वि० सं० ७५७ = ई० स० ७००) का (इ० ऐ० जि० ६, पृ० १२६-२८) और दूसरा श० सं० ६२७ (वि० सं० ७६२ = ई० स० ७०५) का (इ० ऐ० जि० ६, पृ० १३०-३२) है.

लिखा है, जिससे उसका राज्याभिषेक श० सं० ६१८ (वि० सं० ७५३ = ई० स० ६६६) के आचण मास में होना स्थिर होता है.

३७ वर्ष के करीब शांति के साथ राज्य करने बाद श० सं० ६५५ (वि० सं० ७९० = ई० स० ७३३) में * उसके राज्य की समाप्ति हुई, और उसका पुत्र विक्रमादित्य राज्यासन पर बैठा.



विक्रमादित्य (दूसरा).

विक्रमादित्य दूसरे के विरुद्ध 'सत्याश्रय', 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', और 'भट्टारक' मिलते हैं. उसके पुत्र कीर्तिवर्मा के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'राज्याभिषेक के पश्चात् वह (विक्रमादित्य) अपने कुल के स्वाभाविक शत्रु पल्लववंशी राजा को जड़ से उखेड़ने की इच्छा से तुंडाक विषय (देश) में पहुंचा, और उसने युद्ध के लिये आये हुए पल्लव नंदिपोतवर्मा पर हमला कर उसको भगाया, तथा उसके कटुमुख और समुद्रघोषा नामक वाघ, खट्वांग ध्वज, बहुत से अच्छे हाथी, और माणिक्यसंचय को छीनकर कांची में प्रवेश किया, परन्तु उस (कांची) को नष्ट नहीं किया. वहां पर ब्राह्मण, दीन, और अनाथों को दान से संतुष्ट किया, और बहुंतसा सुवर्ण नरसिंहपोतवर्मा के बनाये हुए राजसिंहेश्वर के, तथा अन्य मंदिरों के भेट किया. पाण्ड्य, चोल, केरल और

* उपर्युक्त लक्ष्मेश्वर के लेख में श० सं० ६५६ (वि० सं० ७९१ = ई० सं० ७३५) में विक्रमादित्य का दूसरा राज्यवर्ष होना लिखा है, जिससे विजयादित्य का देहान्त और विक्रमादित्य (दूसरे) का राज्याभिषेक श० सं० (६५६-१ =) ६५५ (वि० सं० ७९० = ई० स० ७३३) में होना स्थिर होता है.

कलभ आदि के राजाओं को अपने प्रताप से जलाया और दक्षिण समुद्र के तटपर जयस्तंभ स्थापित किया*.

विक्रमादित्य ने नन्दिपोतवर्मा को परास्त कर कांची में प्रवेश किया उस समय का एक शिलालेख † वहां पर राजसिंहेश्वर के मंदिर के सामने के मंडप के एक स्तंभपर खुदा हुआ है, जिसमें उस (विक्रमादित्य) का नाम सब बिरुदों सहित पढ़ा जाता है. पट्टलकड़ के एक शिलालेख से यह भी पाया जाता ‡ है, कि उसकी दो राणियों लोकमहादेवी (बड़ी) और त्रैलोक्यमहादेवी (छोटी) हैहयवंशी राजा की पुत्रियों (सगी बहिनें) थीं. पट्टलकड़ में लोकमहादेवी ने 'लोकेश्वर' का, और त्रैलोक्यमहादेवी ने 'त्रैलोक्येश्वर' का मंदिर बनवाया. त्रैलोक्यमहादेवी से कीर्त्तिवर्मा पैदा हुआ था.

उस (विक्रमादित्य) के समय का १ ताम्रपत्र + और ६

* सकलभुवनसाम्राज्यलक्ष्मीस्वयंवराभिषेकसमयानन्तरसमुपजातमहेत्साह-
आत्मवंशजपूर्वनृपतिच्छायापहारिणः प्रकृत्यमित्रस्य पञ्चवस्य समूलोन्मूलनाय
कृतमतिरतित्वरया तुंडाकविषयं प्राप्याभिमुखागतन्नन्दिपोतवर्माभिधानम्पल्लवं रणमु-
खे संप्रहृत्य प्रपलाय्य कटुमुखवादित्रसमुद्रघोषाभिधानवाद्यविशेषौ खट्वांगध्वजं प्र-
भूतप्रख्यातहस्तिवरान्....माणिक्यराशिञ्च हस्ते कृत्य....कांचीमविनाशय प्रविश्य
सततप्रवृत्तदानानन्दितद्विजदीनानाथजनो नरसिंहपोतवर्मानिर्मापितशिलामयराज-
सिंहेश्वरादिदेवकुलसुवर्णराशिप्रत्यर्पणोपार्जितोर्जितपुण्यः अनिवारितप्रतापप्रसरम-
तापितपाण्ड्यचोलकेरलकलभप्रभृतिराजन्यकः... वेलाकुले....दक्षिणार्णवे....जयस्त-
म्भमतिष्ठिपद्विक्रमादित्यसत्याश्रयश्रीपृथिवीवल्लभमहाराजाधिराजपरमेश्वरभट्टारकः

(ए० इ० जि० ५, पृ० २०३-४).

† ए० इ० जि० ३, पृ० ३६०).

‡ ए० इ० जि० ३, पृ० ५.

+ नेरूर से मिला हुआ, बिना संवत् का (इ० ई० जि० ६, पृ० १३३-३४).

शिलालेख * मिले हैं. १४ वर्ष के करीब राज्य करने बाद श० सं० ६६६ (वि० सं० ८०४ = ई० स० ७४७) में † उसका देहान्त होनेपर उसका पुत्र कीर्तिवर्मा उसका क्रमानुयायी बना.

कीर्तिवर्मा (दूसरा)

कीर्तिवर्मा के विरुद्ध 'वल्लभ', 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'भट्टारक', 'नृपसिंह' और 'सत्याश्रय' मिलते हैं. वक्कलेरी से मिले हुए उसके राज्यवर्ष ११ वें के श० सं० ६७६ (वि० सं० ८४१ = ई० स० ७५७) के ताम्रपत्र में यह लिखा है, कि 'उस (कीर्तिवर्मा) ने बाल्यावस्था में शस्त्र-विद्या सीखली थी, उसके गुणों से रंजित होकर उसके पिता ने उसको युवराजपद दे दिया था, और उसने अपने कुल के शत्रु कांची के राजा को सजा देने के लिये अपने पिता से आज्ञा मांगी जिसके पातेही वह उसपर चढ़ा, परन्तु पल्लव राजा सन्मुख आकर लड़ने को असमर्थ होने के कारण किले में जा घुसा, तब उसने उसकी ताकत तोड़ उसके मनहाथी, माणिक और सुवर्ण (सुवर्ण के सिक्के) छीनकर अपने पिता के नज़र

* एहोले से १ (ई० ऐं० जि० ८, पृ० २८६) कांची से १ (ए० ई० जि० ३ पृ० ३६०), और पट्टलकड़ से ४ (ई० ऐं० जि० १०, पृ० १६४, १६६ और १६७) मिले हैं, परन्तु किसी में संवत् नहीं है.

† वक्कलेरी (माहसोर राज्य में) से मिले हुए कीर्तिवर्मा दूसरे के श० सं० ६७६ (वि० सं० ८१४ = ई० स० ७५७) के ताम्रपत्र में उस के राज्य का ११ वां वर्ष होना लिखा है, अतएव विक्रमादित्य का देहांत और कीर्तिवर्मा का राज्याभिषेक श० सं० (६७६—१०=) ६६९ (वि० सं० ८०४ = ई० स० ७४७) में होना चाहिये .

किये' * . यह पल्लव वंशी राजा पर विक्रमादित्य के समय की दूसरी चढ़ाई होनी चाहिये.

पश्चिमी सोलंकी राज्य का अस्त होना लगातार पल्लवादि राजाओं से लड़ते रहने के कारण सोलंकियों की ताकत कम होती गई, जिससे कीर्तिवर्मा के समय राठौड़ दन्तिदुर्ग † उन का महाराज्य छीनने को समर्थ हुआ. उपरोक्त घेचूर के शिलालेख और मीरज के ताम्रपत्र में स्पष्ट लिखा है, कि 'विक्रमादित्य के पुत्र कीर्तिवर्मा के हाथ से सोलंकियों की राज्यलक्ष्मी पृथ्वी पर अस्त होगई' ‡. राठौड़ दन्तिदुर्ग के सामनगढ़ + से मिले हुए ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'उसने वल्लभ (कीर्तिवर्मा) को विजय कर 'राजाधिराज' और 'परमेश्वर' पद पाये, और कांची, केरल, चोल और पांड्य के राजाओं, तथा श्रीहर्ष (कन्नोज का राजा) और वज्रट को जीतने वाले

* बाल्ये सुशिक्षितशस्त्रशास्त्रशत्रुषड्वर्गनिग्रहपरस्त्वगुणकलापानन्दितहृदयेन पित्रा समारोपितयौवराज्यः स्वकुलधैरिणः कारुचीपतेर्निग्रहाय मां प्रेषय इत्यादेशं प्रार्थ्य लब्ध्वा तदनन्तरमेव कृतप्रयाणस्तन्नाभिमुखमागत्य प्रकाशयुद्धं कर्तुमसमर्थं प्रविष्टदुर्गम्पल्लवं भग्नशक्तिं कृत्वा मत्तमतंगजमाणिक्यसुवर्णकोटिरादाय पित्रे समर्पितवान् (ए० इ० जि० ५, पृ० २०४).

† दन्तिदुर्ग = राठौड़ कर्क का पौत्र और इंद्र (दूसरे) का पुत्र था. दक्षिण के राठौड़ों में प्रथम यही प्रतापी हुआ, और इसीने उनका राज्य बढ़ाया था.

‡ तद्भवो विक्रमादित्यः कीर्तिवर्मा तदात्मजः । येन चालुक्यराजश्रीरंतरायिरयभूद्धुवि- (इ० ऐ० जि० ८, पृ० १४).

+ सामनगढ़ = बंबई इहाते के कोल्हापुर राज्य में.

कर्णाटक के असंख्य सैन्य को जीता' * करड़ा † से मिले हुए राठौड़ राजा कर्कराज ‡ (दूसरे) के ताम्रपत्र में यह लिखा है, कि 'दन्तिदुर्गरूपी सूर्य ने उदय होकर सोलंकीरूप घने अन्धकार को नष्ट किया' +, उपर्युक्त सामनगढ़ का ताम्रपत्र श० सं० ६७५ (वि० सं० ८१० = ई० सं० ७५३) का है, जिससे स्पष्ट है, कि उक्त संवत् के पूर्व अर्थात् कीर्त्तिवर्मा के राज्य के पहिले ६ वर्षों के भीतर दन्तिदुर्ग ने कीर्त्तिवर्मा को विजय कर उसके राज्य का अधिकतर (उत्तरी) हिस्सा छीन लिया होगा, परन्तु दक्षिणी हिस्सा फिर भी कुछ समय तक उस (कीर्त्तिवर्मा) के अधीन रहा था, क्योंकि उस (कीर्त्तिवर्मा) का उपर्युक्त चकलेरी का ताम्र पत्र श० सं० ६७६ (वि० सं० ८१४ = ई० सं० ७५७) भाद्रपद शु० १५ का है, जिससे पाया जाता है, कि 'उस दिन उसका विजय कटक × भीमा नदी के तट पर भंडारगविट्टगे ÷ गांव

* श्रीदन्तिदुर्गराजाख्यः स्वकुलाभोजभास्करः ॥ "यो बल्लभां सपदि वृद्ध-
लकेन जित्वा राजाधिराजपरमेश्वरतामुपैति ॥ कांचीश केरलनराधिपचोलपाण्ड्य-
श्रीहर्षवज्रटविभेदविधानदत्तं । कर्णाटकं बलमनन्तमजेयस्थैर्भृत्यैः कियन्निरपि यः
सहसा जिगाय ॥ (इ० ऐ० जि० ११, पृ० ११२).

† करड़ा = बम्बई इहाते के खानदेश जिले के तलोद तअल्लुके में.

‡ कर्कराज (कर्क, ककल) दूसरा राठौड़ दन्तिदुर्ग के वंश का अन्तिम राजा था, जिससे सोलंकी राजा तैलप ने अपने पूर्वजों का राज्य पीछा लिया था.

+ कृतचालुक्यघनान्धकारनाशः । उदगादथ दन्तिदुर्गभानुः" (इ० ऐ० जि० १२ पृ० २६४).

× विजय कटक = (राजधानी से बाहिर) दलबल सहित राजा के निवास का कोई भी स्थान.

÷ भंडारगविट्टगे = यह गांव बम्बई इहाते के शोलापुर जिले में है, और इस समय भंडार कोटे कहलाता है.

के पास था, और वहीं से दोसिराज के अर्ज करने पर माधवशर्मा ब्राह्मण को पालुंगल प्रदेश का सुल्लियूर * गांव दान किया था †.

दंतिदुर्ग के उत्तराधिकारी कृष्णराज के समय कीर्त्तिवर्मा ने अपना गया हुआ राज्य पीछा लेने का उद्योग किया हो ऐसा पाया जाता है, परन्तु वह सफल नहीं हुआ इतना ही नहीं, किन्तु उसका रहा सहा राज्य भी राठौड़ों के हाथ में जा पड़ा ‡. इस प्रकार कीर्त्तिवर्मा (दूसरे) के साथ सोलंकीयों का महारा-

* सुल्लियूर=यह गांव बगई इहाते के धारवाड़ जिले में है.

† ए० ई० जि० ५, पृ० २०४—५.

‡ राठौड़ राजा गोविंदराज (तीसरे) के समय के बाणी गांव (नाशिक जिले में) से मिले हुए ताम्रपत्र में दंतिदुर्ग के उत्तराधिकारी कृष्णराज के विषय में लिखा है, कि 'उसने सोलंकीरूप समुद्र में से लक्ष्मी निकाल ली' अर्थात् सोलंकीयों का रहा सहा राज्य भी ले लिया (यश्चालुक्ककुलादनूनविबुधवाताश्रयो वारिधेर्लक्ष्मीगान्दरवत्तलीलगभिराद कृष्टवान् वल्लभः... ई० ई० जि० ११, पृ० १५७). इसी तरह बड़ौदा (गायकवाड़ राज्य का) से मिले हुए गुजरात के राठौड़ कर्कराज के श० सं० ७३४ (वि० सं० ८६९=ई० सं० ८१२) के ताम्रपत्र में उक्त दक्षिण के राठौड़ राजा (कृष्णराज) के विषय में यह लिखा है, कि 'उसने लड़ने की इच्छा से हमला करने वाले महावराह को हरिण बना दिया' अर्थात् उसे (सोलंकी राजा को) भगा दिया (यो युद्धकण्डूतिगृहीतमुच्चैः शौर्योष्मसंदीपितमापतन्तं । महावराहं हरिणीचकार प्राज्यप्रभावः खलु राजसिंहः ई० ई० जि० १२, पृ० १५९). यहां पर 'महावराह' शब्द का प्रयोग उक्त सोलंकी राजा के लिये किया हो ऐसा अनुमान होता है, क्योंकि दक्षिण के सोलंकीयों का राज्य चिन्ह वराह था, जो उनके ताम्रपत्रों की मुद्रा (मुहर) में मिलता है, और जिसको वे भगवान् विष्णु की कृपा से मिला हुआ, और अपने विजय का कारण मानते थे.

ज्य अस्त हो गया, जिसको दो सौ वर्ष से कुछ अधिक समय तक राठौड़ों के आधीन रहने के पश्चात् सोलंकी राजा तैलप ने कर्कराज (कर्क, कक्कल) दूसरे से पीछा लिया.

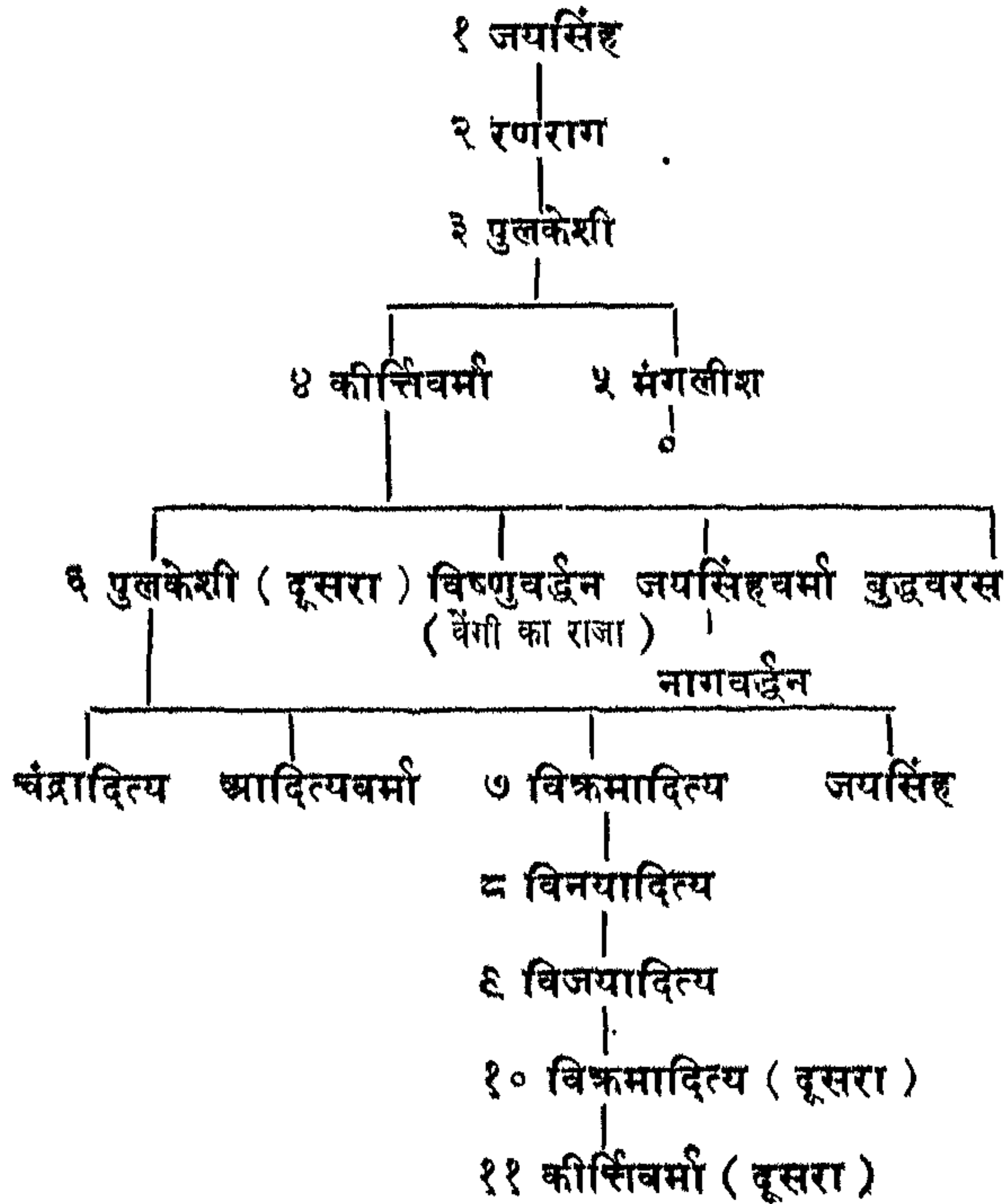
कीर्तिवर्मा के कोई पुत्र होना पाया नहीं जाता. उपरोक्त वक्कलेरी के ताम्रपत्र * के अतिरिक्त उसके समय के दो शिलालेख † भी मिले हैं.

. ~~~~~

* ए० इ० जि० ५, पृ० २०२-५; इ० ऐ० जि० ८, पृ० २५-२७.

† आडूर गांव (धारवाड़ जिले में) का बिना संवत् का (इ० ऐ० जि० ११, पृ० ६६-७०), और पड्डलकड़ का बिना संवत् का (ए० इ० जि० ३, पृ० ४-६). इन दो लेखों के अतिरिक्त धारवाड़ जिले के दिङ्गूर गांव के एक कन्नड़ी भाषा के लेख में (ए० इ० जि० ६, पृ० २५३) राजा का नाम कत्तियर और उरा के सामन्त का नाम दोसि लिखा है, वह लेख भी शायद कीर्तिवर्मा के समय का हो. 'कत्तियर' कीर्तिवर्मा का लौकिक रूप हो. दोसिराज कीर्तिवर्मा का सामन्त था ऐसा उराके वक्कलेरी के ताम्रपत्र से पाया जाता है, और एक दूसरे लेख में (ए० इ० जि० ५, पृ० १५-२०) सोलंकी तैल (दूसरे) के किसी पूर्वज का नाम कत्तियर देव लिखा भी है.

बादामी के पश्चिमी सोलंकी राजाओं का वंशवृक्ष.



बादामी के पश्चिमी सोलंकी राजाओं के
राजत्वकाल का नक्शा.

नं०	नाम	राज्य का प्रारंभ		राज्य की समाप्ति	
		विक्रम सं०	ईसवी सन्	विक्रम सं०	ईसवी सन्
१	जयसिंह				
२	रणराज				
३	पुलकेशी	०	०	६२४	५६७
४	कीर्तिवर्मा	६२४	५६७	६४८	५९१
५	मंगलीश	६४८	५९१	६६७	६१०
६	पुलकेशी (दूसरा)	६६७	६१०	०	०
७	विक्रमादित्य	७१२ (?)	६५५ (?)	७३७	६८०
८	विजयादित्य	७३७	६८०	७५३	६९६
९	विजयादित्य	७५३	६९६	७६०	७३३
१०	विक्रमादित्य (दूसरा)	७६०	७३३	८०४	७४७
११	कीर्तिवर्मा (दूसरा)	८०४	७४७	०	०

प्रकरण पाचवां.

पश्चिमी सोलंकी राज्य का पुनरभ्युदय.

—०—

राठौड़ राजा दंतिदुर्ग ने कीर्त्तिवर्मा (दूसरे) से सोलंकी-
यों का महाराज्य छीना, जिसके बाद लाट देश पर जो सोलं-
कियों की शाखा कायम हुई थी उसका राज्य भी राठौड़ों के
हाथ में चला गया, केवल पूर्वी सोलंकीयों का राज्य ही बहुत
दिनों तक उनके आधीन नहीं हुआ. उसके लिये भी राठौड़ों
ने समय समय पर उद्योग किया था परन्तु वह थोड़े ही समय के
लिये सफल हुआ. दंतिदुर्ग से लगाकर कर्कराज (कक्कल)
दूसरे तक १४ राठौड़ राजाओं के अधिकार में सोलंकी राज्य
रहा, जिनमें से १३ वें राजा खोटिग के समय मालवा के परमार
राजा श्रीहर्ष ने, जिसका दूसरा नाम सीयक था, राठौड़ों पर
चढ़ाई कर उनको परास्त किया, और उनकी राजधानी मान्य-
खेट * नगर को वि० सं० १०२६ १ (ई० स० ६७२) में लूटा. इसी अ-
रसे में खोटिग का देहांत हुआ, और उसके छोटे भाई निरुपम

* मान्यखेट=इस समय मालखेड़ नाम से प्रसिद्ध है, और हैदराबाद (नि-
जाम) के राज्य के अंतर्गत है.

१) तस्मादभूदरिनरेश्वरसंघसेनागर्ज्जद्वर्जैद्रवसुंदरतूर्यनादः । श्रीहर्षदेव इति
खोटिगदेवलक्ष्मीं जग्राह यो युधि नगादसमप्रतापः ॥ उदयपुर (ग्वालियर
राज्य में) का लेख (ए० ई० जि० १, पृ० २३५). विक्रमकालस्स गण अउणा-
चीसुत्तरे सहस्रांमि । मालवनरिंदभाडीए लूडिए मन्नखेडंमि ॥ २७६ ॥ (धन-

का बेटा कर्कराज (कक्कल) दूसरा उसका उत्तराधिकारी हुआ। परमारों के साथ की उक्त लड़ाई से राठौड़ बलहीन हो गये थे, और कर्कराज (दूसरे) के कमजोर होने से अक्सर पा कर कीर्तिवर्मा के वंशज तैलप ने उस पर चढ़ाई कर अपने पूर्वजों का गया हुआ राज्य उससे पीछा छीन कर पश्चिमी सोलंकी राज्य की पुनः स्थापना की।

तैलप के वंशजों के ताम्रपत्रों और शिलालेखों में बहुधा उसी (तैलप) से वंशावली दी है, और उसका कीर्तिवर्मा (दूसरे) के साथ क्या संबंध था इस विषय में कुछ भी नहीं लिखा, परन्तु घेवूर के शिलालेख, और मीरज तथा कौथूम से मिले हुए ताम्रपत्रों में उक्त सम्बन्ध का परिचय इस प्रकार दिया है:—

“राजा विक्रमादित्य (दूसरे) के भीम* सा पराक्रमी भाई था, जिसका पुत्र कीर्तिवर्मा (तीसरा) हुआ। उसका बेटा तैल, और उसका विक्रमादित्य (तीसरा) हुआ। उस (विक्रमादित्य) से भीम उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र अय्यन ने कृष्ण † की पुत्री से विवाह किया। उसके पुत्र विक्रमादित्य (चौथे) का चेदी देश के राजा लक्ष्मणराज ‡ की पुत्री बोंथादेवी से विवाह हुआ, जिसके गर्भ से तैल दूसरा (तैलप) उत्पन्न हुआ+”.

पाल पंडित रचित ‘पाड्यलच्छी नाममाला’ नामक प्राकृत कोश, जो उक्त संवत् में बना था).

* शायद उसका नाम भीम हो, परन्तु उक्त ताम्रपत्रादि में स्पष्ट नहीं है। उनमें ‘भीमपराक्रमः’ पाठ मिलता है, जिसका अर्थ ‘भीम जैसा पराक्रमी’ होता है।

† कृष्ण किस वंश का और कहां का था, इस विषय में कुछ भी नहीं लिखा।

‡ लक्ष्मणराज=चेदी देश के हैहय (कलचुरि) वंशी राजा केयूरवर्ध (युवराजदेव प्रथम) का पुत्र और शंकरगण तथा युवराजदेव (दूसरे) का पिता था।

+ विक्रमादित्यभूपालभ्राता भीमपराक्रमः । तत्सूनुः कीर्तिवर्माभूमृत्प्रासादित-
दुर्जनः ॥ तैलभूपस्ततो जातो विक्रमादित्यभूपतिः । तत्सूनुरभवत्तस्माद्भीमराजोरि-

उपर्युक्त शिलालेख और दोनों ताम्रपत्रों में तैलप से पूर्व के जिन राजाओं के नाम मिलते हैं उनमें से तैलप के पिता विक्रमादित्य * (चौथे) के सिवाय किसी के समय का एक भी शिलालेख अथवा ताम्रपत्र अब तक नहीं मिला, तथापि उनके अधिकार में वर्तमान माहसोर राज्य का कुछ अंश रहा था यह निश्चित है. उनके वंश में तैलप फिर प्रतापी हुआ, जिसने अपने बाहुबल से अपने कुल का गया हुआ राज्य पीछा प्राप्त किया. बादामी के सोलंकियों के साथ तैलप का संबंध बतलाने के लिये कीर्तिवर्मा (दूसरे) और तैलप के बीच के राजाओं की जो नामावली ऊपर दर्ज की है वह शायद अपूर्ण हो, क्योंकि उधर दंतिदुर्ग से लगाकर कर्कराज (ककल) दूसरे तक १४ राजा और ६ पुस्त होना पाया जाता है, और उसी अरसे में इधर केवल ७ नाम मिलते हैं, जो कम हैं. इसी तरह यदि समय की तरफ दृष्टि दें, तो कीर्तिवर्मा (दूसरे) से राज्य छूटने और तैलप के राज्य लेने तक २१० वर्ष से कुछ अधिक समय आता है, उसमें

भीकरः ॥ आच्यणार्थस्ततो जज्ञे यद्वंशस्य श्रियं स्वकं । प्रापयन्निव वंशं स ववृते
कृष्णनंदनां ॥ अभूतयोस्तनूजो विजयविभासी विरोधिविध्वंसी । तेजोविजितादित्यः
सत्यधनो विक्रमादित्यः ॥ चेदीशर्वशतिलकां लक्ष्मणराजस्य नंदनां नुतशीलां । बों-
थादेवीं विधिवत्परिशिन्ये विक्रमादित्यः ॥ सुतमिव वसुदेवादेवकी वासुदेवं गुहगिव
गिरिजामिः देवमर्द्धेन्दुमौलेः । अजनयदथ बोंथादेव्यतस्तैलभूपं विभवविजितशक्रं
विक्रमादित्यनाम्नः ॥-तैलप के पौत्र विक्रमादित्य (पांचवें) के समय के श० सं०
६३१ (वि० सं० १०६६=ई० स० १००६) के कौथूम गांव से मिले हुए ता-
म्रपत्र से (ई० ई० जि० १६, पृ० २२-२३).

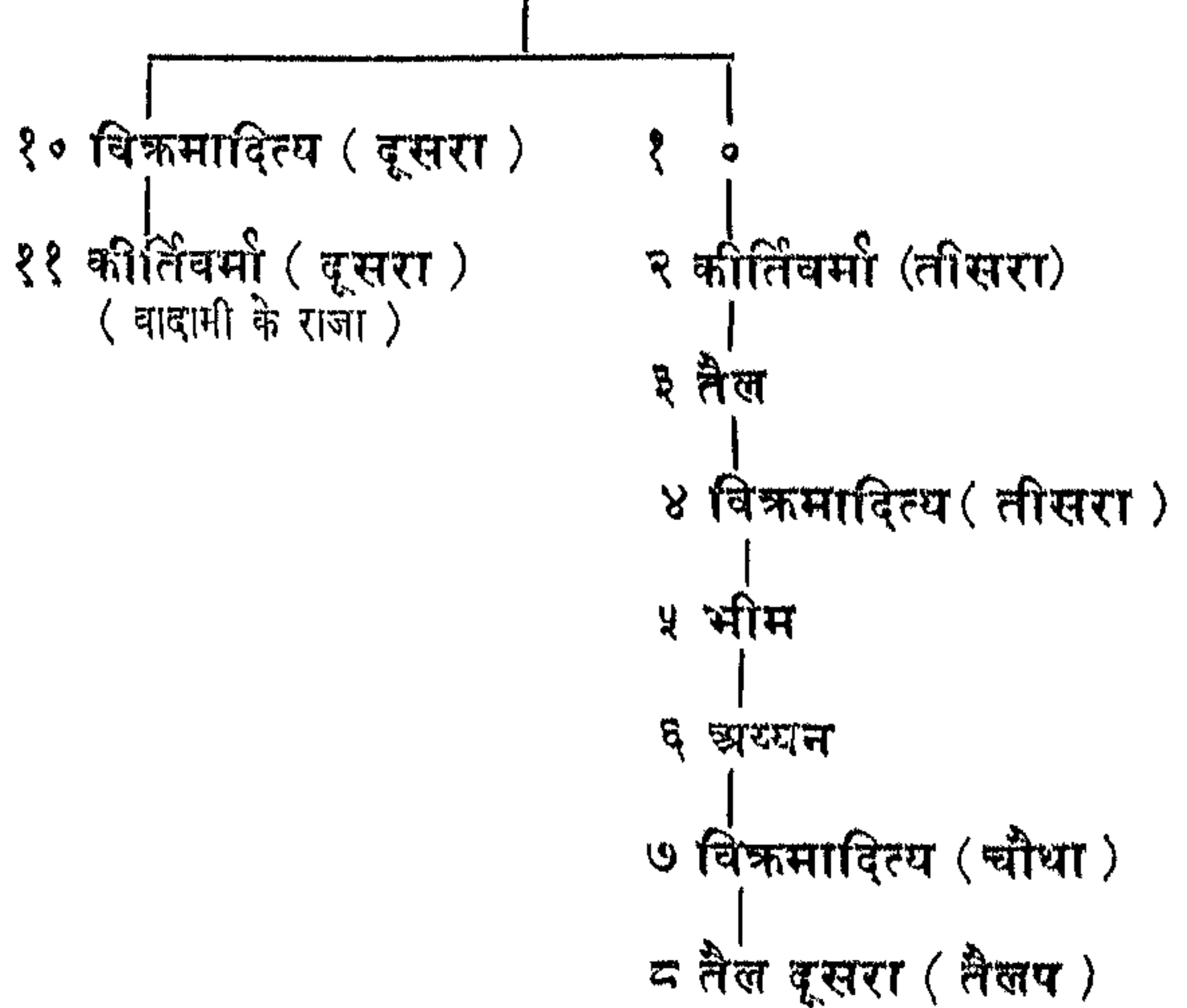
* प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता राहस साहिब को विक्रमादित्य (चौथे) के राजत्व-
काल का एक शिलालेख माहसोर राज्य के चहलकेरे जिले से मिला है, जिसका स-
मय वे ई० स० ६७१ (वि० सं० १०२८) होना प्रकट करते हैं (एपिग्राफ़िया
फ़ार्साटिका, जि० ११, भूमिका, पृ० १०).

७ राजाओं का होना; पाया जाता है, जिससे प्रत्येक का राजत्वकाल औसत हिसाब से ३० वर्ष से कुछ अधिक आता है, जो अधिक है, अतएव जब तक किसी अन्य लेखादि से उक्त नामावली का ठीक होना सिद्ध न हो, तब तक हम उसको संशय-रहित नहीं मान सकते.

—:0:—

येवूर के शिलालेख और मीरज तथा कौथूम से मिले हुए ताम्रपत्रों के अनुसार कीर्तिवर्मा (दूसरे) से तैलप तक का वंशवृक्ष.

६ विजयादित्य * (बादामी का राजा).



—:0:—

* देखो प्रकरण चौथे के अंत में दिया हुआ वंशवृक्ष.

तैलप * (तैल दूसरा).

तैलप के विरुद्ध 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक', 'आहवमल्ल'†, 'रणरंगभीम'‡, 'पृथिवीवल्लभ', 'चालुक्यचक्रवर्ती' और 'भुजबलचक्रवर्ती' मिलते हैं. उसने श० सं० ८६५ ध३ (वि० सं० १०३०=ई० सं० ९७३) में राठौड़ कर्कराज (ककल) दूसरे को मारकर अपने पूर्वजों का राज्य प्रीछा प्राप्त किया. येवूर के शिलालेख और मीरज तथा कौथूम के ताम्रपत्रों में लिखा है, कि 'उसने राठौड़ वंश की लक्ष्मीलता के अंकुररूप कर्कर (कर्कराज दूसरे) और रणस्तंभ नामक दो पुरुषों को रणखेत में मारा, जो अपने

* तैलप को तैल (दूसरा), तैलपय्य, तैलप्प, और नूरगडि तैल भी कहते थे (नूरगडि=दूसरा).

† आहवमल्ल=युद्ध में मल्ल समान.

‡ रणरंगभीम=रणखेत में भीम जैसा.

ध३ गंडूर (बंबई इहाते के धारवाड़ जिले में) गांव से मिले हुए कनड़ी भाषा के लेख से पाया जाता है, कि 'वर्तमान श० सं० ८६६ (गत श० सं० ८६५ = वि० सं० १०३० = ई० सं० ९७३) श्रीमुख संवत्सर के आपाठ मास में राठौड़ महाराजाधिराज ककलदेव (कर्कराज दूसरे) के राज्यसमय कुछ भूमि शिवमंदिर के अर्पण की गई थी' (इ० ऐं० जि० १२, पृ० २७१), अतएव उस समय तक राठौड़ कर्कराज (दूसरे) का राज्य करना निश्चित है. तैलप के वंशज विक्रमादित्य (छठे) के समय के श० सं० १०२० (वि० सं० ११५५ = ई० सं० १०६८) के गडग (धारवाड़ जिले में) गांव के लेख में, तथा उसी राजा के समय के कालिगे गांव के लेख में तैलप का श्रीमुख संवत्सर से प्रारंभ कर २४ वर्ष तक राज्य करना लिखा है (इ० ऐं० जि० २१, पृ० १६८). तैलप के राज्य समय के शिलालेख श० सं० ६०२, ६०४ और ६१६ (वि० सं० १०३७, १०३९ और १०५४ = ई० सं० ६८०, ६८२ और ६९७) के मिले हैं, और श० सं० ६२४ (वि० सं० १०५९ = ई० सं० १००२)

पराक्रम के कारण मानो कलियुग के चलते हुए दोनों पैर जैसे, क्रूर. शरीर के पुष्ट और गुरुजन के द्रोही थे। जैसे विष्णु ने वराह रूप धारण कर दैत्यों से पृथ्वी का उद्धार किया, वैसे उसने कुटिल राठौड़ों से सोलंकीराज्यलक्ष्मी का उद्धार कर उसे धारण किया*। शिलारा वंश के राजा अपराजितधृ के ताम्रपत्र में लिखा है, कि 'तैलपरूप प्रचंडपवन से राजा कक्कल (कर्कराज दूसरा) रूप दीपक की ज्योति बुझ गई, और राठौड़ों के महाराज्य की यादगार

में उसका पुत्र सत्याश्रय राज्य कर रहा था, ऐसा उसी के समय के लेख से निश्चित है (इ० ऐं० जि० १२, पृ० २१०, नं० ३१), अतएव तैलप के राज्य पाने का श्रीमुख संवत्सर श० सं० ८६५ (वि० सं० १०३० = ई० स० १७३) ही हो सकता है. उक्त संवत् के आषाढ मास तक राठौड़ कर्कराज (दूसरा) राजा था, इसलिये उक्त संवत् के श्रावण और चैत्रकृष्णऽऽ (पूर्णिमांत) के बीच किसी समय उस (तैलप) ने कर्कराज से राज्य छीना होगा.

* किं च राष्ट्रकूटकुलराज्यसंयद्भवुर्गौ । और्जित्याच्चरणधिव प्रचलितौ सा-
क्षात्कूलैः कामतः क्रूरौ बद्धशरीरकौ गुरुजनद्रोहप्ररोहाविव । राजाखंडितराष्ट्र-
कूटककुलश्रीवल्लिजातांक्रूरौ लूनौ येन सुखेन कर्कररणस्तंभौ रणप्रांगणे ॥
इत्थं पुरा दितिसुतैरिव भूतधार्त्री यो राष्ट्रकूटकुटिलैर्गमितामधस्तात् । उद्धृत्य मा-
धव इवादिवराहरूपो बभ्रे चलुक्ककुलवल्लभराजलक्ष्मीं ॥ (इ० ऐं० जि० ८,
पृ० १५). कलचुरि वंशी बिज्जल के राज्यसमय के तुंदुभि संवत्सर (श० सं०
१०६४ = वि० सं० ११६६ = ई० स० ११४२) के लेख में प्रसंगवशात् तैल
(दूसरे) का राष्ट्रकूट कर्कर (कर्कराज दूसरे) और रणकंभ (रणस्तंभ)
को नष्ट करना लिखा है. रणस्तंभ कर्कराज का पुत्र या कुटुंबी होना चाहिये,
क्योंकि उसको राठौड़ लिखा है.

धृ अपराजित राठौड़ों का सामंत था, जो उनसे राज्य छूटने पर स्वतंत्र सा-
बन गया था, उसने अपने ताम्रपत्र में राठौड़ दंतिदुर्ग के पूर्वज गोविंदराज (गो-
विंद) से लगाकर कक्कल (कर्कराज दूसरे) तक की राठौड़ों की पूरी वंशा-
वली दी है.

मात्र शेष रह गई*'. विक्रमांकदेवचरित में लिखा है, कि 'उसने राठौड़ों की, जो पृथ्वी पर कांटों के समान थे, जड़ उखाड़ कर सोलैंकियों की राज्यलक्ष्मी प्राप्त की १'.

गङ्गा के लेख से पाया जाता है, कि 'उसने मुंज को मारा और लड़ाई में पंचाल ३ का सिर काटा था' +. मुंज मालवे का परमार राजा था, जिसने तैलप पर चढ़ाई की थी, परन्तु उसमें वह मारा गया था. इस चढ़ाई का जो वृत्तान्त मेरुतुंगाचार्य ने 'प्रबन्धचिन्तामणि' × नामक पुस्तक में लिखा है उस का सारांश यह है, कि 'तिलिंग ÷ देश का राजा तैलप अपने पर चढ़ आता है, यह खबर सुन मुंज ने उसका सामना करने की इच्छा से प्रस्थान किया, उस समय उसके प्रधान रुद्रादित्य ने, जो रोगग्रस्त था, गोदावरी से आगे न बढ़ने की उस (मुंज)

* निरुपमनृपसूनु कवकलेशं नरेन्द्रं नरपतिकृतसेवं राजलक्ष्मीर्जगाम ॥ तस्मिन्नेन्द्रे नृपतिप्रदीपे प्रचण्डतैलपसमीरणेन । संप्रापिते ज्योतिः[रत्नं ?] विवृद्धे कथावभासे सति रट्टराज्ये ॥ (ए० इ० जि० ३, पृ० २७२; रट्ट = राठौड़).

१० विश्वभराकंटराष्ट्रकूटसमूलनिर्मूलनकोविदस्य । सुखेन यस्यास्तिकमाजगाम चालुक्यचन्द्रस्य चरेन्द्रलक्ष्मीः ॥ १ । ६६ ॥ (विक्रमांकदेवचरित).

३ गंगावंशी पंचाल राठौड़ों का सामंत था. उसके समय के श० सं० ८६३ (वि० सं० १०२८ = ई० स० ६७१) के लेख से पाया जाता है, कि वह राठौड़ खोड्गि के राज्यसमय ३० गांववाले 'सेड्वि' नामक प्रदेश (धारवाड़ जिले में) का शासन करता था, उक्त संवत् से दो वर्ष बाद तैलप ने कर्कराज का राज्य छीना उस समय की लड़ाई में वह तैलप के हाथ से मारा गया होगा.

+ इ० ऐ० जि० २१, पृ० १६८.

× 'प्रबन्धचिन्तामणि' वि० सं० १३६१ (ई० स० १३०४) में बनी थी.

+ तिलिंग = तैलंगाण ; तिलंगाना (कर्णाटक से उत्तर पश्चिम का देश). 'प्रबन्धचिन्तामणि' में तैलप को कहीं तिलिंग देश का और कहीं कर्णाटक का राजा लिखा है ('तिलिङ्गदेशीयराज्ञो श्रीतैलपदेवनाम्ना । पृ० ५८;

से प्रतिज्ञा कराली, तथापि उसने पहिले छः बार तैलप को जीता था, जिससे घमंड में आकर वह रुद्रादित्य की सलाह के विरुद्ध गोदावरी को पार कर आगे बढ़ा, जहाँपर तैलप ने छल बल से उसके सैन्य को जीत उसे पकड़ लिया, और अपने यहाँ लेजाकर काष्ठ के पींजरे में कैद कर, अपनी बहिन मृणालवती को उसकी परिचर्या में नियुक्त किया, जिसके साथ उस (मुंज) का प्रेमबन्धन हो गया. मुंज के प्रधानों ने आकर उसके रहने के स्थान तक सुरंग खोदी, और अपने राजा को उस मार्ग से लेजाना चाहा. उस समय उसने मृणालवती को अपने साथ लेजाकर अपनी पट-राणी बनाने की इच्छा प्रकट की, परन्तु उसको यह संशय हुआ, कि मैं मध्यम वय की विधवा * हूँ इस वास्ते कदाचित् वह अपने राज्य में पहुँचने बाद मेरा परित्याग करदे, जिससे

यशःपुञ्जो मुञ्जो.....स कर्णाटेशेन स्वसचिवबुद्धयैव विधृतः कृतः शूलप्रोतः
...पृ० ६२).

* मुनिसुंदरसूरि के शिष्य शुभाशीलसूरि रचित 'भोजप्रबन्ध' में लिखा है, कि 'तैलप के पिता देवल राजा के सुंदरी नामक दासी से मृणालवती नामक बड़ी रूप-वती कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह तैलप ने श्रीपुर के राजा चंद्र से किया था. उस (चंद्र) के मरने पर वह अपने भाई (तैलप) के यहाँ आ रही और उसकी आज्ञा से मुंज के खानपानादि का प्रबन्ध करती थी' (इतस्तैलिपदेवस्य पित्रा देवलभूभुजा । पत्नीस्थाने कृता दासी सुन्दरीत्यभिधा पुरा ॥ ६६ . पुत्री मृणालवत्याह्वा सूते स्म सुन्दरी पराम् ।...॥ वत्ता तैलिपदेवेन श्रीपुरे चन्द्रभूपतेः ॥ ७१ ॥ चन्द्रोऽन्यदागमच्छूलरोगेण यममन्दिरम् । सापि तैलिपदेवस्य आतुर्गेह-मुपागमत् ॥ ७२ ॥ स्वसा तैलिपदेवस्य रण्डा मृणालवत्यथ । भुक्तपानादि मुञ्जस्य चक्रे आतृनिदेशतः ॥ ७३ ॥...बंबई की छपी हुई प्रबन्धाचिन्तामणि, पृ० ३३८-३३९). इससे पाया जाता है, कि मृणालवती तैलप की सगी बहिन नहीं, किन्तु एक दासी की पुत्री थी. उक्त पुस्तक में तैलप के पिता का नाम देवल लिखा

उसने कहा, कि मैं अपने आभूषणों का डिब्बा लेकर आती हूँ इतने तक ठहरना. ऐसा कह कर वह अपने भाई के पास पहुँची और सारा हाल उससे कह दिया, जिसपर उसने मुंज के साथ कठोरता का बर्ताव किया, और उसे सारे शहर में फिराकर घर घर भीख मंगवाने बाद सूली पर चढ़वा दिया*'. यह वृत्तान्त आतिशयोक्ति तथा उपहास्य की दृष्टि से लिखा गया हो ऐसा संभव है, तथापि उसमें इतनी सत्यता अवश्य है, कि मुंज तैलप के साथ की लड़ाई में हारा और अपनी राजधानी को लौटने नहीं पाया था, चाहे वह लड़ाई में मारा गया हो, या कैद होने बाद मार डाला गया हो. यह घटना वि० सं० १०५० (ई० स० ६६३) और १०५४ (ई० स० ६६७) के बीच + किसी समय हुई थी.

है, परन्तु उपर्युक्त येवूर के लेखादि में उसका नाम विक्रमादित्य मिलता है, जो अधिक विश्वास योग्य है (शायद देवल उसका उपनाम हो).

* प्रबंधचिन्तामणि (बंबई की छपी हुई) पृ० ५८-६३.

श्री मालवा के परमारों के शिलालेखादि में तथा मुंज के देहान्त के बाद सिंधुराज के समय पद्मगुप्त (परिमल) कवि ने 'नवसाहसार्कचरित' काव्य रचा उसमें मुंज के इस पराजय का उल्लेख नहीं किया, जिसका कारण यही है, कि परमारों ने अपना अपयश छिपाया है. परन्तु मुंज के हारने में कोई शंका नहीं है. यादव वंशी भिल्लम (दूसरा), जो तैलप का सामन्त होने के कारण उस के और मुंज के बीच की लड़ाई में शामिल था, अपने ताम्रपत्र में लिखता है, कि 'प्रचण्ड तलवार से उस (भिल्लम) ने रणक्षेत्र में मुंज की प्रियलक्ष्मी को नष्ट कर रणरंगभीम (तैलप) के भवन में उस (लक्ष्मी) को कुलस्त्री बना दी, अर्थात् स्थिर कर दी (स्वेनारातिकरालकालरचनाचण्डासिदण्डेन यो हत्वा मुंजमहानृपप्रणयिनीं संग्रामरंगांगणे । लक्ष्मीमम्बुधिमेखलावलयित-क्षमावर्तिनीम्प्रापयद्भूपश्रीरणरंगभीमभबने साक्षात्कुलस्त्रीव्रतम् ॥ पृ० इ० जि० २, पृ० २१८).

+ वि० सं० १०५० (ई० स० ६६३) में जैन साधु अमितगति ने

तैलप के पौत्र जयसिंह के समय के एक कन्नड़ी भाषा के लेख * में उस (तैलप) का चोल देश के राजा को परास्त करना, और उपर्युक्त को थूम के ताम्रपत्र में हूण, मालव † तथा चेदी के राजाओं को जीतना लिखा है. प्रबन्धचिन्तामणि का कर्त्ता यह भी लिखता है, कि 'गुजरात के सोलंकी राजा मूलराज पर सपादलक्ष्मीय (चौहान) राजा (विग्रहराज दूसरे) ने चढ़ाई की, उसी मौके पर तैलंगण देश के राजा (तैलप) के सेनापति बारप ने भी उस पर चढ़ाई की, परन्तु उसमें वह मारा गया, और उसके घोड़े और हाथी मूलराज ने छीन लिये' +. बारप भी सोलंकी था और मूलराज के समय वह दक्षिणी गुजरात अर्थात् लाट देश का स्वामी था, इसलिये उसका और उसके वंशजों का विशेष वृत्तान्त गुजरात के सोलंकियों के साथ लिखा जायेगा.

तैलप की राजधानी कौनसा नगर था इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता. उसके वंशज सोमेश्वर के समय से पश्चिमी सोलंकियों की राजधानी कल्याणपुर × कायम हुई, जिसके पूर्व वे मान्यखेड (जो राठौड़ों की राजधानी थी) में रहते हों तो आश्चर्य नहीं, क्योंकि उस समय वह नगर बहुत सुन्दर और समृद्धिसंपन्न था.

'सुभाषितरत्नसंदोह' नागक ग्रंथ रत्ना उस समय मुंज राज्य कर रहा था (समारूढं पूतत्रिविवन्नसति विक्रमनृपे सहस्रे वर्षाणां प्रभवति हि पंचादशधिके (१०५०) । समाप्तं पंचम्यामवति धरणिं मुंजनृपतौ सिते पक्षे पौषे बुधहितमिदं शास्त्रमनघं ॥ सुभाषितरत्नसंदोह) और वि० सं० १०५४ (ई० स० ११७) में तैलप का देहान्त हुआ, अतएव उक्त दोनों संवत्तों के बीच उस घटना का होना निश्चित है.

* ई० ऐ० जि० ५, पृ० १७

‡ मालवा का राजा=मुंज.

+ प्रबन्धचिन्तामणि, पृ० ४०-४३.

× 'कल्याणपुर' या 'कल्याण' इस समय 'कल्याणी' नाम से प्रसिद्ध है, और निजाम के राज्य में है.

तैलप के राजत्वकाल के ५ शिलालेख * मिले हैं, जिनसे उसके निम्नलिखित सामंतों के नाम आदि का पता लगता है:-

रट्ट (राठौड़) कार्तवीर्य श० सं० ६०२ (वि० सं० १०३७ = ई० स० ६८०) में कुंडी १ प्रदेश का स्वामी था, अजयवर्मा को परास्त करने वाले विदडुग का पुत्र और पृथ्वीराम का पौत्र रट्ट (राठौड़) शांतिवर्मा श० सं० ६०२ (वि० सं० १०३७ = ई० स० ६८०) में, कन्नप का छोटा भाई और उत्तराधिकारी शोभनः श० सं० ६०४ + (वि० सं० १०३६ = ई० स० ६८२) में, नाग-

* सोगल (बेलगांव जिले में) से मिला हुआ कन्नड़ी भाषा का लेख श० सं० ६०२ (वि० सं० १०३७ = ई० स० ६८०) का, सौदत्ति (बेलगांव जिले में) का कन्नड़ी लेख श० सं० ६०२ का (बंब० ए० सो० ज० जि० १०, पृ० २०४), नीलगुड (धारवाड़ जिले में) का लेख श० सं० ६०४ (वि० सं० १०३६ = ई० स० ६८२) का (ए० ई० जि० ४, पृ० २०६-७), भैरनमट्टि (बीजापुर जिले में) का श० सं० ६११ (६१२ होना चाहिये, क्योंकि उसमें विकृति संवत्सर लिखा है, जो श० सं० ६१२ था; वि० सं० १०४७ = ई० स० ६६०) का (ए० ई० जि० ३, पृ० २३२-३४), और तालगंड (माहसोर राज्य में) का कन्नड़ी लेख श० सं० ६१६ वि० सं० १०५४ = ई० स० ६६७) का (माहसोर इन्स्क्रिप्शन्स, नं० ६६, पृ० १८६) है.

१ कुंडी प्रदेश = बंबई इलाके के बेलगांव जिले का कितनाक अंश.

२ शोभन (शोभनरस) - बेलवल प्रदेश (बेलगांव और धारवाड़ जिलों का कुछ कुछ अंश) का स्वामी था. वह तैलप के पुत्र सत्याश्रय के समय श० सं० ६२४ (वि० सं० १०५६ = ई० स० १००२) में भी विद्यमान था, ऐसा उक्त संवत् के लेख (ई० ई० जि० १२, पृ० २१०, नं० ३१) से पाया जाता है.

+ उक्त संवत् के लेख में तैलप का उत्पल को हरामा लिखा है. उत्पल या उत्पलराज मालवा के परमार राजा मुंज का दूसरा नाम था.

वंशी कम्मर (कम्मय्यरस) का पुत्र पुलिकाल श० सं० ६१२ (वि० सं० १०४७ = ई० स० ६६०) में, और भीमरस श० सं० ६१६ (वि० सं० १०५४ = ई० स० ६६७) में विद्यमान था. इन-के अतिरिक्त उपर्युक्त यादव वंशी भिखलम (दूसरा) भी, जो सेउणदेश * का स्वामी था, उसका सामंत था.

उस (तैलप) की राणी जाकव्वा, जिसको जक्कलदेवी भी कहते थे, राठौड़ राजा ब्रह्म १ की पुत्री थी, जिससे सत्याश्रय और दशवर्मा दो पुत्र उत्पन्न हुए थे. श० सं० ६१६ (वि० सं० १०५४ = ई० स० ६६७) में तैलप का देहान्त होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र सत्याश्रय सोलंकियों के राज्य का मालिक हुआ.

* सेउणदेश = यादव वंशी सेउणचंद्र (प्रथम) के आधीन का देश उक्त राजा के नाम पर से सेउणदेश कहलाया, जो देवगिरि (दौलताबाद) के राज्य का प्राचीन नाम है. देवगिरि के बसाये जाने बाद वही देश देवगिरि का राज्य कहलाने लगा (ततः स राजा निजराजधानीमधिष्ठितः श्रीनगरं गरीयः । लेभे सुतं सेउणचंद्रसंज्ञं यत्संज्ञया सेउणदेशमाहुः ॥ २२ ॥ हेमाद्रिरचित वृत्तखंड की प्रशस्ति).

१० ब्रह्मरट्टादभवत्भूपालाद्राष्ट्रकूटकुलतिलकात् । लक्ष्मीरिव सलिलनिधेः श्रीजा-कव्वाहया कन्या ॥ चालुक्यवंशावरभानुगाली श्रीतैलभूपाल उपायतैनाम् । तथोश्च लोकाभ्युदयाय योगः सच्चंद्रिकाचन्द्रमसोरिवासीत् ॥ (कौथूम के ताम्रपत्र रो-इ०पें० जि० १६, पृ० २३).

‡ श० सं० ८६५ (वि० सं० १०३० = ई० स० ६७३) में तैलप ने राज्य पाया, और २४ वर्ष राज्य किया, ऐसा सप्रमाण ऊपर लिख आये हैं, अतएव उसका देहान्त श० सं० ८९९ (वि० सं० १०५४ = ई० स० ६६७) में होना चाहिये.

सत्याश्रय.

सत्याश्रय * के विरुद्ध 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक', 'अकलंकचरित' और 'पृथिवीवल्लभ' मिलते हैं. विक्रमांकदेवचरित में लिखा है, कि 'वह धनुर्विद्या में निपुण और शत्रुओं का नाश करनेवाला था' †. चोल के राजाओं के लेखों से पाया जाता है, कि 'राजकेसरीवर्मा ने सत्याश्रय को हराया था ‡, परन्तु उसके विरुद्ध होट्टर+ गांव के लेख में यह लिखा मिलता है, कि 'जिस नूरमडि(मुम्मुडि)चोल x ने ६००००० सैन्य एकत्र कर सारे देश को बर्बाद किया, स्त्री, बालक और ब्राह्मणों को मारा, तथा कुंवारी लड़कियों को घर में डालकर उनको जातिभ्रष्ट किया, उसको सत्याश्रय ने हराया, और उसके भागने पर उसका द्रव्य और रथ छीनकर दक्षिण के देश विजय किये ‡. इन लेखों से उस (सत्याश्रय) का चोलवालों से लड़ना पाया जाता है. उसका देहांत श० सं० ६३० (वि० सं० १०६५ = ई०

* सत्याश्रय के स्थान पर सत्तिग और सत्तिग भी लिखा मिलता है. ये दोनों 'सत्याश्रय' नाम के लौकिक रूप होने चाहियें. उसके नाम के साथ कन्नड़ी भाषा का खिताब 'हरिवेडंग' कन्नड़ी लेखों में मिलता है, जिसका अर्थ 'शत्रुओं को नष्ट करनेवालों में श्रेष्ठ' होता है.

† विक्रमांकदेवचरित, सर्ग १, श्लोक ७४-७८.

‡ सा० ई० ई० जि० १, पृ० ५१, और लेख नंबर ४०, ४१ और ६६.

+ होट्टर = बंबई इलाते के धारवाड़ जिले के बंकापुर विभाग में.

x नूरमडि(मुम्मुडि)चोल, जिसको राजकेसरीवर्मा और राजराज (प्रथम) भी कहते थे, चोल देश के राजा परान्तक (परकेसरीवर्मा) दूसरे का पुत्र था, और उसने श० सं० ६०७ से ६३४ (वि० सं० १०४२ से १०६६ = ई० सा० ६८५ से १०१२) तक राज किया था.

‡ बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४३३.

सं० १००६) के अंत * के आस पास हुआ, और उसके पुत्र न होने के कारण उसके छोटे भाई दशवर्मा न का ज्येष्ठ पुत्र विक्रमादित्य उसका उत्तराधिकारी हुआ.

उत्त (सत्याश्रय) के राजत्वकाल के ७ लेख मिले हैं.

—:०:—

विक्रमादित्य (पांचवां).

विक्रमादित्य (पांचवें) के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक', 'त्रिभुवनमल्ल', और

* सत्याश्रय के सांगत दक्षिणी कोंकण के स्वामी शिलारावंशी रहराज का एक ताम्रपत्र श० सं० ९३० (वि० सं० १०६५=ई० स० १००८) कीलक संवत्सर ज्येष्ठ शु० १५ का मिला है, जिससे पाया जाता है, कि उक्त समय तक सत्याश्रय राज कर रहा था, और उसके उत्तराधिकारी विक्रमादित्य (पांचवें) के समय का उपरोक्त कौथूम का ताम्रपत्र श० सं० ९३० सौम्य संवत्सर पूर्णिमा और चंद्रग्रहण के दिन का है (महीने का नाग नहीं है). दक्षिणी बार्हस्पत्य गणना के अनुसार सौम्य संवत्सर श० सं० ९३१ (वि० सं० १०६६=ई० स० १००९) था, अतएव उक्त ताम्रपत्र का ठीक संवत् श० सं० ९३१ (वि० सं० १०६६) होना चाहिये. उक्त दोनों ताम्रपत्रों से सत्याश्रय का देहान्त, और विक्रमादित्य का राज्याभिषेक श० सं० ९३० (वि० सं० १०६५=ई० स० १००८) के अन्त के आस पास होना निश्चय होता है. यदि इसमें फर्क हो तो कुछ महीनों ही का होगा.

न कौथूम के ताम्रपत्र में दशवर्मा के स्थानपर यशोवर्मा लिखा है, परंतु उसके सिवाय सर्वत्र दशवर्मा ही पाठ मिलता है.

इन लेखों में सब से पहिला श० सं० ९२४ (वि० सं० १०५९=ई० स० १००२) का (इ० ऐं० जि० १२, पृ० २१०, नं० ३१) और सब से पिछला श० सं० ९३० (वि० सं० १०६५=ई० स० १००८) श्रावण शुक्ल पक्ष का (इ० ऐं० जि० १२, पृ० २१२, नं० ५२) मिला है. उस समय तक उसका विद्यमान होना निश्चित है.

‘वल्लभनरेन्द्र’ मिलते हैं. उसके राजत्वकाल के चार शिलालेख * और एक ताम्रपत्र मिला है, जिनमें उसका ऐतिहासिक घुत्तान्त विशेष नहीं है. उसकी माता का नाम भाग्यवती † था. उस (विक्रमादित्य) के पुत्र न होने के कारण उसका छोटा भाई जयसिंह ‡ उसका क्रमानुयायी बना.

* सूडि (धारवाड़ जिले में) का लेख श० सं० ६३२ (वि० सं० १०६७=ई० स० १०१०) का, आलूर (धारवाड़ जिले में) का श० सं० ६३२ (वि० सं० १०६७=ई० स० १०१०) का, गलगनाथ (धारवाड़ जिले में) का श० सं० ९३३ (वि० सं० १०६८=ई० स० १०११) का, और माहसोर राज्य के शिकारपुर तअल्लुके के करडीहल्ली स्थान का श० सं० ६३३ पौष शु० १३ (वि० सं० १०६८=ई० स० १०१२) का है (ए० क० जि० ७, पृ० २५६). कौथूम का दानपत्र श० सं० ६३१ (वि० सं० १०६६=ई० स० १००६) का है.

† भाग्यवती के स्थानपर भागलदेवी भी लिखा मिलता है.

‡ सोमेश्वर (दूसरे) के सामंत ब्रह्मक्षत्री उदयादित्य के श० सं० ६६७ (वि० ११३२=ई० स० १०७५) के कनडी लेख में (इ० ऐ० जि० ४, पृ० २०६; ए० क० जि० ७, पृ० १७७, नं० १३०, अंग्रेजी अनुवाद पृ० ६६), तथा उसी के एक दूसरे लेख में, जो विना संवत् का है (ए० क० जि० ७, पृ० १४६, नं० ११०, अंग्रेजी अनुवाद पृ० ८१) सोमेश्वर (दूसरे) के पूर्वजों की नागावली में विक्रमादित्य (पांचवें) के पीछे अय्यण का और उसके बाद जयसिंह (दूसरे), त्रैलोक्यमल्ल (सोमेश्वर प्रथम) और भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर दूसरे) के नाम हैं. इसी तरह विक्रमादित्य (छठे) के सामंत तथा सेनापति बर्मदेवरस (ब्रह्मदेवरस) के कनडी शिला लेख में भी, जो चालुक्यविक्रम संवत् २ (श० सं० ९६६ = वि० सं० ११३४ = ई० स० १०७८) माघ शु० १५ का है, विक्रमादित्य (पांचवें) के पीछे अय्यण का नाम है (ए० क० जि० ७, पृ० १८०, नं० १३५, अंग्रेजी अनुवाद पृ० १०१), परन्तु सोलंकियों के लेखों में न तो कहीं उस (अय्यण) का नाम मिलता है और न

विक्रमादित्य की
बहिन अक्कादेवी

विक्रमादित्य (पांचवें) की बहिन अक्कादेवी वीर-
प्रकृति की और राजकार्यनिपुण स्त्री थी. उसका
विवाह किसी कदंबवंशी सामन्त से हुआ था, जिसका नाम मा-
लूम नहीं हो सका. बेलूर * से मिले हुए श० सं० ६४४ (वि०
सं० १०७६=ई० स० १०२२) के कन्नड़ी भाषा के लेख से पाया
जाता है, कि उक्त संवत् में वह अपने छोटे भाई जयसिंह के
राज्य समय 'किसुकाड़ सप्तति' † प्रदेश का शासन कर रही थी.
वह सद्गुणी, एक वचनवाली, युद्धक्षेत्र में शत्रुराजाओं को
मारने में भैरवी समान और जैन, बौद्ध, वैष्णव तथा शैव मतों
का आदर करनेवाली थी. उसने अपने बड़े भाई विक्रमादित्य

उसका राजा होना लिखा है, इसीसे हमने भी उसका नाम राजाओं की नामा-
वली में दर्ज नहीं किया, परन्तु जिन लेखों में उसका नाम मिला है वे विक्रमा-
दित्य (पांचवें) के देहान्त से ७५ वर्ष के अन्दर के हैं, इसलिये उनमें दिया
हुआ नाम अविश्वसनीय भी नहीं माना जा सकता. विक्रमादित्य (पांचवें) का
सब से पिछला लेख श० सं० ६३३ (वि० सं० १०६८=ई० स० १०१२)
पौष शु० १३ का और जयसिंह (दूसरे) का सब से पहिला श० सं० ६३८
(वि० सं० १०७३=ई० स० १०१६) का अबतक मिला है, और उक्त
दोनों संवत्तों के बीच के समय में किसने कबतक राज्य किया इसका ठीक ठीक
निर्णय करने के लिये इस समय तक योग्य साधन उपलब्ध नहीं हुए हैं. उक्त
समय में कुछ अरसे तक शायद उस (अय्यण) ने भी राज्य किया हो. प्रा-
चीन लेखों में बहुत थोड़े समय तक राज्य करनेवाले का नाम कभी कभी छोड़ भी
दिया जाता है, यदि उस (अय्यण) के लिये भी वैसा ही हुआ हो तो आश्चर्य
नहीं. उस का विक्रमादित्य (पांचवें) के साथ क्या संबंध था इस विषय में कुछ
भी लिखा हुआ नहीं मिलता, परन्तु संभव है, कि वह (अय्यण) उस (वि-
क्रममादित्य पांचवे) का पुत्र अथवा छोटा भाई हो.

* बेलूर = बंबई इलाते के बादामी तअल्लुके में.

† किसुकाड़ सप्तति = ७० गांवों का किसुकाड़ प्रदेश (बादामी तअल्लुके में).

(पांचवें) के स्मरणार्थ एक गांव दान किया और एक मंडप बनवाया था * दूसरे लेखों से यह भी पाया जाता है, कि एक समय उसने गोकामे न के किले पर घेरा डाला था, और उपर्युक्त 'किसुकाड़ सप्तति' के अतिरिक्त तीन और प्रदेश भी उसके अधिकार में थे. उसकी जागीर का मुख्य स्थान विक्रमपुर (बिजापुर जिले में) था ‡ श० सं० ६७५ (वि० सं० १११० = ई० स० १०५३) तक उसके शासन करने का पता चलता है. उसका पुत्र महामण्डलेश्वर कादंब (कदंबवंशी) तोयिमदेव श० सं० ६८८ (वि० सं० ११२३ = ई० स० १०६६) में बनवासी और पानुंगल † प्रदेशों पर शासन करता था.

* इ० ऐ० जि० १८, पृ० २७४-७५.

न० गोकामे = गोकाम (बेलगांव जिले में).

‡ बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४३५.

+ पानुंगल = धारवाड़ जिले में है, और इस समय 'हांगल' नाम से प्रसिद्ध है.

प्रकरण छठा.

जयसिंह (दूसरा).

जयसिंह के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'जगदेकमल्ल' मिलते हैं. उसका राज्याभिषेक कब * हुआ इसका ठीक पता नहीं चलता. उसके राज्य समय के शक सं० ६४१ (वि० सं० १०७६ = ई० सं० १०१६) पौष कृष्ण २ के लेख में लिखा है, कि 'राजाध्यों के राजा जयसिंह ने, जो भोजरूप कमल के वास्ते चंद्र और राजेन्द्र-चोलरूप † हाथी के लिये सिंह समान था, मालवावालों के

* विक्रमादित्य (पांचवें) के समय के लेखों में सब से पहिला शक सं० ६३३ (वि० सं० १०६८ = ई० सं० १०१२) पौष शुक्ल १३ का, (ए० क० जि० ७, पृ० २५६, नं० २८७) और जयसिंह का सब से पहिला श० सं० ६३८ (वि० सं० १०७३ = ई० सं० १०१६) का (ए० क० जि० ७, पृ० २६५) है, अतएव इन दोनों संवत्तों के बीच किसी समय विक्रमादित्य का देहान्त और जयसिंह का राज्याभिषेक होना चाहिये.

† राजेन्द्रचोल, जिसको परकेसरीवर्मा भी कहते थे, चोलदेश के उपर्युक्त राजा राजराज (राजकेसरीवर्मा—मुम्मुडिचोल) का पुत्र था, और श० सं० ६३४ (वि० सं० १०६९ = ई० सं० १०१२) में चोल देश के राज्यसिंहासन पर बैठा था. उस के राज्यवर्ष ६ वें अर्थात् श० सं० ६४२ (वि० सं० १०७७ = ई० सं० १०२०) के लेख में लिखा है, कि उसने मुशंगी के युद्ध में जयसिंह को हराया और उसका इलट्टपाडि (रट्टपाटि) प्रदेश छीन लिया था (सा० इ० इ० जि० ३ पृ० २६). इस प्रकार दोनों पक्षवाले अपनी अपनी विजय होना प्रकट करते हैं.

संमिलित सैन्य का पराजय किया और चेर * तथा चोलवालों को सजा दी †; परंतु मालवा के परमार राजा भोज के वंशज उदयादित्य के समय के उदयपुर (ग्वालियर में) के शिलालेख में भोज को कर्णाटक के (सोलंकी) राजा का जीतनेवाला ‡ लिखा है. इस प्रकार दोनों पक्षवाले अपनी २ जय होना बतलाते हैं, परन्तु विजय भोज को प्राप्त हुई हो यह अधिक संभव है, क्योंकि जयसिंह के देहान्त के बाद उसके पुत्र सोमेश्वर ने भोज पर चढ़ाई की थी, जिसका कारण शायद उस (भोज)से बदला + लेना ही हो. 'भोजचरित्र' में लिखा है ×, कि 'जब भोज जवान हुआ और अपने राज्य का प्रबन्ध करने लगा, उन दिनों उसके सन्मुख एक अभिनय (नाटक) हुआ, जिसमें मुंज के मारे जाने का दृश्य बतलाया गया, जिसपर उसने उस (मुंज) का बदला लेने की इच्छा से बड़ी सेना के साथ दक्षिण पर चढ़ाई की, और तैलप को पकड़ कर, मुंज के साथ जैसा बर्ताव उसने किया था वैसा ही बर्ताव उसके साथ करने बाद उसका शिरच्छेद किया'. मुंज के मारे जाने

* चेर = गंगवाड़ी (माइसूर राज्य में).

† इ० ऐ०. जि० ५, पृ० १७.

‡ चेदीश्वरेंद्ररथतोगलभीगमुख्यान्कर्णाटलाटपतिगूर्जरराट्पुरुषान् । यद्भृत्यमात्रविजितानवलोक्य मौला दोष्णां नलानि कलयन्ति न योद्धूलोकान् (ए० इ० जि० १, पृ० २३५).

+ विक्रमाङ्कदेवचरित में जयसिंह का भोज को विजय करना नहीं लिखा, परंतु उस (भोज) को विजय करना सोमेश्वर के लिये यश का काम माना है, जिससे भी यही अनुमान होता है, कि जयसिंह उसको जीत न सका हो (ध्रुव रणे यस्य जयामृतेन क्षीवः क्षमाभर्तुरभूत्कृपाणः । एका गृहीता यदनेन धारा धारासहस्रं यशसोवकीर्णम् ॥ विक्र० चरित० १ । १६-सोमेश्वर के वर्णन में).

× भोजचरित्र १ । ५०-५६. बंय० गै० जि० १, भा० २, पृ० २१४.

बाद तैलप शीघ्र ही मर गया था, और उस समय भोज बालक था (मुंज ने अपने जीते जी अपने छोटे भाई सिंधुराज के पुत्र भोज को अपना उत्तराधिकारी नियत कर दिया था, परंतु उसके मारे जाने के समय उस [भोज] की बाल्यावस्था के कारण उसका पिता सिंधुराज * राज्यसिंहासन पर बैठा, जिसके पीछे उसको राज्य मिला था), अतएव भोज तैलप का शिरच्छेद करने को

* बल्लाल पंडित रचित 'भोजप्रबंध' में लिखा है कि 'सिंधुल (सिंधुराज) ने अपने अंत समय अपने बालक पुत्र भोज को अपने छोटे भाई मुंज के सुपुर्द कर उसकी रक्षा का भार उस (मुंज) पर छोड़ा, जिसने राज्य के लोभ से उस को मारना चाहा'... इत्यादि. यही बात हिन्दी भाषा के पुस्तकों में भी लिखी मिलती है, परन्तु सर्वथा निर्मूल है. बल्लाल पंडित भोज के इतिहास से बिल्कुल ही परिचित न था, जिससे उसने उक्त पुस्तक में अनेक ऊटपटांग बातें लिख दी हैं. नागपुर से मिले हुए वि० सं० ११६१ (ई० सं० ११०४) के लेख में स्पष्ट लिखा है, कि 'वैरिसिंह के पुत्र सीयक (श्रीहर्ष) के पीछे उसके पुत्र मुंज (वाक्पतिराज) ने राज्य पाया, जिसके बाद उसका छोटा भाई सिंधुराज और उसके पीछे उसका पुत्र भोज राजा हुआ (वंशेस्मिन्वैरिसिंहः क्षितिपतिः भवद्वूरि-भूतिप्रभावः... । तस्माद्वैरिः... श्रीसीयकोभूतृपः ॥ तस्माद्वैरिवरूथिनीबहुविधप्रारब्धयुद्धाध्वरप्रध्वंसैकपिनाकपाणिरजनि श्रीमुञ्जराजो नृपः । ... । तस्यासीदथ पार्थिवः पृथुयशः श्रीसिन्धुराजोनुजः । ... ॥ तत्सूनुर्भुवनैकभूषणमभूद्रूपालचूडामणि-च्छायाडम्बरचुम्बितांक्षिकमलः श्रीभोजदेवो नृपः ॥ ए० ई० जि० २, पृ० १८३-८५). उपर्युक्त उदयादित्य के लेख में राजक्रम इस प्रकार दिया है:-वैरिसिंह का पुत्र श्रीहर्ष (सीयक), उसका वाक्पति (मुंज), और उसके पीछे उसका छोटा भाई सिंधुराज हुआ, जिसका पुत्र भोज था (ए० ई० जि० १, पृ० २३५). सिंधुराज के ही राज्यसमय परिमल (पद्मगुप्त) कवि ने 'नवसाहस्रानकचरित' नामक सिंधुराज के विषय का जो काव्य रचा उसमें लिखा है, कि वैरिसिंह का पुत्र सीयक हुआ, जिसका बड़ा बेटा वाक्पतिराज, और छोटा सिंधुराज था. धनपाल कवि ने, जो मुंज, सिंधुराज और भोज इन तीनों के समय विद्यमान था,

समर्थ हुआ हो यह सर्वथा असंभव है, परंतु उसने मुंज का बदला लेने की इच्छा से जयसिंह पर चढ़ाई कर उसको मारा हो यह संभावित है, क्योंकि विक्रमाङ्कदेवचरित से भी पाया जाता है, कि वह (जयसिंह) युद्ध में मारा * गया था. राजेन्द्रचोल को जीतना, जो उक्त लेख में लिखा है उसकी पुष्टि अन्य लेखों से भी होती है, परंतु वह उसको अपने आधीन कर सका हो ऐसा नहीं पाया जाता, क्योंकि राजेन्द्रचोल (प्रथम) के लेखों में उसका जयसिंह को हराकर उससे रटपाटी देश छीनना

भोज के राज्य समय 'तिलकमंजरी' नामक गद्य काव्य रचा, जिसमें वह लिखता है, कि 'परमार वंश में वैरिसिंह राजा हुआ, जिसका पुत्र सीयक श्रीहर्ष नाम से प्रसिद्ध था; उसके बड़े बेटे वाक्पतिराज ने, जो मुंज नाम से विख्यात था, अपने छोटे भाई सिंधुराज के पुत्र भोज पर प्रीति होने के कारण उस (भोज) को अपने राज्य पर अभिषिक्त कर दिया था' (श्रीवैरिसिंह इति दुर्धरसैन्यदन्तिदन्ताभिन्नचतुर्णवकूलाभित्तिः ॥ ४० ॥ तत्राभूद्वसतिः श्रियामपरया श्रीहर्ष इत्याख्यया विख्यातश्चतुरंबुराशिरसनादाम्नः प्रशास्ता भुवः । भूपः खर्वितवैरिगर्वगरिमा श्रीसीयकः सायकाः पञ्चेपोरिव यस्य पौरुषगुणाः केषां न लग्ना हृदि ॥ ४१ ॥ तस्योदग्रयशाः समस्तसुभटप्रमाप्रगामी सुतः सिंहो दुर्धरशक्रसिन्धुरततेः श्रीसिन्धुराजोऽभवत् । एकाधिज्यचतुर्जिताब्धिवलयवच्छिन्नभूर्यस्य स श्रीमद्वाक्पतिराजदेवनृपतिर्वीराग्रणीरग्रजः ॥ ४२ ॥ आकीर्णाब्धितलः सरोजकलशच्छत्रादिभिलाब्धनैस्तस्याजायत मांसलायतभुजः श्रीभोज इत्यात्मजः । प्रीत्या योग्य इति प्रतापवसतिः ख्यातेन मुञ्जाख्यया यः स्वे वाक्पतिराजभूमिपतिना राज्येऽभिषिक्तः स्वयम् ॥ ४३ ॥). इन प्रमाणों से बल्लाल पंडित का लिखना निर्मूल सिद्ध होता है.

* यशोवर्तसं नगरं सुराणां कुर्वन्नगर्वः समरोत्सवेषु । न्यस्तां स्वहस्तेन पुरंदरस्य यः पारिजातस्रजमाससाद (विक्र० च० स० १, श्लो० ८६), सुरपुर को समरोत्सव के यश से भूषित करना और स्वयं इंद्र के हाथ से पारिजात की माला प्राप्त करना लिखा है, जो युद्ध में मारा जाना ही प्रकट करता है.

लिखा * है, और जयसिंह के वंशज भी बराबर चोलवालों से लड़ते रहे थे, जिससे भी ऊपर का अनुमान दृढ़ होता है.

उस (जयसिंह) के समय के श० सं० ६४६ (वि० सं० १०८१ = ई० सं० १०२४) वैशाख शु० १५ के उपर्युक्त मीरज के ताम्रपत्र † से पाया जाता है, कि 'द्रमिल ‡ देश के बलवान् चोल राजा को विजय करने और सप्तकोंकण + के राजा का सर्व-स्व छीनने के पश्चात् उत्तर के देशों को विजय करने के लिये जाते हुए जयसिंह के विजय कटक का निवास उस दिन कोल्हापुर में था' X.

उसकी राणी का नाम सगलदेवी था, जिससे सोमेश्वर, और अवल्लदेवी नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका दूसरा नाम हाम्मा था. उसका विवाह सेउण देश के राजा भिल्लम ÷ (तीसरे) से हुआ था.

उसके राज्य समय के ३० से अधिक लेख और एक ताम्रपत्र मिलता है, परन्तु ऊपर जो ऐतिहासिक वृत्तान्त उद्धृत किया है उससे अधिक उनमें कुछ भी नहीं है, अतएव उनमें उसके

* सा० इ० इ० जि० १, पृ० ६५.

† इ० ऐ० जि० ८, पृ० ११-२१.

‡ द्रमिलदेश = द्रविड़देश.

+ सप्तकोंकण = सात विभागों से बना हुआ कोंकण देश.

X द्रमिलाधिपति बलवंत चोल निर्घात सप्तकोंकणाधीश्वराणां सर्वस्वं गृहीत्वा उत्तरदिग्विजयार्थं कोल्हापुरसमीपसमावासितनिजविजयस्कंधावारे..... (इ० ऐ० जि० ८, पृ० १८).

÷ यस्याधीगनिषक्तसुंदरतनुः प्रत्यक्षलक्ष्मीगुणा हाम्मा श्रीजयसिंहदेवदुहिता अवल्लदेवी सती । या चात्राहवमल्लदेवभगिनी चालुक्यवंशान्वया श्रेष्ठा कायविशेष-कारणपदे सद्धर्मपत्नी क्षितौ ॥ (भिल्लम तीसरे के पुत्र सेउणचंद्र के ताम्रपत्र से-इ० ऐ० जि० १२, पृ० १२०).

कितनेक सामंतों के नाम मिल आते हैं. उन (लेखों) में से सब से पहिला * श० सं० ६३८ (वि० सं० १०७३=ई० स० १०१६) का, और सब से पिछला श० सं० ६६४ (वि० सं० १०६६=ई० स० १०४२) के कार्तिक मास का है †. उसके पीछे उसका पुत्र सोमेश्वर (आहवमल्ल) उसके राज्य का स्वामी हुआ.

सोमेश्वर (आहवमल्ल).

सोमेश्वर ‡ के विरुद्ध 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परम-भट्टारक', 'समस्तभुवनाश्रय', 'पृथिवीवल्लभ', 'आहवमल्ल' + और 'त्रैलोक्यमल्ल' मिलते हैं. विक्रमांकदेवचरित में लिखा है, कि "उसने चोल के राजा को विजय किया, धारा नगरी पर हमला कर उसे ले लिया और परमार राजा भोज को वहां से

* माहसोर इन्स्क्रिप्शन्स, पृ० १६६, नं० ८०.

† बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४३६.

‡ जयसिंह (दूसरे) के लेखों में सब से पिछला श० सं० ६६४ (वि० सं० १०६६=ई० स० १०४२) के कार्तिक मास का (बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४३६) और सोमेश्वर के लेखों में से सब से पहिला श० सं० ६६६ (वि० सं० ११०१=ई० स० १०४४) के पौष शुक्ल का है, अतएव इन दोनों वर्षों के बीच अर्थात् श० सं० ६६५ (वि० सं० ११००=ई० स० १०४३) के आस पास जयसिंह का देहान्त और सोमेश्वर का राज्याभिषेक होना चाहिये.

+ बिल्हण कवि सोमेश्वर (प्रथम) को सर्वत्र आहवमल्ल ही लिखता है, जो उसका वीरत्वसूचक विरुद्ध था. उसके पीछे सोमेश्वर (दूसरे) ने राज पाया, जिस को वह सोमेश्वर लिखता है. सोमेश्वर नाम के दो राजा एक दूसरे के बाद हुए, इसी से बिल्हण ने प्रथम का उसके मुख्य विरुद्ध से ही परिचय दिया है, परन्तु शिलालेखों में सोमेश्वर नाम ही विशेष मिलता है.

भगाया, डाहल * के राजा कर्ण † को हराया, समुद्रतट पर जयस्तंभ स्थापन किया, बाहुबल के अभिमान के कारण लड़ने को आने वाले द्रविड़ देश के राजा को परास्त किया और चोल ‡ देश की राजधानी कांचीपुरी को छीनकर वहाँ के राजा को जंगल में भगाया. उसको सर्व प्रकार का सुख होने पर भी बहुत समय तक पुत्रसुख + देखने का सुख न मिला, इस पर

* डाहल = चेदी देश.

† कर्ण = चेदी देश के राजा गांगेयदेव का पुत्र और यशःकर्ण का पिता था. यह राजा बड़ा पराक्रमी था.

‡ बिल्हण पंडित यहां पर द्रविड़ और चोल के दो भिन्न राजा होना लिखता है, परन्तु वह अपने काव्य में द्रविड़ और चोल ये शब्द एक ही के पर्याय हों इस तरह उनका प्रयोग करता है.

+ बिल्हण पंडित का लिखना है, कि आहवमल्ल (सोमेश्वर) के राज्य पाने बाद अरसे तक कोई पुत्र नहीं हुआ था, परन्तु हम उस कथन को विश्वास योग्य नहीं मान सकते, क्योंकि वि० सं० ११०० (ई० स० १०४३) के आसपास उसने राज्य पाया, और श० सं० ८६० (वि० सं० ११२५ = ई० स० १०६८) अमांत (दक्षिणी) चैत्र कृष्ण (उत्तरी या पूर्णिमांत बैशाख कृष्ण) = को उसका देहान्त हुआ था, अतएव उसने २५ वर्ष के करीब राज्य किया था; इसलिये यदि बिल्हण पंडित का लिखना यथार्थ हो तो उसके देहान्त के समय उसके तीनों पुत्र (सोमेश्वर, विक्रमादित्य और जयसिंह) बालक होने चाहियें, परन्तु चोलदेश के राजा राजाधिराज (प्रथम) के राज्यवर्ष २६ वें अर्थात् श० सं० ८६८ (वि० सं० ११०३ = ई० स० १०४६) के लेख से पाया जाता है, कि उक्त संवत् से कुछ पूर्व वह आहवमल्ल (सोमेश्वर) से लड़ा था, और उस युद्ध में विक्रि (विक्रमादित्य) शामिल था (सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ५६). चोल के राजा धीरराजेन्द्र के राज्यवर्ष चौथे, अर्थात् वि० सं० ११२३ (ई० स० १०६६) के आसपास के लेख से पाया जाता है, कि उक्त संवत् के पूर्व वह कुडलसंगमम् नामक स्थान में आहवमल्ल

वह राज्य का भार अपने मंत्रियों पर डालकर अपनी राणी सहित उग्र तप में लगा, तो शिव की कृपा से उसके तीन पुत्र सोमेश्वर, विक्रमादित्य और जयसिंह हुए. उनके बड़े होने पर विक्रमादित्य शस्त्रविद्या और शास्त्र में सबसे निपुण होने के कारण अपने पिता का अधिक प्रीतिपात्र बना. उसके विद्यादि गुणों से प्रसन्न होकर आहवमल्ल (सोमेश्वर) ने उसको युवराज पद देना चाहा, परन्तु उसने अपने बड़े भाई सोमेश्वर को राज्य का हकदार समझ उस पद को स्वी न किया, तब उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र सोमेश्वर को युवराज बनाया, और विक्रमादित्य अपने पिता की आज्ञा से शत्रुओं को दबाने के लिये चला. प्रथम उसने चोल के राजा को परास्त कर कांचीनगर लूटा, मालवे का राजा * अपना गया हुआ राज्य पीछा प्राप्त करने

(सोमेश्वर) से लड़ा था और उस युद्ध में उसके दो पुत्र विक्रल (विक्रमादित्य) और सिंगन (जयसिंह) शरीर थे, इन लेखों से पाया जाता है, कि वि० सं० ११०३ (ई० सं० १०४६) के पूर्व उसका दूसरा पुत्र विक्रमादित्य रण खेत में जाने की अवस्था को पहुँच चुका था, और वि० सं० ११२३ (ई० सं० १०६६) के पूर्व उसका तीसरा पुत्र जयसिंह भी लड़ाइयों में जाने योग्य अवस्था का हो चुका था, इसलिये आहवमल्ल (सोमेश्वर) के राज्य पाने से पहिले सोमेश्वर और विक्रमादित्य का जन्म होना चाहिये; यदि जयसिंह का जन्म उसके राज्य पाने बाद हुआ हो तो आश्चर्य नहीं, परन्तु वह भी अधिक समय पीछे नहीं. उक्त लेखों से यह भी अनुमान होता है, कि आहवमल्ल (सोमेश्वर) ने राज्य पाया उस समय उसकी अवस्था कम से कम ४० वर्ष के करीब और देहान्त समय ६० वर्ष से अधिक होनी चाहिये.

* मालवे का राजा परमार जयसिंह होना चाहिये, जो राजा भोज के देहान्त के बाद धारा नगरी की गद्दी पर बैठा था, परन्तु उस समय उसका राज्य शत्रुओं की सेना से घिरा हुआ था, जिसको वह हटा न सका, जिससे उसके कुटुंबी उदयादित्य ने उससे राज्य छीन लिया था; अतएव संभव है, कि जयसिंह

की आशा से मदद लेने को आया, जिसकी सहायता की, गौड़ * तथा कामरूप † पर आक्रमण किया, सिंहल के राजा को हराकर अगस्त्याश्रम को भगाया, मलयाचल के चंदनवन को नष्ट कर केरल के राजा को मारा, और गंगकुंड ‡, वेंगी + तथा चक्रकोट x को विजय किया. इस प्रकार विजय प्राप्त कर लौटता हुआ कृष्ण नदी के तट पर पहुंचा, जहां पर दूतने आकर खबर दी, कि 'आपने चोल, पाण्ड्य और सिंहल के राजाओं को विजय किया, जिसकी खबर सुनकर महाराज (आप के पिता) अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु पीछे से उनको एकाएक दाह ज्वर

अपना गया हुआ राज्य पीछा प्राप्त करने की आशा से मदद लेने के लिये कल्याण गया हो, परन्तु वह उदयादित्य को निकाल कर मालवे का राज्य पीछा प्राप्त करने को समर्थ हुआ हो ऐसा पाया नहीं जाता, क्योंकि जयसिंह का एक ताम्रपत्र वि० सं० १११२ (ई० स० १०५५) का मिला है, और उदयादित्य वि० सं० १११६ (ई० स० १०५९) में राज्य करता था ऐसा उदयपुर (ग्वालियर में) के एक लेख से पाया जाता है, इसलिये उक्त दोनों संवत्‌ों के बीच किसी समय जयसिंह ने सोमेश्वर से मदद चाही हो.

* गौड़ = बंगाल.

† कामरूप = आसाम.

‡ गंगकुंड = चोल देश का एक नगर (मद्रास इहाते के ट्रिचिनोपोली विभाग में), जिसको 'गंगकुंड चोलपुरम्' और 'गंगापुरी' भी कहते थे, और किसी समय वह चोलदेश की राजधानी भी रहा था.

+ वेंगी = पूर्वी सोलंकियों की राजधानी.

x चक्रकोट का ठीक ठीक पता नहीं लगा, परन्तु पूर्वी सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोडदे (प्रथम) के लेख में लिखा है, कि 'उसने धारा के राजा को चक्रकोट के पास जीता था'. इससे अनुमान होता है, कि चक्रकोट शायद मालवे के किसी किले वा स्थान का नाम हो.

चढ़ा, जिससे नैरोग्य होने की कोई आशा न देख दक्षिण की गंगा समान तुंगभद्रा नदी में जलसमाधि लेना निश्चय कर वे मंत्रियों की संमति से वहां जाकर शिव की आराधना करते करते 'जलनिमग्न * होकर परलोक को सिधार गये'. यह खबर सुनते ही वह शोकसागर में डूब गया, और वहां से प्रस्थान कर अपने बड़े भाई के पास कल्याण में आया १०".

येवूर के शिलालेख में उसका मालव, चोल और कन्या कुब्ज (कन्नौज) के राजाओं को भयभीत करना लिखा है ११,

* आत्मघात करना पाप माना जाता है, परन्तु कितने एक राजाओं के गंगा-दि पवित्र नदियों में डूब मरने अथवा अग्नि में जल मरने के उदाहरण मिल आते हैं. बंगाल का सेनवंशी राजा बल्लालसेन (अद्भुतसागर पृ० ३, हस्तलिखित पुस्तक) और चंदेलराजा यशोवर्मा का पुत्र धंगदेव (ए० इ० जि० १, पृ० १४६ श्लोक ५५) आदि गंगा में डूब मरे थे, और राजा शूद्रक (मृच्छकटिक, अंक प्रथम) तथा लाहौर का राजा जयपाल (तारीख यमीनी) आदि अग्नि में जल मरे थे. ऐसा करने का कारण यही पाया जाता है, कि अधिकतर रण में मरने की आकांक्षा रखनेवाले वीरप्रकृति के पुरुष वैसा शुभ अवसर न मिलने पर वृद्धावस्था में बिस्तर में मरने को बुरा समझकर इस प्रकार अपने शरीर का अंत करने का साहस करते थे. कभी कभी वृद्धावस्था में हार कर कैद होजाने के कारण लज्जित होकर भी ऐसा कर बैठते थे (देखो तारीख यमीनी में जयपाल के जल मरने का कारण—इलियट साहिब की तवारीख, जि० २ पृ० २७).

१० विक्रमाङ्कदेवचरित में सोमेश्वर का वर्णन विस्तार से किया है (सर्ग १, श्लो० ८७ से सर्ग ४, श्लो० ६८ तक), जिसका सारांशमात्र ऊपर उद्धृत किया गया है.

११ आत्मावस्थानहेतोरभिलषति सदा मंडलं मालवेशो दोलं तालीवनांतान्य-
नुसरति सरिन्नाथकूलानि चोलः । कन्याकुब्जाधिराजो भजति च तरसा कंदर-
स्थानमादेरुद्दामो यत्प्रतापप्रसारभरभयोद्भूतिविभ्रांतचित्तः ॥ (इ० ऐ० जि० ८, पृ० १९).

जो बिल्हण पंडित के लेख की पुष्टि करता है. चोल देश के राजाओं से वह कई लड़ाइयाँ लड़ा था, जिनमें कहीं कहीं उसकी हार भी हुई थी. इन लड़ाइयों का विशेष वृत्तान्त बिल्हण पंडित ने नहीं लिखा, परन्तु वह विशेष कर चोल के राजाओं के शिलालेखों से मिल आता है. उस (सोमेश्वर) के राज्य समय चोल देश पर राजाधिराज * (प्रथम), राजेन्द्रदेव † और वीरराजेन्द्र ‡ ने राज्य किया, जिनसे वह बराबर लड़ता ही रहा था. राजाधिराज (प्रथम) के राज्य वर्ष २६ वै अर्थात् श० सं० ६६८

* राजाधिराज, जिसको राजकेसरीवर्मा और जयंगोडचोल भी कहते थे, उपर्युक्त राजेन्द्रचोल का पुत्र होना चाहिये. वह राजेन्द्रचोल के जीवित समय से ही अपना राज्यवर्ष लिखने लगा था, जिससे अनुमान होता है; कि राजेन्द्रचोल के राज्यसमय वह किसी प्रदेश का शासक नियुक्त हुआ हो, और उसी समय (श० सं० ६४० = वि० सं० १०७५ = ई० स० १०१८) से उसने अपने राज्य का प्रारंभ मानकर राज्यवर्ष लिखना शुरू किया हो. उसने ३५ वर्ष के करीब राज्य किया था.

† राजेन्द्रदेव, जिसको परकेसरीवर्मा भी कहते थे, राजाधिराज (प्रथम) का छोटा भाई और उत्तराधिकारी था. उसने अपने बड़े भाई की जीवित दशा में श० सं० ६७४ (वि० सं० ११०६ = ई० स० १०५२) से अपना राज्यवर्ष लिखना शुरू किया था, और श० सं० ६८४ (वि० सं० १११६ = ई० स० १०६२) के आस पास वह सोमेश्वर (प्रथम) के साथ युद्ध में मारा गया हो ऐसा संभव है.

‡ वीरराजेन्द्र, जिसको राजकेसरीवर्मा, वीरचोल, और करिकालचोल भी कहते थे, राजेन्द्रदेव का उत्तराधिकारी (शायद छोटा भाई हो) था. उस के राज्य का प्रारंभ श० सं० ६८४ (वि० सं० १११६ = ई० स० १०६२) के आस पास हुआ था. राजेन्द्रदेव, और वीरराजेन्द्र के बीच राजमहेन्द्र का नाम भी मिलता है. यदि वीरराजेन्द्र के पूर्व उसने राज किया हो तो कुछ महीनों तक ही किया होगा.

(वि० सं० ११०३ = ई० स० १०४६) के लेख में यह लिखा है, कि 'उस (राजाधिराज) के साथ की लड़ाई में आहवमल्ल (सोमेश्वर) भयभीत हो गया, उसके सैनिकों में से गंडप्पय और गंगाधर अपने हाथियों सहित मारे गये, और बड़ी वीरता वाले विक्रि (विक्रमादित्य *) और विजयादित्य पीछे हटे'†. सोमेश्वर के साथ के किसी युद्ध में राजाधिराज का छोटा भाई राजेन्द्रदेव भी उसके साथ रहकर लड़ा था, क्योंकि उस (राजेन्द्रदेव) के राज्यवर्ष तीसरे अर्थात् श० सं० ६७६ (वि० सं० ११११ = ई० स० १०५४) के लेख से पाया जाता है, कि 'उसने अपने बड़े भाई (राजाधिराज) के सैन्य की हरावत में रहकर इरट्टपाडी (रट्टपाटी ‡) देश विजय किया, और कोल्हापुर में विजयस्तंभ स्थापन किया, जिसकी खबर पाकर आहवमल्ल (सोमेश्वर) कोप्पम् † नामक स्थान में आ पहुँचा,

* विक्रमादित्य=सोमेश्वर (प्रथम) का दूसरा पुत्र.

† सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ५६.

‡ रट्टपाटी (रट्टपाड़ी, इरट्टपाड़ी)=राठौड़ों के आधीन का दक्षिण का एक अंश, जो सोलंकियों के समय भी उसी नाम से प्रसिद्ध था. चोल के राजाओं के लेखों से पाया जाता है, कि वह प्रदेश राजेन्द्रचोल ने सोलंकी जयसिंह (दूसरे) से छीना था, परन्तु चोलवाले उसको अपने आधीन रख सके हों, ऐसा पाया नहीं जाता, क्योंकि यदि ऐसा हुआ होता, तो फिर राजेन्द्रदेव को उसको विजय करने की आवश्यकता ही न रहती. संभव है, कि वे उसे लूटकर चले गये हों.

† कोप्पम्=इस समय कुप्पम् नाम से प्रसिद्ध है, और बेंगलोर ब्रैच रेलवे का एक स्टेशन है.

परन्तु वहां के युद्ध में उसे हारकर लौटना पड़ा' * . राजेन्द्रदेव के राज्यवर्ष चौथे के शिलालेख में कोप्पम् के युद्ध का विस्तार से वर्णन है, जिसका आशय यह है, कि 'जब अभिमानी शलुकि † (सोलंकी) आहवमल्ल (सोमेश्वर) ने सुना, कि युद्ध की इच्छा रखनेवाले चोल के राजा ने इरट्टमंडल (रट्टपाटी प्रदेश) में पहुंच कर बहुत से जिले और कस्बे बर्बाद कर दिये हैं, तब उसने कोप्पम् में पहुंच कर उसपर हमला किया, जिसमें उसके थाणों की वृष्टि से वह (राजेन्द्रदेव) घायल हुआ, और उसके साथ हाथी पर बैठा हुआ दूसरा योद्धा मारा गया, जिसपर उसने अपने अलग रखे हुए सैन्य को युद्ध में नियुक्त कर उस प्रबल शलुकि (सोलंकी) राजा के भाई जयसिंह ‡ को तथा वीर पुलकेशी, दशपण्मन् + और दूसरे पराक्रमी सामंतों को मारा, और उस शलुकि (सोलंकी) राजा को हराकर उसके शत्रुभयंकर, करभद्र, मूलभद्र वगैरह कितने ही हाथी, घोड़े, ऊट, बराह के चिन्हवाला जयध्वज

* सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ११२.

‡ ऊपर पृष्ठ पहिले के टिप्पण में सोलंकी शब्द के जो भिन्न भिन्न पर्याय दिये हैं उनमें 'शलुकि' शब्द दर्ज करना रह गया है. यह शब्द सोलंकी शब्द से बहुत ही मिलता हुआ है.

† उक्त लेख में जयसिंह को आहवमल्ल (सोमेश्वर) का भाई लिखा है, परन्तु सोलंकियों के लेखों से वा विक्रमादित्यदेवचरित से उसकी पुष्टि नहीं होती. तामिल भाषा के लेखों में चचा के बेटे, मामा के बेटे वगैरह जो रिश्ते में भाई होते हैं उनको भी भाई ही लिखा मिलता है, इसलिये जयसिंह सोमेश्वर का कोई नजदीकी रिश्तेदार होना चाहिये.

+ दशपण्मन्=दशवर्मन् का तामिल भाषा का लौकिक रूप होना चाहिये.

तथा दूसरे राज्यचिन्ह, कितनीक राणियां, बहुतसी स्त्रियां * तथा अन्य सामान छिनि लिया' ६३. इस विजय का उल्लेख उसके समय के दूसरे लेखों ७ में भी मिलता है. अण्णीगेरे + से मिले हुए सोलंकियों के लेख में ऐसा लिखा है, कि 'दुष्ट चोलराजा, जिसने अपना कुलधर्म छोड़ दिया था, बोलबोल x प्रदेश तक चला आया, और गंगमंडल के स्वामी गंगपेरमाडी के बनाये हुए अण्णीगेरे के जैनमंदिर को उसने जला दिया, परन्तु सोमेश्वर के साथ की लड़ाई में वह मारा गया' ‡. बेलगांव □ के एक लेख में भी सोमेश्वर के साथ की लड़ाई में चोल के राजा

* मुसलमानों के पूर्व हिंदुस्तान में परदे की प्रथा बिल्कुल न थी, और राणियां भी सर्वत्र राजाओं के साथ रहती थीं. जैसे इस समय यहां के राजाओं के कुल अंगसेवक (जैसे कि स्नान करानेवाले, जल पिलानेवाले, पान खिलानेवाले, ड्यौहीवान् आदि) पुरुष होते हैं, वैसे ही पहिले बहुधा स्त्रियां होती थीं, जो दर्बार, हवाखोरी, शिकार, लड़ाई वगैरह में सदा उनके साथ रहती थीं. वे शस्त्र धारणकर घोड़ों पर सवार होती थीं, और पुरुषों की नाई अपने शस्त्रों का उपयोग भी करती थीं. इसीसे प्राचीन लेखों में कहीं कहीं युद्धसमय राणियों और अन्य स्त्रियों के पकड़े जाने का उल्लेख मिलता है.

६३ सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ६३.

७ सा० इ० इ० जि० १, पृ० १३४; जि० २, पृ० ३०७; जि० ३, पृ० ११२; एपिग्राफ़िआ कर्णाटिका जि० ४, पृ० ८० (अंग्रेजी अनुवाद).

+ अण्णीगेरे=बंबई इलाते के धारवाड़ जिले में.

x बोलबोल=धारवाड़ जिले के आसपास का प्रदेश.

‡ बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४४१.

□ बेलगांव=माहसोर राज्य के शिकारपुर ताल्लुके में.

के मारे जाने * का उल्लेख है †, और राजराजदेव (दूसरे) के राज्यवर्ष ६ ठे के लेख में भी ऐसा ही लिखा मिलता है †. यदि राजेन्द्रदेव आहवमल्ल (सोमेश्वर प्रथम) के साथ के युद्ध में मारा गया हो, तो यह घटना श० सं० ६८४ (वि० सं० १११६ = ई० स० १०६२) के आस पास होनी चाहिये. उक्त समय के पूर्व श० सं० ६८१ (वि० सं० १११६ = ई० स० १०६०) में सोमेश्वर ने किसी दूसरी लड़ाई में भी राजेन्द्रदेव को हराया था, जिसका उल्लेख चोलवालों के लेखों में नहीं मिलता, परन्तु सूड़ि × गांव से मिले हुए सोमेश्वर के लेख से पाया जाता है, कि श० सं० ६८१ (वि० सं० १११६ = ई० स० १०६०) माघ शु० १५ चन्द्रग्रहण के दिन सोमेश्वर ने 'किसुकाड़ सप्तति' प्रदेश का एक गांव दान किया था, जब कि वह दक्षिण के देश तथा चोल के

* सोलंकियों के उपर्युक्त दो शिलालेखों में चोल के राजा का मारा जाना लिखा है, परन्तु उनमें उसका नाम नहीं दिया, तो भी इतना तो निश्चित है, कि वह राजाधिराज और उसके छोटे भाई राजेन्द्रदेव में से कोई एक होना चाहिये. राजराजदेव (दूसरे) के राज्यवर्ष छठे के शिलालेख में उसके पूर्व के राजाओं के वृत्तान्त में यह लिखा मिलता है, कि 'विजयरजेन्द्रदेव, जिसने कल्याणपुर और कोल्हापुर को विजय किया था, हाथी पर (युद्ध में) मारा गया था' (सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १६१). कोल्हापुर में विजयस्तम्भ राजेन्द्रदेव ने स्थापन किया था, अतएव वही युद्ध में मारा गया हो यह अधिक संभव है. कृष्णस्वामी ऐयंगर ने तिरुमंगै आलवार के समयसंबंधी निबंध में राजाधिराज का कोप्पम् के युद्ध में मारा जाना लिखा है (इ० ऐ० जि० ३५, पृ० २३०), परन्तु उसके लिये कोई प्रमाण नहीं दिया.

† ए० क० जि० ७, पृ० ८५-८६ (अंग्रेजी अनुवाद).

† सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १६१.

× सूड़ि=भंबई इलाते के धारवाड़ जिले में.

राजा को विजयकर लौट रहा था * इस प्रकार दोनों पक्षवालों का जयपराजय होता रहा था. राजेन्द्रदेव के बाद वीरराजेन्द्र चोल देश का राजा हुआ, उसने भी आहवमल्ल (सोमेश्वर) से कई लड़ाइयां लड़ीं और 'आहवमल्लकुलकाल' † खिताब धारण किया था. उसके राज्यवर्ष चौथे के लेख में ऐसा लिखा है, कि 'उसने गंगपाडि (गंगवाड़ी) के युद्ध में विक्रल (विक्रमादित्य) को बड़े बड़े सामंतों सहित हराकर तुंगभद्रा नदी की तरफ हटाया, और उस (विक्रमादित्य) ने वेंगी नाडू (वेंगी देश) पर प्रबल सैन्य भेजा उस समय उसको फिर हराकर उसके मरे-हुए महादंडनायक ‡ चामुंडराज + का सिर तथा उस (चामुंडराज) की इकलौती पुत्री नागले × का नाक काटा, जिसका बदला लेने की इच्छा से वह (विक्रमादित्य) तीसरी बार लड़ने को आया, परन्तु कुडलसंगमम् के युद्ध में आहवमल्ल (सोमेश्वर) अपने दो पुत्र विक्रल (विक्रमादित्य) और सिंगन (जयसिंह) तथा कई सामंतों सहित हारा, और उसके छत्र, चंवर, मेघाडंबर, खजाना, स्त्रियां, वादित्र, वराह के चिन्हवाला ध्वज, मकरतोरण, पुष्पक नाम की हथनी, कई लड़ाई के हाथी, और घोड़े उस (राजेन्द्रचोल) ने छीन लिये' ().

* अं० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४४१.

† इस खिताब के अतिरिक्त उसने तामिल भाषा का 'आहवमल्लनैमुम्म-डिवेणकण्ड' खिताब भी धारण किया था, जिसका अर्थ 'तीन बार आहवमल्ल की पीठ देखनेवाला' है.

‡ महादण्डनायक=बड़ा सेनापति (दण्ड=सेना).

+ चामुंडराज=सोमेश्वर (प्रथम) का सामंत, और बनवासी प्रदेश का स्वामी था.

× उक्त लेख में नागले को इरुगय की राणी और सुन्दरी लिखा है.

() सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ३७.

उसके राज्य के छठे वर्ष के लेख से पाया जाता है, कि 'कुङ्गलसंगमम्' के युद्ध के बाद वह एक नदी के तट पर फिर सोमेश्वर से लड़ा था, जिसके बाद उसने सोमेश्वर के कंपिली * नामक नगर को जलाया था †. इस प्रकार सोमेश्वर के साथ चोलवालों ने कई लड़ाइयाँ लड़ीं, परन्तु उसके राज्य का कोई भी अंश वे अपने राज्य में मिलाने को समर्थ नहीं हुए.

उपर्युक्त बेलगांव से मिले हुए सोमेश्वर (दूसरे) के समय के लेख में उस (सोमेश्वर प्रथम) के विषय में लिखा है, कि 'कुंतल † देश के तिलकरूप उस राजा के समय लाट, कलिंग, गंग, करहाट, † तुरुष्क, वराल, चोल, कर्णाट, सुराष्ट्र †, मालव, दशार्ण ×, कोशल ‡, केरल आदि के राजा गर्व छोड़कर उसको खिराज देते थे और अपने अपने राज्य की नियत सीमा से आगे बढ़ने नहीं पाते थे. उसने मगध, आंध्र,

* कंपिली = तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी तट पर है, और इस समय कंपली नाम से प्रसिद्ध है (बेलारी जिले के होस्पेट ताल्लुके में).

‡ सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १९४.

† कुंतल = दक्षिण का वह हिस्सा, जो 'केनेरीज डिस्ट्रिक्ट' नाम से प्रसिद्ध है. उसकी राजधानी उस समय कल्याण होनी चाहिये (सोलंकियों के महाराज्य का बड़ा हिस्सा).

† करहाट = कर्हाड़ = कराड (बंबई इलाके के सितारा जिले के आस पास का प्रदेश).

+ सुराष्ट्र = सोरठ; काठियावाड़ का दक्षिणी हिस्सा.

× दशार्ण = सेंट्रल इंडिया का वह हिस्सा जो भिलसा के आस पास है. प्राचीन काल में उसकी राजधानी विदिशा नगरी थी, जो इस समय भिलसा नाम से प्रसिद्ध है. वहां के बौद्ध स्तूप प्रसिद्ध हैं (देखो जनरल कनिंगहम का 'भिलसा टोप्स' नामक पुस्तक.

‡ यह दक्षिण कोशल होना चाहिये.

अवंति *, वंग, द्रविड, कुरु †, खस ‡, आभीर, पांचाल x, और लाळ ‡ वालों को मारकर अपने आधीन बनाया, जिनसे वह खिराज तथा फौज लिया करता था. श० सं० ६६० (वि० सं० ११२५=ई० स० १०६८) चैत्र कृष्ण ८ रविवार ÷ को उस ने तुंगभद्रा नदी में समाधि ली, और वैशाख शुक्ल ७ शुक्रवार के दिन उसका ज्येष्ठ पुत्र सोमेश्वर (दूसरा) राज्यसिंहासन पर बैठा +.

उस(सोमेश्वर प्रथम) ने कल्याण नगर को अपनी राजधानी () बनाया था. उसकी पांच राणियों के नाम—होयशल-

* अवंति=उज्जैन.

† कुरु=थानेश्वर के आसपास का प्रदेश.

‡ खस=कश्मीर की तरफ के एक प्रदेश और जाति का नाम मिलता है, परंतु आसाम का एक भाग भी उक्त नाम से प्रसिद्ध था.

x पांचाल = अंतर्वेद का बड़ा हिस्सा पांचाल नाम से प्रसिद्ध था. प्राचीन काल में उसके दो विभाग थे, जो उत्तरी और दक्षिणी पांचाल कहलाते थे. उत्तरी पांचाल की राजधानी अहिच्छत्रपुर (बरेली से २० मील पश्चिम में) और दक्षिणी की काम्पिल्य (कम्पिल—गंगातट पर, बदायूं के सामने) थी.

‡ लाळ = उक्त लेख में लिखा हुआ यह नाम शायद लाट देश के वास्ते हो, यदि उससे भिन्न है, तो दक्षिण के किसी छोटे विभाग का नाम होना चाहिये.

÷ प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉक्टर कीलहॉर्न साहिब ने उक्त तिथि का गणित कर देखा, तो उस दिन शनि वार होना पाया जाता है (ए० इ० जि० ७, शेष संग्रह दूसरा, पृ० ७), शायद उसमें गलती से रविवार लिखा हो.

+ ए० क० जि० ७, पृ० १८१-८२; अंग्रेजी अनुवाद पृ० १०१-२.

() विक्रमाङ्कदेवचरित के दूसरे सर्ग (श्लो० १ से २५ तक) में राजधानी का वर्णन है.

देवी *, बाचलदेवी, चंद्रिकादेवी, मैमलदेवी और कैतलदेवी—शिलालेखों में मिलते हैं. इनके सिवाय उसके और भी राणियां होंगी. बाचलदेवी से सोमेश्वर, विक्रमादित्य और जयसिंह उत्पन्न हुए थे, और चौथा पुत्र विष्णुवर्द्धन (विजयादित्य) किसी अन्य राणी से उत्पन्न हुआ था.

सोमेश्वर (प्रथम) वीरप्रकृति का राजा था, जो अपने राज्यसमय में शत्रुओं से बराबर लड़ता ही रहा था. उसके समय के ५० से अधिक शिलालेख मिले हैं, जिनसे उसके कई सामंतों के नाम और उनकी जागीर आदि का पता लगता है.

सोमेश्वर (दूसरा).

सोमेश्वर (दूसरे) के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'भुवनैकमल्ल' मिलते हैं. उपर्युक्त बेलगांव के लेख से पाया जाता है, कि 'सोमेश्वरराज्य सिंहासन' पर बैठा उन्होंने दिनों चोल देश के राजा वीरचोड (वीरराजेन्द्र) ने चढ़ाई कर गुट्टि नामक स्थान को घेर लिया, जिसकी खबर पाते ही उस (सोमेश्वर) ने उसका मुकाबला करने के लिये अपना अश्वसैन्य भेजा. दोनों सैन्यों के बीच घोर संग्राम हुआ, जिसमें 'वीरचोड भाग निकला' †, परन्तु उसके विरुद्ध चोल देश के राजा वीरराजेन्द्र (वीरचोड) के राज्यवर्ष सातवें अर्थात् श० सं० ६६१ (वि० सं० ११२६ = ई० स० १०६६)

* होन्नाली (माइसोर राज्य में) से मिले हुए (मल्लिकार्जुन के मंदिर के) लेख में होयशलदेवी को उसकी मुख्य राणी लिखा है (ए० क० जि० ७, पृ० १५७), जिससे हमने उसका नाम सब से पहिले रक्खा है.

† ए० क० जि० ७, पृ० १०२.

के आस पास के लेख में यह लिखा है, कि 'उसने सोमेश्वर (दूसरे) का पीछा कर उससे कन्नड़ देश छीन लिया, शलुविक (सोलंकी) विक्रमादित्य को, जो उसके चरणों में आकर नमा था, कंठिका * से भूषित किया, और (सोमेश्वर से) रट्टपाडी (रट्टपाटी) प्रदेश छीन कर उस (विक्रमादित्य) को दे दिया' †. इस प्रकार दोनों पक्षवाले अपनी अपनी विजय होना प्रकट करते हैं, अतएव उनके बीच दो बार लड़ाई हुई होगी. वीरराजेन्द्र के उक्त लेख में यह भी पाया जाता है, कि सोमेश्वर ने राज्य पाया उसी समय में उसका छोटा भाई विक्रमादित्य उसके शत्रुओं से मेल करने और उसका राज्य छीनने के उद्योग में लगा हुआ था.

विक्रमाङ्कदेवचरित में उस (सोमेश्वर दूसरे) का वृत्तान्त नीचे लिखे अनुसार दिया है:—

“विक्रमादित्य अपने पिता के देहान्त की खबर सुन कल्याण में आया, तो सोमेश्वर ने उसने मिल उसका सन्मान किया. दोनों भाइयों के बीच कितने एक दिन तक प्रीति बनी रही और विक्रमादित्य ने लड़ाइयों में जो द्रव्य हाथ लगा था वह अपने बड़े भाई के नज़र कर दिया, परन्तु कुछ समय के बाद सोमेश्वर कुमार्ग में पड़कर अभिमानी, निर्दयी और प्रजापीडक बना और उस (विक्रमादित्य) की तरफ़ श्रेष्ठबुद्धि से देखने लगा. उस (विक्रमादित्य) ने जब यह देखा, कि राजा का आचरण सुधरना असम्भव है, और यहाँ रहने से प्राणहानि होने की सम्भावना है, तो वह अपने छोटे भाई जयसिंह सहित कल्याण से निकल गया. सोमेश्वर ने अपने भाइयों के

* कंठिका से भूषित करने का अभिप्राय युवराज (उत्तराधिकारी) बनाना हो (कंठिका = कंठी).

† सा० इ० इ० जि० ३, पृ० २०३.

भागने की खबर पाकर उनको पकड़ने के लिये सैन्य भेजा, जिसको परास्त कर विक्रमादित्य तुंगभद्रा नदी के तट पर पहुंचा और चोल के राजा से लड़ने की इच्छा से कुछ दिनों तक वहीं ठहरा, फिर वहां से हटकर थोड़े समय तक बनवासी प्रदेश में ठहर मलय देश में होता हुआ आगे बढ़ा, तो कौंकण के स्वामी जयकेशी * ने उसके पास हाजिर होकर उसकी इच्छा से अधिक द्रव्य नज़र किया, आलुपवंशी राजा ने उसकी आधीनता स्वीकार कर ली, और केरल के राजा की राणियां कांपने लगीं. वहां से चोल की तरफ चला, जिसकी खबर पाते ही वहां के राजा ने सुलह † कर अपनी पुत्री व्याह देने का संदेशा दूत द्वारा उसके पास भेजा, जिसको स्वीकार कर वह अपने सैन्य सहित तुंगभद्रा के तट पर लौट आया जहां पर चोल का राजा अपनी पुत्री सहित आया और उस (विक्रमादित्य) के साथ उसका विवाह कर पीछा अपनी राजधानी को

* जयकेशी (प्रथम) कदंबवंशी सामंत षष्ठदेव का पुत्र था. वह सोमेश्वर के सामंतों में से था, परन्तु पीछे से विक्रमादित्य का मुख्य सहायक हो गया था. कदंबों के लेखों से पाया जाता है, कि उसने गोपकपट्टन (गोवा, जो इस समय पुर्तगालवालों के आधीन है) को अपनी राजधानी बनाया, और सोलंकी (विक्रमादित्य) और चोल के राजा के बीच कांची में मैत्री करादी (ततः प्रादुरभूच्छ्रीमार्जजयकेशी महीपतिः ... चालुक्यचोलभूपालौ कांच्या मित्रे विधाय यः—धंव० ए० सो० ज० जि० ६, पृ० २४२ जातः श्रीजयकेशीति करैरानन्दयन् जगत् । यश्चलुक्यं मित्रे राज्ये स्थापयन्विजितालुपः—धंव० ए० सो० ज० जि० ६, पृ० २७८).

† उस समय चोल देश का राजा धीरराजेन्द्र था, जो सोलंकियों का शत्रु था. विक्रमादित्य चोलदेश की तरफ उससे लड़ने की इच्छा से नहीं, किन्तु अपने बड़े भाई का राज्य छीनने के लिये उससे मैत्री करने को गया होगा, जैसा कि धीरराजेन्द्र के राज्यवर्ष सातवें के उपर्युक्त लेख से पाया जाता है.

लौट गया. थोड़े ही दिनों बाद चोल के उत्तर राजा का देहांत होने पर उसके राज्य में उपद्रव खड़ा हुआ, जिसकी खबर विक्रमादित्य के पास तुंगभद्रा के तट पर पहुँची, जिससे वह अपने साले * की सहायता के लिये दक्षिण की तरफ चला, और कांची में पहुँचकर उपद्रव करनेवालों को परास्त कर भगाया; फिर वहाँ से गंगकुंड में जाकर शत्रुओं के सैन्य को तित्तर बित्तर कर अपने साले को उसके पिता के सिंहासन पर बिठलाया, और एक मास कांची में ठहर कर पीछा तुंगभद्रा के तीर पर आया, परंतु थोड़े ही समय बाद कांची में फिर उपद्रव हुआ, जिसमें उसका साला मारा गया, और वेंगीदेश के राजा राजिग † ने कांची पर अपना अधिकार कर लिया, जिसकी खबर मिलते ही वह राजिग से लड़ने को सज्ज हुआ, तो राजिग ने उसके बड़े भाई सोमेश्वर को, जो उसे नष्ट करना ही चाहता था, अपना सहायक बनाना चाहा, और सोमेश्वर ने उसकी सहायता करना स्वीकार किया. विक्रमादित्य ने राजिग पर चढ़ाई की इतने में सोमेश्वर उस (राजिग) की सहायता के लिये विक्रमादित्य के लश्कर के पीछे आ पहुँचा. वह (विक्रमादित्य) अपने बड़े भाई से लड़ना नहीं चाहता था, इस वास्ते उसने दूत द्वारा राजिग की सहायता न करने के लिये उसे कहलाया, जिसको उसने ऊपरी दिल से स्वीकार किया, परंतु अंतःकरण से वह उस (विक्रमादित्य) को नष्ट करने के उद्योग में लगा रहा. यह हाल देख विक्रमादित्य ने दोनों से लड़ना निश्चय कर शस्त्र उठाया. फिर घोर संग्राम हुआ, जिसमें सोमेश्वर कैद हुआ

* विक्रमादित्य का साला चोल के राजा वीरराजेन्द्रदेव का पुत्र परफेसरीवर्मा होना चाहिये, जिसको अधिराजेन्द्रदेव भी कहते थे.

† 'राजिग' = वेंगीदेश का पूर्वी सोलंकी राजा राजेन्द्रचोड (कुलोत्तुंगचोड). 'राजिग' राजेन्द्र का प्राकृत (लौकिक) रूप है.

और राजिग भाग * गया. विक्रमादित्य वहाँ से कल्याण में पहुँच कर राज्यमिहिरासन पर बैठा, और अपने छोटे भाई जयसिंह को उसने बनवासी प्रदेश का शासनकर्त्ता नियत किया"†.

बिल्हण पंडित ने अपने आश्रयदाता विक्रमादित्य के द्वार में रहकर विक्रमांकदेवचरित रचा है, जिसमें उस (विक्रमादित्य) को निलोभी तथा भ्रातृदत्तसल और सोमेश्वर को वृष्ट तथा भ्रातृवेषी बतलाया है, परंतु इसमें उसने अपने आश्रयदाता की तरफ़दारी की है ऐसा उसके लिखने से ही भल-क आता है. सोमेश्वर ने विक्रमादित्य को बनवासी प्रदेश दिया था, जिसपर संतुष्ट न होकर वह अपने बड़े भाई का राज्य छीनने का सुप्त प्रबंध कर रहा था, परंतु इस भेद के प्रकट हो जाने पर उसको कल्याण छोड़ भागना पड़ा हो ऐसा प्रतीत होता है. उसका जयकेशी आदि सामंतों को अपनी तरफ़ मिलाना और चोलवालों से, जो सोलंकियों के वंशपरंपरा के शत्रु समझे जाते थे, मैत्री करना ये सब प्रणच सोमेश्वर से राज्य छीनने के ही थे. ऐसे ही उस (विक्रमादित्य) ने सेउण देश के यादव राजा सेउणचंद्र दूसरे को भी अपना मददगार बनाया था, क्योंकि प्रसिद्ध पंडित हेमाद्रि + लिखता है, कि 'सेउण ने

* राजिग (राजेन्द्रचोड) ने विक्रमादित्य को भगाया था ऐसा उसके लेखों से पाया जाता है (देखो पूर्वी सोलंकियों के इतिहास में उक्त राजा का हाल).

† विक्रमांकदेवचरित सर्ग ४, श्लोक ६१ से लगाकर सर्ग ६, श्लोक ६१ तक में बिल्हण पण्डित ने बड़े विस्तार से यह हाल लिखा है, परंतु हमने केवल ऐतिहासिक लेख में उपयोगी रामभा उतना ही संक्षेप के साथ लिखा है.

+ हेमाद्रि=देवगिरि के यादव राजा महादेव का प्रधान मंत्री और प्रसिद्ध विद्वान् था. उसका चतुर्वर्गचिंतामणि नामक बृहद्ग्रंथ (संस्कृत) बड़ा ही प्रसिद्ध है.

सोलहकीकुलदीपक परमर्दिदेव * को शत्रुओं से बचाकर उसे कल्याण के राज्य का मालिक बनाया था' १५. ऐसी दशा में हम उसको निर्लोभी नहीं कह सकते. बिल्हण पंडित तो यहां तक लिखता है, कि 'सोमेश्वर को कैद करने बाद भी उस (विक्रमादित्य) की यह इच्छा थी, कि अपने भाई को पीछा गद्दी पर बिठला दूं, लेकिन शंकर ने क्रुद्ध होकर उसको राजा होने की आज्ञा दी, जिससे वह दक्षिण का राजा बना था' १६. इस भ्रातृवत्सलता का विचार पाठक लोग स्वयं कर सकते हैं.

सोमेश्वर के समय के २० से अधिक लेख मिले हैं, जिनमें से सब से पिछला श० सं० ६६८ (वि० सं० ११३३ = ई० स० १०७६) का है, और इसी वर्ष + में विक्रमादित्य उसको कैद कर राजा बना था. कैद होने के पीछे सोमेश्वर का क्या हुआ इस विषय में बिल्हण पंडित ने कुछ भी नहीं लिखा.

* परमर्दिदेव = विक्रमादित्य (परमर्दि उसका विरुद्ध था).

१५ ततः समदग्नेदिनीपतिपतङ्गभङ्गवतः प्रतापशिखिलङ्घितत्रिजगदङ्गणः से-
उणः ॥ २८ ॥ समुद्धृतो येन महाभुजेन द्विषां विमर्दात्परमर्दिदेवः । अस्थापि चा-
लुक्यकुलप्रदीपः कल्याणराज्येपि स एव येन ॥ २९ ॥ (चतुर्वर्गचिंतामणि के
वृत्तखंड के अंतर्की राजप्रशस्ति से),

१६ विक्रमाङ्कदेवचरित सर्ग ६, श्लोक ६३-६६.

+ सोमेश्वर दूसरे के समय के लेखों में से सब से पिछला श० सं० ६६८ (वि० सं० ११३३ = ई० स० १०७६) के भाद्रपद मास का है और विक्रमादित्य के लेखों में उसका राज्यवर्ष (अर्थात् आलुक्यविक्रमसंवत्) और बार्हस्पत्य संवत्सर दोनों मिलते हैं, जिनसे उसके राज्य का प्रारंभ श० सं० ६६८ (वि० सं० ११३३) से होना सिद्ध होता है, अतएव उसने वि० सं० ११३३ (ई० स० १०७६) के भाद्रपद और चैत्र कृष्ण ३० के बीच के ७ महीनों के भीतर किसी समय में सोमेश्वर से राज छीना होगा.

प्रकरण सातवां.

विक्रमादित्य * (छठा).

विक्रमादित्य (छठे) के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक', 'त्रिभुवनमल्ल', 'कालिविक्रम' और 'परमर्षिदेव' मिलते हैं. उसने अपने राज्याभिषेक अर्थात् श० सं० ६६८ (वि० सं० ११३३=ई० सं० १०७६ में अपने नाम का संवत् चलाया, जो 'चालुक्यविक्रम संवत्' ‡ नाम से प्रसिद्ध हुआ और करीब १०० वर्ष चलने बाद अस्त हो गया.

विक्रमाङ्कदेवचरित में उसका वृत्तान्त बहुत विस्तार के साथ लिखा है, जिसका सारांश यह है:—

“विक्रमादित्य को राज. पाने बाद खयर मिली कि कर्हाटक +

* विक्रमादित्य के स्थान पर विक्रम, विक्रमार्क, विक्रमाङ्क, विक्रि, विकल और विविकल भी लिखा मिलता है, जिनमें से विक्रि, विकल और विविकल ये विक्रम नाम के प्राकृत (उस प्रदेश के लौकिक) रूप हैं.

† 'परमर्षिदेव' के स्थान पर परमर्षि, परमर्षि, परमर्षि और परम पाठ भी मिलते हैं, जो उक्त नाम के प्राकृत (लौकिक) रूप हैं.

‡ प्रसिद्ध विक्रमादित्य का संवत् (विक्रम संवत्) पहिले से प्रचलित था, इसलिये इस विक्रमादित्य ने अपने संवत् को उक्त संवत् से भिन्न बतलाने के लिये उसका नाम 'चालुक्यविक्रम संवत्' रक्खा था. उसके सविस्तर वृत्तान्त के लिये देखो प्राचीन लिपिमाला पृष्ठ ३६-४२.

+ कर्हाटक=कर्हाड=कराड (बंबई इलाके के सितारा जिले में).

के शिलारा राजा की पुत्री चंद्रलेखा *, जो अनुपम सुन्दरी है, स्वयंवर करनेवाली है, जिससे वह वहां पर जा उपस्थित हुआ, जहां अयोध्या, चेदी, कन्नौज, चर्मण्वती † प्रदेश, कलिंगर, गोपाचल ‡, मालवा, गुर्जर (गुजरात), पाण्ड्य, और चोल देश के राजा भी विद्यमान थे. प्रतिहारी के मुख से उपस्थित राजाओं का चरित्र सुनने के पश्चात् चन्द्रलेखा ने विक्रमादित्य को पसंद कर उसके गले में चरमाला पहिना दी. उससे विवाह कर अपनी राजधानी में आने बाद वह सुखभोग में लीन हो रहा. इस प्रकार कितने ही दिन व्यतीत होने पर एक दिन एक विश्वामपात्र दूत ने आकर खबर दी कि ' महाराज ! आपके छोटे भाई जयमिह ने आपका राज्य छीनने की इच्छा से प्रजा का पीड़न कर बहुतसा द्रव्य संचय कर लिया है, सैन्य बढ़ा दिया है, जंगली जातियों को अपने आधीन कर रक्खा है, द्रविड़ के राजा से मैत्री करने का उद्योग चल रहा है, आपकी सेना को राजद्रोही बनाने का यत्न किया गया है, और थोड़े ही समय में वह आप पर चढ़ाई करने वाला है'. यह खबर पाते ही विक्रमादित्य को बड़ा खेद हुआ, और उसके सत्यासत्य की जांच के लिये उसने दूत भेजे, जिन्होंने लौट कर उसका सत्य होना प्रकट किया, परन्तु वह अपने छोटे भाई पर शस्त्र उठाना नहीं चाहता था, इसलिये उसको समझाने की इच्छा से उसने अपने कर्मचारी भेजे, जिनके कथन की तरफ उसने कुछ ध्यान न दिया, इतना ही नहीं, किन्तु वह अपने सामन्त व महान्

* चंद्रलेखा को चंदलदेवी और चंदला भी कहते थे (वह शिलारा वंश के राजा मारसिंह की पुत्री हो).

† चर्मण्वती अर्थात् चंबल नदी के निकट का मुल्क (राजपूताना का वह हिस्सा जिसमें होकर वह नदी बहती है).

‡ गोपाचल=ग्वालियर.

सैन्यसहित कृष्णा नदी तक चला आया, और आस पास के गावों को लूटने, जलाने और वहाँ के लोगों को कैद करने लगा. विक्रमादित्य ने कुछ दिनों तक इस उपद्रव को भी सहन किया, परन्तु अन्त में उसको अपने सैन्य सहित उस पर चढ़ना पड़ा. कृष्णा नदी के पास युद्ध हुआ, जिसमें जयसिंह ने प्रथम अपने हस्तिसैन्य को आगे बढ़ाकर विक्रमादित्य के हाथी, सवार और पैदलों को पीछा हटाया, परन्तु विक्रमादित्य ने फिर वीरता से आगे बढ़कर जयसिंह के सैन्य को तित्तर बित्तर कर दिया, जिससे वह (जयसिंह) रणक्षेत्र से भागा *, और उसके हाथी, घोड़े, और तें तथा खजाना छीनकर विक्रमादित्य अपनी राजधानी को लौट आया. कुछ दिनों बाद जयसिंह किसी जंगल में से पकड़ा जाकर उस (विक्रमादित्य) के पास लाया गया, तो उसने उसका अपराध क्षमा किया. उस (विक्रमादित्य) ने कमलाविलासी नामक विष्णु का मन्दिर और उसके सम्मुख ही एक सुन्दर तालाब बनवाया, जिसके निकट एक नगर (विक्रमपुर) बसाकर उसको मन्दिर तथा महलों से सुशोभित किया. बहुत वर्षों तक शांति के साथ राज्य करने बाद उसने चोल देश पर चढ़ाई की, जिसमें वहाँ का राजा हार कर भाग गया, तो उसकी राजधानी कांचीपुरी लेली और कुछ दिन वहीं ठहरने के पश्चात् वह अपनी राजधानी को लौटा" x.

* विक्रमादित्य जयसिंह से कब लड़ा यह ठीक २ मालूम नहीं हुआ, तथापि ऐसा पाया जाता है, कि शक संवत् १०१० (वि० सं० ११४५ = ई० सं० १०८८) के पूर्व वह घटना हुई थी, क्योंकि उक्त संवत् में बनवासी प्रदेश, जो विक्रमादित्य ने जयसिंह को दिया था, कदंबवंशी महासामंत शातिवर्मा के अधिकार में होना एक लेख से पाया जाता है, संभव है, कि जयसिंह से लड़ाई होने बाद विक्रमादित्य ने उससे बनवासी प्रदेश छीनकर शातिवर्मा को दिया हो.

x सर्ग ७ श्लोक १ से सर्ग १७ श्लोक ६८ तक.

उपरोक्त वृत्तान्त में जो स्वयंवर का वर्णन है उसकी सत्यता में सन्देह है. महाकवि कालिदास ने अपने रघुवंश में इन्दुमती के स्वयंवर का वर्णन किया है उसका अनुकरण कर बिल्हण पंडित ने अपने काव्य को मनोहर बनाने की इच्छा से अपने आश्रयदाता के विवाहप्रसंग का वैसा ही वर्णन किया हो यह संभव है. यदि वास्तव में स्वयंवर हुआ होता और उपरोक्त देशों के राजा वहां पर गये होते, तो बिल्हण पंडित अपने पुस्तक में उनके नाम, वंश आदि का कुछ २ परिचय अवश्य देता, परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं पाया जाता, तो भी उसमें इतनी सत्यता अवश्य है, कि विक्रमादित्य ने चन्द्रलेखा से विवाह किया था, और वह अनुपमसुन्दरी थी. कल्हण पंडित अपनी राजतरंगिणी में कश्मीर के राजा हर्ष की मूर्खता के प्रसंग में लिखता है, कि 'कर्णाटक के राजा पर्माण्डि (परमर्दि = विक्रमादित्य) की रूपवती स्त्री चंदला (चन्द्रलेखा) का चित्र देखकर हर्ष कामातुर हो गया, और विटों * से उसोजित किये जाने पर उस निर्लेजने सभा के बीच यह प्रतिज्ञा की, कि जब तक कर्णाटक के राजा पर्माण्डि (विक्रमादित्य) को नष्ट कर चन्दला को न लाऊँ, और कल्याणपुर में प्रवेश न करूँ, तब तक अपक्क †

* विट = लुच्चे, मसूखरे (जो राजाओं के पास रहा करते हैं).

† कपूर दो प्रकार का होता है, पक्क और अपक्क. पक्क कपूर एक प्रकार के वृक्ष के रस को पका कर बनाया जाता है, जो बहुत सस्ता मिलता है और चीन, जापान आदि से इस देश में आता है. वह कपूर (काफूर) नाम से प्रसिद्ध है, और बहुधा देवमन्दिरों में पूजन के समय जलाने और औषधादिक के काम में लाया जाता है. अपक्क कपूर उससे भिन्न है, जो बहुत महंगा मिलता है, और 'बरास' (सुमात्रा टापू के बरस नामक स्थान से आने के कारण) नाम से प्रसिद्ध है. वह वृक्ष के रस से बनाया नहीं जाता, किन्तु खेरसार आदि की नाई उसकी छोटी छोटी डालियों वृक्ष के भीतर से ही मिल आती हैं. धनाढ्य लोग पान और पा-

कपूर का उपयोग न करूंगा' *.

उपर्युक्त बेलगांव से मिले हुए चालुक्यविक्रम संवत् २१ (श० सं० १०१८ = वि० सं० ११५३ = ई० स० १०६६) के शिलालेख में उस (विक्रमादित्य) के सेनापति कालिदास के विषय में लिखा है, कि 'उसने लाळ, मगध, नेपाल, पांचाल, चोल आदि के शत्रुराजाओं को मारकर उनका खजाना, बहुत से बड़े २ हाथी, घोड़े, स्त्रियां आदिको छीना, और उनके राज्य चालुक्यचक्रवर्ती (विक्रमादित्य) के आधीन किये' †. इससे अनुमान होता है, कि उसने उक्त देशों पर चढाईयां की होंगी.

उसके सामंत त्रिभुवनमल्ल पांड्यदेव के लेख में, जो चालुक्यविक्रम संवत् ४६ (श० सं० १०४३ = वि० सं० ११७८ = ई० स० ११२१) का है, यह लिखा मिलता है, कि 'उस (विक्रमादित्य) ने मरु, बंग, अंग, कलिंग, गौड़, मगध, पांचाल, नेपाल, बर्बर, सौराष्ट्र, वराट, लाट, करहाट, चेदि, काश्मीर, गुर्जर, सिन्धु, द्रविड, आंध्र, मालव, और तुरुष्क आदि देशों के राजाओं को अपनी तलवार के बल से आधीन किया था ‡'. अन्य लेखों में भी इस प्रकार दूर २ के देशों पर विजय प्राप्त

कादि में उत्तम सुगंधी के कारण उसे डालते हैं और औषधादि में भी उसका उपयोग होता है. ये दोनों भिन्न भिन्न जाति के वृक्षों से उत्पन्न होते हैं.

* कर्णाटभर्तुः पर्माण्डेः सुन्दरीं चन्दलाभिधां । आलेख्यलिखितां वीक्ष्य सो-
भूत्पुष्पायुधक्षतः ॥ १११६ ॥ ॥ स विदोद्रेचितो वीतत्रपश्चक्रे सभान्तरे । प्र-
तिज्ञां चन्दलावाप्त्यै पर्माण्डेश्च विलोडने ॥ ११२१ ॥ कृतापक्वित्रमकर्पूरपरित्यागं
प्रतिज्ञया । तं च स्तुतिमिषादेवं जहसुः कविचारणाः ॥ ११२२ ॥ ... ॥ आ
कर्णाटवसुंधराधववधादा चन्दलालिङ्गनादा कल्याणपुरप्रवेशनविधेरा'... ११२४ ॥
(कल्हणराचित राजतरंगिणी, तरंग ७)

† ए० क० जि० ७, पृ० १५२, नं० ११४; अंग्रेजी अनुवाद पृ० ८३.

‡ ए० क० जि० ११, पृ० ४०, नं० ३; अंग्रेजी अनुवाद पृ० २४.

करना लिखा मिलता है *, परन्तु हम उसको अतिशयोक्ति से रहित नहीं मान सकते.

उस (विक्रमादित्य) के राज्य के पिछले समय द्वारसमुद्र † का होयशल ‡ राजा विष्णुवर्द्धन, जो स्वतंत्र हो गया था, पाण्ड्य, गोवा और कौंकण आदि के राजाओं को अपने सहायक बनाकर उस (विक्रमादित्य) पर चढ़ आया, तो उसने अपने सेंद्रक वंशी सामंत आच (आचगी दूसरे) को उसके मुकाबले को भेजा, जिसका वृत्तान्त नरेगल + से मिले हुए आच के पुत्र के लेख में इस प्रकार दिया है, कि ' चक्रवर्ती राजा विक्रम की आज्ञा से आच ने होयशल का सामना कर उसको परास्त किया, गोवा छीन लिया, लक्ष्मण को रणखेत से भगाया, वीरता के साथ पाण्ड्य के राजा का पीछा किया, मलपों को हराया, और कौंकण छीन लिया' x. इस लेख से पाया जाता है, कि होयशल को हार कर लौटना पड़ा हो, परन्तु उसके पुत्र वीरवल्लाल के समय के गडक से मिले हुए लेख में ऐसा लिखा

* ए० क० जि० ७, पृ० १२५, १५२, १७१ और १८६; नं० १००, ११४, १२४, १३७. जि० ११, पृ० ३८, ७०, १६८; नं० २, ३५, २५.

† द्वारसमुद्र = होयशल (यादव) वंशी राजाओं की राजधानी. यह नगर निजामराज्य के हसन जिले में है, और इस समय हलेबीड नाम से प्रसिद्ध है.

‡ होयशल = दक्षिण के यादवों की एक शाखा. उक्त शाखा का होयशल नाम पड़ने का कारण ऐसा लिखा मिलता है, कि यादववंशी राजा शल को एक मुनि ने सिंह को मारने के लिये बुलाया, उस समय उक्त मुनि के मुख से 'होयशल' (अरेशल) ऐसा शब्द निकला, जिसपर से उक्त राजा से जो वंश चला वह होयशल नाम से प्रसिद्ध हुआ.

+ नरेगल = बंबई इलाते के धारवाड़ जिले में.

x बंब० ए० सो० ज० जि० ११, पृ० २४४.

है, कि “ विष्णुवर्द्धन ने अपनी राजधानी से लगाकर बेलवोल * तक के प्रदेश पर चढ़ाई कर कृष्णवेर्णा (कृष्णा) नदी में अपने घोड़ों को न्हिलाया और उसके सेवक लोग राजा परमर्दि (विक्रमादित्य) के मुख से निकले हुए—‘राजाओं में होयशल (विष्णुवर्द्धन) ही अजेय है’—इन सन्मान के शब्दों का बारंबार उसको स्मरण दिलाते थे” †. श्रवणबेलगोला ‡ से मिले हुए विष्णुवर्द्धन के प्रधान गंगराज जैन के लेख से पाया जाता है, कि ‘सोलंकी चक्रवर्ती त्रिभुवनमल्ल पेर्माडिदेव (विक्रमादित्य) का सैन्य १२ सामंतों सहित कन्नैगाल गांव के निकट ठहरा हुआ था, उस समय प्रधान गंगराज ने रात के समय उस पर अचानक हमला कर उस सोलंकी राजा के सामंतों को हराया, और उनका माल अस्वाथ तथा रथ छीन कर अपने मालिक के नज़र किये’ +. इस प्रकार दोनों पक्ष वाले अपनी अपनी विजय होना प्रकट करते हैं, परन्तु उपर्युक्त वृत्तान्त से अनुमान होता है, कि होयशल का सैन्य उस (विक्रमादित्य) की सेना के सम्मुख खड़ा होकर लड़ने को समर्थ न होगा, जिससे उसको शत्रु पर रात के समय अचानक हमला करना पड़ा हो. उसका कृष्णा नदी से आगे बढ़ना नहीं लिखा, जिसका कारण शायद ऐसा हो, कि कन्नैगाल के युद्ध के बाद उस (विष्णुवर्द्धन)

* बेलवोल (बेलवल) = बंवाई इहाते के धारवाड़ जिले का कितनाक हिस्सा.

† अनुजोपि चिरं राज्यं बुभुजे विष्णुवर्द्धनः ॥...॥ आरभ्य निजवासाद्बेलवोलपर्यंतमखिलमहीविषयम् । आक्रम्य येन धौतं तुरगवपुः कृष्णवेर्णायां ॥ यः स्मार्यते नियुक्तैः प्रत्युपचारं नृपेष्वसाध्यतया । परमर्दिदेवनृपतेर्होयसलमवधारयेति मुहुः ॥ (इ० ऐ० जि० २, पृ० ३००).

‡ श्रवणबेलगोला = दिगंबर जैनों का प्रसिद्ध तीर्थस्थान (माहसोर राज्यमें).

+ एपिमाफिआ कर्णाटिका, जि० २ (इन्डिकापुस्तक, पेढ़ श्रवणबेलगोला), पृ० १६, १२५-१२६.

को पीछा लौटना पड़ा हो, और सम्भव है कि उस समय आच ने उसका पीछा कर उसके सहायकों का पराजय किया हो, जैसा कि उपर्युक्त नरेगल के लेख में दर्ज है.

उपरोक्त आच अपने स्वामी के लिये बहुतसी और भी लड़ाइयां लड़ा था, क्योंकि उसके विषय में ऐसा लिखा मिलता है, कि 'उसने कर्लिंग, बंग, मरु, गुर्जर, मालव, चेर और चोल के राजाओं को अपने स्वामी के आधीन किया था' *. इससे अनुमान होता है, कि कर्लिंगादि देशों पर हमले किये जिनमें वह भी सेनापतियों में से एक हो, परन्तु वहां के राजाओं को मातहत बनाना लिखा है उसमें शायद अतिशयोक्ति हो. बिल्हण पंडित ने अपने पुस्तक में इन लड़ाइयों का उल्लेख नहीं किया, अतएव संभव है, कि वे उक्त पुस्तक के लिखे जाने बाद की घटनाएं हों.

विक्रमादित्य विद्यानुरागी और विद्वानों का आश्रयदाता था. प्रसिद्ध कश्मीरी पंडित बिल्हण को उसने अपने दरबार का मुख्य पंडित बनाया, जिसने 'विक्रमाद्वेवचरित' काव्य लिख कर उसका नाम अमर कर दिया. याज्ञवल्क्यस्मृति पर 'मिताक्षरा' नामक टीका बनाने वाला विज्ञानेश्वर पंडित भी उसका आश्रित हो ऐसा पाया जाता है, क्योंकि वह अपनी टीका के अन्त में लिखता है, कि 'पृथ्वी पर कल्याणपुर के समान न कोई नगर था, न है और न होगा. श्रीविक्रमार्क (विक्रमादित्य) जैसा राजा न देखा और न सुना; और न विज्ञानेश्वर की समानता करने वाला कोई पंडित है, अतएव ये तीनों कल्प के अंत

* आच के दूसरे पुत्र चावंड के समय के शक संवत् १०८४ (वि०सं० १२१६ = ई० स० ११६२ के पट्टलकड़ (बंबई इलाते के कलाडगी जिले के पट्टलकड़ तालुकके में) से मिले हुए लेख में—(बं० ५० सो० ज० जि० ११, पृ० २६६),

तक बने रहो. विद्वानों के आश्चर्य की सीमारूप मधुरवाणी का चक्ता, याचकों को उनकी इच्छा से अधिक द्रव्य देने वाला, कृष्णभक्त, शरीर के साथ जन्मे हुए (इंद्रियरूप) शत्रुओं को दमन करने वाला और तत्त्वज्ञानी राजा विक्रमादित्य सूर्य चंद्र की स्थिति पर्यंत जीता रहो. रघुकुलतिलक (रामचन्द्र) की कीर्तिरूप सेतु से लगाकर हिमालय तक, और पश्चिम समुद्र से पूर्व समुद्र तक के राजा जिसके चरणों में सिर झुकाते हैं वह विक्रमादित्य चंद्र और तारे बने रहें तब तक सारे जगत् का पालन करो' *. यह वर्णन अतिशयोक्ति के साथ लिखा गया है, तो भी इसमें तो संशय नहीं, कि कल्याण के सोलंकियों में विक्रमादित्य सबसे प्रतापी, देशविजयी तथा उदार राजा हुआ और उसके राज्य में प्रजा चैन से रही.

उसके बहुतसी राणियां थीं, जिनमें से ६ के नाम चंदलदेवी, † सांवलदेवी ‡, लक्ष्मीदेवी, जङ्गलदेवी †, मलयवतीदेवी,

* नासीदस्ति भविष्यति क्षितितले कल्याणकल्पं पुरं नो दृष्टः श्रुत एव वा क्षितिपतिः श्रीविक्रमार्कोपमः । विज्ञानेश्वरपण्डितो न भजते किंचान्यदन्योपमश्चाकल्पं स्थिरमस्तु कल्पलतिकाकल्पं तदेतत्त्रयम् ॥ ४ ॥ स्रष्टा वाचा मधुरवपुषा विश्वदाश्चर्यसीम्ना दातार्थानागनिशयजुषामर्थिसार्थार्थनायाः । ध्याता मूर्तेर्मुखविजयिनो जीवतादार्कचन्द्रं जेतारीणां तनुसहभुवां तत्त्वविज्ञाननाथः ॥ ५ ॥ आ सेतोः कीर्तिराशे रघुकुलतिलकस्या च शैलाधिराजादा च प्रत्यक्पयोधेश्चटुलतिगिकुलोत्तुङ्गरिक्तरंगात् । आ च प्राचः समुद्रान्नतनृपतिशिरोरत्नभाभासुराङ्घ्रिः पायादाचन्द्रतारं जगदिदमखिलं विक्रमादित्यदेवः ॥ ६ ॥ (याज्ञवल्क्यस्मृति मिताक्षराटीकासहित, पृ० ४५५).

† चंदलदेवी से जयकर्ण उत्पन्न हुआ था.

‡ सांवलदेवी सूर्यवंशी महामंडलेश्वर (सागंत) जोगगरस की पुत्री थी.

+ जङ्गलदेवी कदंब वंशी लिङ्ग की पुत्री थी.

और मालिकादेवी मालूम हुए हैं. उनमें से केवल चंदलदेवी का नाम बिल्हण पंडित ने अपने विक्रमाङ्कदेवचरित में दिया है, जो उसकी अग्रमाहिषी (पटराणी) होनी चाहिये. उसके दो पुत्र सोमेश्वर और जयकर्ण *, तथा मैमलदेवी नामक एक कन्या का होना पाया जाता है. मैमलदेवी का विवाह गोवा के कदंब वंशी सामंत जयकेशी के साथ हुआ था, जिसके दहेज में बहुतसा द्रव्य, हाथी आदि दिये थे †. उस (विक्रमादित्य) के समय के १५० से अधिक शिलालेख मिले हैं, जिनमें उसके सामंतों और सेनापतियों के नाम तथा उनके वंशों का वृत्तान्त आदि मिलता है. पचास वर्ष राज्य कर शक संवत् १०४८ ‡

* जयकर्ण सोमेश्वर से बड़ा था या छोटा यह स्पष्ट नहीं हुआ. उसका नाम शक संवत् १००६ (वि० सं० ११४४=ई० स० १०८७) के लेख में मिलता है, जब कि वह अपने पिता के राज्य समय एक जिले का शासन करता था. उक्त संवत् के पीछे के किसी लेख में उसका नाम नहीं मिलता, जिससे अनुमान होता है, कि शायद उसका देहान्त अपने पिता के साम्हने ही हो गया हो.

† स कौकशादगातलरत्नदीपस्तम्भादथासीज्जयकेशिभूपः । साहित्यलीलाल-
लिताभिलापः संभावितानेकसुधीकलापः ॥ ... ॥ चालुक्यवंशेश जगत्प्रकाशः प्रा-
दुर्बभूवोर्जितकोशदेशः । दिशांपतीनामपि चित्तवर्ती पराकर्मा विक्रमचक्रवर्ती ॥...॥
उपयेमे सुतां तस्य जयकेशिमहीपतिः । स मैमलमहादेवीं जानकीमिव राघवः ॥
(बंब० ए० सो० ज० जि० ६, पृ० २६७, जयकेशी के पुत्र शिवचित्त पेर्माडि के
लेख से). बिभ्रदभ्रासकीर्तिः श्रीजयकेशिनृपोभवत् । भूभृत्त्राणपरायणः पृथुयशा
गांभीर्यरत्नाकरः श्रीपेर्माडिनृपः पयोनिधिनिभः सोमानुजां कन्यकां । यस्मै विस्म-
यकारिभूरिविभवैर्दत्त्वेभकोशादिभिः ख्यातः श्रीपतये स मैमलमहादेवीं कृतार्थोभव-
त् ॥ (बंब० ए० सो० ज० जि० ६, पृ० २४२, उपर्युक्त शिवचित्त के भतीजे
जयकेशी के ताम्रपत्र से).

‡ शक सं० १०४७ (वि० सं० ११८२=ई० स० ११२५) भाद्रपद कृ०
१३ का विक्रमादित्य का लेख मिला है, और उसके पुत्र सोमेश्वर के राज्य के

(वि० सं० ११८३ = ई० स० ११२६) में करीब १०० * वर्ष की अवस्था में उसका देहान्त होने पर उसका पुत्र सोमेश्वर उसका क्रमानुयायी बना.

बिल्हण कवि

बिल्हण कवि कश्मीर देश के खोनमुख † गांव का रहनेवाला कौशिक गोत्री ब्राह्मण था. उसके विद्वान् पूर्व पुरुषों को राजा गोपादित्य ‡ ने मध्यदेश + से बुलवाकर वहां पर रक्खा था, जिनमें अग्निहोत्री मुक्तिकलश अपने कुल का भूषण हुआ. उसका पुत्र राजकलश दानी, पराक्रमी और वेदविद्या में पारंगत था. उसने लोगों के सुख के

तीसरे वर्ष का लेख कीलक संवत्सर का है. दक्षिणी बार्हस्पत्य गणना के अनुसार कीलक संवत्सर श० सं० १०५० (वि० सं० ११८५ = ई० स० ११२८) था, अतएव विक्रमादित्य का देहान्त और सोमेश्वर का राज्याभिषेक श० सं० १०४८ (वि० सं० ११८३) में होना स्थिर होता है.

* चोल देश के राजा राजाधिराज के राज्यवर्ष २६ वें अर्थात् श० सं० १०६८ (वि० सं० ११०३ = ई० स० १०४६) के लेख से पाया जाता है, कि उक्त संवत् से कुछ पूर्व वह सोलंकी अहवमल्ल (सोमेश्वर प्रथम) से लड़ा था, और उक्त युद्ध में उस (अहवमल्ल) का पुत्र विविक (विक्रमादित्य) भी शामिल था. यदि उस समय विक्रमादित्य की उमर १६ वर्ष की मानी जाये, तो भी देहान्त समय उसकी अवस्था १०० वर्ष के करीब होनी चाहिये.

† खोनमुख को इस समय ' खुन्मोह ' कहते हैं, और कश्मीर की राजधानी प्रवरपुर (श्रीनगर) से तीन मील दूर जयवन नामक स्थान के निकट है.

‡ गोपादित्य = कश्मीर के गोनंदवंशी राजा अक्ष का पुत्र और नर (दूसरे) का पौत्र था. उसका समय यथार्थ निश्चित नहीं हुआ, परन्तु उसका ईसवी सन् की तीसरी शताब्दी के आस पास होना अनुमान किया जा सकता है.

+ मध्यदेश = हिमालय और विंध्याचल के बीच का देश (मनुस्मृति २ । २१).

निमित्त कई स्थानों में दाखों के बाग, व्याख्यानस्थान, निर्मल जल के कुए और प्रपा (प्पाऊ) आदि बनवाये थे. उसके पुत्र ज्येष्ठकलश ने महाभाष्य * पर टीका की, जिसके नागादेवी नामक स्त्री से तीन पुत्र इष्टराम, बिल्हण और आनन्द हुए, जो तीनों ही विद्वान् और कवि थे.

बिल्हण ने कश्मीर में रहकर वेद, वेदांग, व्याकरण, साहित्य आदि शास्त्रों का अध्ययन किया, और उसकी कविता की ख्याति दूर दूर तक फैल गई थी. राजा कलश † के राज्य समय उसने स्वदेश से प्रस्थान किया और मथुरा, वृन्दावन, कन्नौज, प्रयाग और बनारस में कुछ दिनों तक ठहरता और वहाँ के पंडितों से शास्त्रार्थ करता हुआ वह डालहल के राजा कर्ण के दरबार में पहुँचा, जहाँपर पंडित गंगाधर को शास्त्रार्थ में जीतने बाद वह धारा नगरी में पहुँचा, परन्तु उस समय वहाँ का विद्वान् राजा भोज ‡ मर चुका था. फिर गुजरात होता हुआ सोमनाथ

* महाभाष्य=पाणिनि के रचे हुए अष्टाध्यायी नागक व्याकरण की पतंजलि रचित टीका.

† कलश=कश्मीरका राजा, जिसने वि० सं० ११२० से ११४६ (ई० सं० १०६३ से १०८९) तक राज्य किया था.

‡ डॉक्टर बूलर ने विक्रमादित्यचरित की भूमिका में लिखा है, कि 'बिल्हण की यात्रा के समय राजा भोज विद्यमान था, जिससे वह किसी कारणवशात् नहीं मिला' (पृ० १९; २३), परन्तु उनका यह लिखना स्वीकार नहीं हो सकता, क्योंकि राजा भोज वि० सं० १११२ (ई० सं० १०५५) के पूर्व मर चुका था, और उक्त संवत् में जयसिंह धारा का राजा था, तथा वि० सं० १११५ (ई० सं० १०५८) में उदयानित्य राज्य पा चुका था, ऐसा परगारों के लेखों से सिद्ध है. कल्हण पंडित अपनी राजतरंगिणी में स्पष्ट लिखता हैं, कि बिल्हण राजा कलश के समय कश्मीर से निकला था (कश्मीरेभ्यो विनिर्यान्त

पहुँचा, जहाँसे ससुद्रमार्ग से दक्षिण को गया, और वहाँ से रामेश्वर होकर उत्तर को लौटता हुआ कल्याणपुर में आया, जहाँ पर राजा विक्रमादित्य ने उसको बड़े सन्मान से रक्खा, और विद्यापति (मुख्यपंडित) की उपाधित्था बड़ी समृद्धि दी. उसने वहाँ रहकर अपनी वृद्धावस्था में वि० सं० ११४२ (ई० स० १०८५) के करीब 'विक्रमाङ्कदेवचरित' काव्य रचा. उसका दूसरा पुस्तक 'कर्णसुन्दरी नाटिका' है, जिसका नायक गुजरात का सोलंकी राजा कर्ण है, जो भीमदेव का पुत्र था. वह नाटिका उसने राजा कर्ण के समय अणहिलपुर में आदिनाथ के यात्रा-महोत्सव पर अभिनय करने के लिये बनाई थी. आश्चर्य नहीं, कि सोमनाथ जाते समय वह गुजरात की राजधानी (अणहिलपुर) में कुछ काल तक ठहरा हो, और उस समय उसने महामात्य संपत्कर (सांतु) की प्रेरणा से उसकी रचना की हो.

बिल्हण का तीसरा पुस्तक 'बिल्हणचरितकाव्य' * माना जाता है, परन्तु वह उक्त कवि का बनाया हुआ नहीं है. उसमें

राज्ये कलशभूपते: । विद्यापतिं यं कर्णाटश्चक्रे पर्माडिभूपतिः—तरंग ७, श्लोक ६३५) और कलश भोज के देहान्त के पीछे वि० सं० ११२० (ई० स० १०६३) में राज पाया था, अतएव बिल्हण की यात्रा के समय भोज का विद्यमान होना किसी प्रकार संभव नहीं हो सकता. विक्रमाङ्कदेवचरित के १८ वें सर्ग में लिखा है, कि 'धारा नगरी पश्चात्ताप के साथ (बिल्हण से) कहती है, कि तू राजा भोज के सामने क्यों न आया' (भोजः क्षमाभृता खलु न खलस्तस्य साम्यं नरेन्द्रैस्तत्प्रत्यक्षं किमिति भवता नागतं हा हतास्मि । यस्य द्वारोद्धुमरशि-खरक्रोडपारावतानां नादव्याजादिति सकरुणं व्याजहारेव धारा—श्लो० ६६), जिस का आशय डॉक्टर बूलर ने यह समझा, कि तू भोज से क्यों न गिला (जो विद्यमान था), परन्तु उसका आशय यही है, कि भोज के समय (भोज के जीतेजी) क्यों न आया.

* बिल्हणचरित की अधिकतर प्रतियों में उसके बनानेवाले का नाम नहीं

लिखा है, कि 'गुजरात के राजा वैरिसिंह के राज्यसमय कश्मीरी पंडित बिल्हण अणहिलपत्तन में पहुंचा, तो राजा ने उसकी विद्वत्ता की ख्याति सुनने पर अपनी पुत्री शशिकला को पढ़ाने के लिये उसे नियत किया. कुछ समय बाद वह उस राजकन्या के साथ प्रेम में फँस गया, जिसकी खबर पाने पर राजा ने उसके लिये प्राणदंड की आज्ञा दी. जब उसको वधस्थान पर लेजाकर यह कहा गया, कि अब तेरे इष्टदेव का स्मरण करले, तो उसने 'अद्यापि तां कनकचम्पकदामगौरीं' इस पद से प्रारम्भ कर उक्त राजकन्या के स्मरण में ५० श्लोक कहे, इतने में राजा ने अपनी राणी के मुख से अपनी कन्या का उस (बिल्हण) पर पूर्ण प्रेम होना सुना, जिससे उसका कोप कुछ शांत हुआ, और अपनी प्रजा तथा मंत्रियों के निवेदन करने पर ब्राह्मणवध के पाप से डरकर, जो कुछ होनहार था सो हुआ, ऐसा मानकर उसने उसका अपराध क्षमा किया और शशिकला का विवाह उस के साथ कर बहुत से गाँव, घोड़े और द्रव्य आदि समृद्धि उसे दी'.

बिल्हण के समय गुजरात में वैरिसिंह * नामक राजा ही नहीं था (वह राजा कर्ण के समय गुजरात में पहुंचा था). उपर्युक्त सारी कथा कल्पित है और बिल्हण के वृत्तान्त से परिचय न रखनेवाले किसी कवि की रचना है. उक्त काव्य में जो 'अद्यापि तां कनकचम्पकदामगौरीं' से शुरू होनेवाले ५० श्लोक हैं वे 'चौरपंचाशिका' अथवा 'सुरतपंचाशिका' नाम से भी प्रसिद्ध हैं, और उन ५० श्लोकों का एक अलग ही काव्य

मिलता, परन्तु 'काव्यमाला' में छपी हुई पुस्तक में उसके कर्ता का नाम 'काश्मीरकबिल्हण कवि' मिलता है, जो विश्वास योग्य नहीं है.

* वैरिसिंह=चापोत्कट (चावड़ा) वंश का राजा था, जिसने वि० सं० ८१४ से १०५ (ई० सं० ८३८ से ८४९) तक गुजरात पर राज्य किया था.

मिलता है, जिसके सब श्लोक व्यर्थ हैं. उनका आशय जैसे राजकन्या के साथ घटता है वैसे ही दुर्गा के साथ भी घट सकता है. हस्तलिखित पुस्तकों में कहीं उसके कर्ता का नाम बिल्हण मिलता है, तो कहीं चौर * कवि और कहीं सुंदर † कवि मिलता है. हमारा अनुमान यह है, कि वह काव्य बिल्हण कवि का बनाया हुआ नहीं है. यदि ऐसा होता, तो उसमें उक्त राजकन्या के पिता का नाम वैरिसिंह कभी नहीं मिलता और उस (बिल्हण) का कुछ विश्वासयोग्य चरित्र अवश्य होता.

बिल्हण ने उपर्युक्त दो पुस्तकों के अतिरिक्त और भी काव्य रचे हों ऐसा पाया जाता है, क्योंकि 'शार्ङ्गधरपद्धति' और 'सूक्तिमुक्तावलि' आदि सुभाषित के संग्रह ग्रंथों में उसके रचे हुए ऐसे श्लोक मिलते हैं, जो उपर्युक्त दोनों पुस्तकों में नहीं हैं.

ऐसा मेरुतुंगरचित 'विचारश्रेणी' नामक पुस्तक से पाया जाता है. बिल्हण कवि गुजरात में आया उस समय वैरिसिंह को मरे २०० से अधिक वर्ष हो चुके थे.

* नोटिसिज़ ऑफ़ संस्कृत मैनुस्क्रिप्ट्स (डाक्टर राजेन्द्रलालमित्र संगृहीत)
जि० १, पृ० २५०, नं० ४४१.

‡ इति सुन्दरकविविरचितं चौरपञ्चाशिकाख्यं काव्यं समाप्तं ॥ श्रीकाली जयति ॥०॥ शाके नवग्रहहिमांशुसमुद्रचन्द्रे सूर्ये गते परिमिते मिथुने गिरीशं । १-
सुन्दरेण रचितं प्रथमं सुकाव्यं काश्यादिनाथचरमद्विज आलिलेख—(कलंकसे की संस्कृत कॉलेज लाहौरी के संस्कृत पुस्तकों की सूची, नं० १७, काव्य, पृ० २६, नं० ४४).

प्रकरण आठवा.

सोमेश्वर (तीसरा).

सोमेश्वर के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' तथा 'भूलोकमल्ल' मिलते हैं और विद्वान् होने के कारण वह साक्षरवर्ग में 'सर्वज्ञचक्रवर्ती' कहलाता था. सिंदवंशी सामंत चावण्ड दूसरे के लेख * से पाया जाता है, कि 'वह (सोमेश्वर) सारे जगत की प्रशंसा के योग्य था, उस ने अपने चरणकमल आंध्र, द्रविड़, मगध और नेपाल के राजाओं के सिर पर रखे थे, विद्वज्जन उसकी प्रशंसा करते थे और राजाओं में वह सर्वज्ञ गिना जाता था' १. उक्त लेख में मगध और नेपाल के राजाओं को आधीन करना लिखा है उस में अतिशयोक्ति हो तो आश्चर्य नहीं, क्योंकि उस विषय का कोई अन्य प्रमाण नहीं मिलता. बलगांव से मिले हुए एक शिलालेख में दर्ज है, कि 'सोलंकी राजा सोम ने अपने बलवान् भुजों पर पृथ्वी का भार धारण कर शेष के सिर का बोझ उतार दिया, उस की विशाल छाती में भाग्यलक्ष्मी का तथा तलवार में वीरश्री का निवास था, और मुख सरस्वती का नाभ्यगृह था. वह राजा दिग्विजय करता हुआ दक्षिण में पहुँचा,

* यह लेख शक सं० १०८४ (वि० सं० १२१६=ई० सं० ११६२) का है, और बंबई इहाते के कलाडगी जिले के पट्टलकड़ गांव के एक मंदिर में लगा हुआ है. चावण्ड दूसरा सोमेश्वर के दूसरे पुत्र तैल का सामंत था.

१. अं० ४० सौ० ज० जि० ११, पृ० २६८.

और अपने विजयी सैन्य को हुल्लुनी तीर्थ के निकट ठहरा कर स्वस्थचित्त से धर्मसम्बन्धी विषयों पर वादानुवाद कर रहा था, उस समय कदंब वंशी राजा तैल * ने धलगांव के लोगों के सदाचार आदि का हाल निवेदन किया, जिसपर उसने एक गांव वहां को मन्दिर को भेट किया, जब कि उसके राज्य का तीसरा वर्ष चल रहा था †. इससे स्पष्ट है, कि उसने अपने राज्य के तीसरे वर्ष में दक्षिण के किसी राजा पर चढ़ाई की थी. उसने अपने राज्य के चौथे वर्ष अर्थात् शक संवत् १०५१ ‡ (वि० सं० ११८६ = ई० स० ११२६) में 'मानसोल्लास' नामक संस्कृत का बड़ा ग्रन्थ रचा, जिसको 'अभिलषितार्थचिंतामणि' भी कहते हैं. उसमें राज्यप्राप्ति के साधन, राज्य स्थिर करने के उपाय, स्थिरराज्यवाले राजाओं के विनोद आदि विषयों के अतिरिक्त ज्योतिष, अलंकार, कविता, संगीत, चित्रविद्या, शिल्प, वैद्यक आदि अनेक विषय हैं.

उस (सोमेश्वर) के समय के २० से अधिक शिलालेख मिले हैं, जिनमें विशेष ऐतिहासिक वृत्तान्त नहीं है. उसके दो पुत्र जगदेकमल्ल और तैल थे, जिनमें से बड़ा (जगदेकमल्ल) शक संवत् १०६० † (वि० सं० ११६५ = ई० स० ११३८) में उसका उत्तराधिकारी हुआ.

* तैल = सोमेश्वर का सामंत और बनवासी पुर का राजा था.

† माइसूर इन्स्क्रिप्शन्स, पृ० ८८-८९.

‡ एकपंचाशदधिके सहस्रे शरदां गते । शकस्य सोमभूपाले सति चालुक्य-मण्डने ॥ समुद्ररसनामुर्वी शासति क्षतविद्विषि । सर्वशास्त्रार्थसर्वस्वपाथोधिक-लशोद्वे ॥ सौम्यरावत्सरे चैत्रमासादौ शुक्रवासरे । परिशोधितसिद्धांतलब्धाः स्युर्भुवका इमे ॥...॥ इति श्रीमहाराजाधिराज रात्याश्रयकुलातिलकचालुक्याभरण-श्रीमद्भूलोकगल्ल श्रीसोमेश्वरदेवविरचिते अभिलषितार्थचिंतामणौ मानसोल्लासे....

† जगदेकमल्ल दूसरे के कई शिलालेखों में बार्हस्पत्य संवत्सर दिये हैं, जिन-

जगदेकमल्ल (दूसरा).

जगदेकमल्ल के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'प्रतापचक्रवर्ती' मिलते हैं, और उसको 'पेर्म' भी कहते थे, जो 'परमर्दि' नाम का लौकिक (प्राकृत) रूप है.

उस के समय द्वारसमुद्र का होयशल (यादव) वंशी राजा विष्णुवर्द्धन कितने एक राजाओं और सामंतादि की सहायता लेकर फिर सोलंकी राज्यपर चढ़ आया, तो उसका मुक्ताबला उपर्युक्त सामंत आच के पुत्र पेर्माडि ने किया, जिसका वृत्तान्त उपर्युक्त नरेगल के लेख में इस प्रकार दिया है, कि 'राजा पेर्माडि ने कुलशेखर को जीता, घट्ट को घेर उसका सिर काटा, जयकेशी को भयभीत कर उसका पीछा किया, राजाओं के अग्रणी होयशल की राजसत्ता छीनने के लिये उस लुटेरे बाह्मि (विष्णुवर्द्धन) को घाटियों में जा दबाया, दोरसमुद्र (द्वारसमुद्र) पर घेरा डाला, और बेलूर नगर तक उसका पीछा कर बहाड़ी की घाटियों में उसको भगाया, तथा उसके सहायक राजाओं को परास्त कर उनके हाथी छीन लिये' *. पेर्माडि के

से यह संवत् निश्चय होता है. कोल्हापुर राज्य के राजबाग नामक स्थान के एक जैन मंदिर के लेख में सिद्धार्थ संवत्सर अर्थात् श० सं० १०६१ (वि० सं० ११९६) में उसके राज्य का दूसरा वर्ष होना लिखा है (कर्णाटदेश इन्स्क्रिप्शंस, जि० १ पृ० ७३६; बंब० गे० जि० १, भा० २, पृ० ४५७), जिससे श० सं० १०६० (वि० सं० ११९५) में उसका राज्याभिषेक होना स्थिर होता है.

* बंब० गे० सो० ज० जि० ११, पृ० २४४-२४५.

छोटे भाई चावड के समय के श० सं० १०८४ (वि० सं० १२१६ = ई० स० ११६२) के लेख में यह लिखा है, कि 'राजा आच के पुत्र राजा पेम्म (पेर्माडि) ने होयशल (विष्णुवर्द्धन) को, जो चांगिरि, चोल, चेर *, मलय, मलेयेल †, तुलु, कोल्ल ‡, पल्लव और बनवासी आदि देशों पर कूरता के साथ राज्य करता था, भयभीत कर भगाया और उसके बहुत से हाथी छीन लिये' +. इन प्रमाणों से पाया जाता है, कि विष्णुवर्द्धन को दूसरी चढ़ाई में भी विजय प्राप्त नहीं हुई थी, परन्तु इन लड़ाइयों से सोलंकियों का राज्य कमजोर होता जाता था.

उस (जगदेकमल्ल) के पुत्र न होने के कारण उसका छोटा भाई तैल शक संवत् १०७१ (वि० सं० १२०६ = ई० स० ११५०) के अंत × में अथवा १०७२ (वि० सं० १२०७ = ई० स० १०५६) के प्रारम्भ में उसका उत्तराधिकारी हुआ. जगदेकमल्ल के समय के ४० से अधिक शिलालेख मिले हैं.

————— 101 —————

* चेर=माइसोर राज्य का एक अंश.

† मलेयेल=मद्रास इहाते में, तुलु=गद्रास इहाते में.

‡ कोल्ल=किलोन (मद्रास इहाते में) के आस पास का प्रदेश.

+ बंब० ए० सो० ज० जि० ११, पृ० २७०.

× जगदेकमल्ल के समय का बलगांव से मिला हुआ लेख शुक्र संवत्सर-अर्थात् शक सं० १०७१ (वि० सं० १२०६ = ई० स० ११४९) कार्तिक शु० १५ का है (माइसोर इन्सक्रिप्शन्स, नं० ३२, पृ० ६०) और तैल के समय के बीजापुर से मिले हुए प्रजापति संवत्सर अर्थात् शक सं० १०७३ (वि० सं० १२०८ = ई० स० ११५१) के भाद्रपद मास के लेख में उसके राज्य का तीसरा वर्ष होना लिखा है, अतएव जगदेकमल्ल का देहान्त, और तैल का राज्याभिषेक (१०७३-२ =) श० सं० १०७१ के अंत में अथवा १०७२ के प्रारम्भ में होना स्थिर होता है.

तैल (तीसरा).

तैल (तीसरे) के थिरुद 'पृथिवीवल्लभ', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'त्रैलोक्यमल्ल' मिलते हैं और उसको 'तैलप' (दूसरा) तथा 'नूरमडि तैल' भी कहते थे. उसके बड़े भाई के समय से ही राज्यप्रबंध शिथिल होने लगा था जिससे उसके समय कितने एक सामंत स्वतंत्र होने के उद्योग में लगे, और कलचुरी (हैहय) वंशी सामन्त विज्जल ने, जो उसका सेनापति था, दूसरे सामंतों से मिलावट कर उसका राज्य छीनने का प्रबंध किया. ऐसे में तैलंगण के काकतीय वंशी राजा प्रोलराज * (प्रोडराज) ने विज्जल की प्रेरणा से वा अपनी इच्छा से तैल पर चढ़ाई की, जिसके विषय में उस (प्रोलराज) के पुत्र रुद्रदेव के समय के अनंकोंड † के लेख में यह लिखा है, कि 'प्रोलराज ने सोलंकीचूडामणि तैलपदेव को, जो हाथी का चढ़ैया और निरंतर युद्ध के विचार में लभा रहने वाला था. युद्ध में पकड़ लिया, परंतु उसको पीछा छोड़ दिया' ‡. यह वृत्तान्त यथार्थ है वा अतिशयोक्ति के साथ लिखा गया है इसका निर्णय करने के लिये कोई दूसरा साधन नहीं है, तो भी इसमें संशय नहीं, कि इस लड़ाई के पीछे तैल निर्बल हो गया था, जिससे विज्जल को अपने उद्योग में सफलता प्राप्त करने का सुभीता हुआ, और शक संवत् १०७६ और १०८४ (वि०

* प्रोलराज (प्रोडराज) = वेतमराज का पुत्र था.

† अनंकोंड = निजाम राज्य में (बरंगल से उतर कुछ दूर).

‡ प्रोलराज इति प्रसिद्धिमगमद्वैरीन्द्रदर्पापहो निशंकप्रधनप्रबंधनमहाहंकारल-
केश्वरः ॥ हस्त्यारोहणकर्मकर्मठगतिं चालुक्यचूडामणिं शश्वद्युद्धनिबद्धगह्वरमतिं
युद्धे बंधन क्षणात् । श्रीमत्तैलपदेवमनुदनिभस्तवेरगस्थं क्षणात्प्रख्यातो रिपुकंठखं-
डनविबो भक्त्यानुरागाज्जहौ ॥ (इ० पृ० जि० ११, पृ० १२-१३).

सं० १२१४ और १२१६=ई० स० ११५७ और ११६२) के बीच* वह तैल से राज्य छीनकर कल्याण की गद्दी पर बैठ गया, जिससे तैल अपनी राजधानी छोड़ कर अणिगरे में जा रहा. वहाँ पर भी विज्जल ने उसका पीछा किया, जिससे वह बन-वासी की तरफ जा रहा.

शक संवत् १०८४ (वि० सं० १२१६=ई० स० ११६२) में ‡ तैल का देहान्त होने पर उसका पुत्र सोमेश्वर उस के रहे सहे राज्य का मालिक हुआ.



* शक सं० १०७६ (वि० सं० १२१४=ई० स० ११५७) के पूर्व के लेखों में विज्जल को महामंडलेश्वर (रागांत) और तैल का सेवक लिखा है, परन्तु उक्त संवत् से उराने अपना राज्यवर्ष (सन् जुलूस) लिखना प्रारम्भ किया, और 'त्रिभुवनमल्ल,' 'भुजबलचक्रवर्ती' तथा 'कलचुरिचक्रवर्ती' बिरुद धारण किये, तो भी कुछ दिनों तक वह महामंडलेश्वर कहलाता रहा था. शक सं० १०८४ (वि० सं० १२१६=ई० स० ११६२) के लेख में उसके नाम के साथ 'समस्तभुवनाश्रय,' 'महाराजाधिराज,' 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' आदि स्वतंत्र राजा के खिताब लिखे मिलते हैं, जिससे अनुमान होता है, कि श० सं० १०७६ और १०८४ के बीच क्रमशः उसने अपने मालिक तैल का राज्य छीना हो. कोल्हापुर के शिलारावशी राजा भोज दूसरे के सगय के श० सं० १११३ (वि० सं० १२४८=ई० स० ११९१) के ताम्रपत्र में उक्त भोज के पिता महामंडलेश्वर विजयार्क की मैत्री से विज्जल का चक्रवर्ती होना लिखा है, जिससे पाया जाता है, कि विज्जल ने जिन रामन्तों को अपने पक्ष में मिला रक्खा था उनमें एक कोल्हापुर का शिलारा विजयार्क भी था.

† अणिगरे=बंरई इहाते के धारवाड़ जिले के नवलगंड विभाग में है.

‡ तैल के सगय के १० से अधिक शिलालेख मिले हैं, जिनमें से सबसे पिछला शक सं० १०८४ (१०८५ वर्तमान) ज्येष्ठ शुक्ल १५ का है, और उपर्युक्त अनकोंड का लेख श० सं० १०८४ माघ शुक्ल १३ का है, जिसमें तैल के मरने का हाल है (यातेपि तैलपनृपे दिवमस्य भीत्या सर्वातिसारकवलीकृतगात्रयष्टौ । श्रीरुद्रदेवनृपतेः पृथुधिकमस्य भीमोपि राज्यपदवीं क्षणिकां स लेभे—इ०

सोमेश्वर (चौथा).

तैल से राज्य छीनकर हैहय (कलचुरी) वंशी विज्जल कल्याण की गद्दी पर बैठ गया, और पश्चिमी सोलंकी राज्य का बड़ा हिस्सा उसीके अधिकार में रहा, जिससे सोमेश्वर को अपने पूर्वजों की राजधानी में रहने का अवसर नहीं मिला, किन्तु उसको कुछ समय तक बनवासी की तरफ ही रहना पड़ा.

कनड़ी भाषा के 'बसवपुराण' नामक पुस्तक से पाया जाता है, कि विज्जल के राज्य समय बसव नाम के ब्राह्मण ने जैनधर्म को नष्ट कर शैव मत को पीछा हट करने की इच्छा से लिंगायत * (वीरशैव) नाम का एक नवीन पंथ चलाया. उसके सद्गुणों से रंजित होकर विज्जल ने उसको अपना मंत्री नियत किया, परन्तु जब वह लिंगायत धर्मोपदेशकों (जंगमों) के लिये राज्य का बहुतसा द्रव्य खर्च करने लगा, तो विज्जल, जो जैनमतावलम्बी था, उसपर अप्रसन्न हुआ, और दिन दिन दोनों के बीच वैर-भाव बढ़ता गया, जिससे विज्जल ने एक दिन कल्याण में रहने-वाले दो लिंगायत जंगमों की आंखें निकलवा डालीं. इसपर बसव कल्याण से भाग गया, परन्तु उसके भेजे हुए जगदेव नामक लिंगायत ने अपने दो मित्रों सहित राजमहल में प्रवेश कर विज्जल को मार डाला (वि० सं० १२२५ = ई० सं० ११६८ में). उसके मारे जाने पर राज्य में उपद्रव मचा, और उसका पुत्र सोविदेव (सोमदेव) कल्याण के सिंहासन पर बैठा. उस समय से सोमेश्वर ने अपने पूर्वजों का राज्य पीछा लेने का उद्योग

ऐ० जि० ११, पृ० १३), अतएव तैल का देहान्त शक सं० १०८४ ज्येष्ठ शु० १५ और माघ शु० १३ के बीच होना चाहिये.

* लिंगायत पंथ के लोग अहर्निश अपने गले में शिवलिंग लटकाये रहते हैं, जो चांदी की लंबी डिविया में रक्खा होता है.

किया, और बोम्म (ब्रह्म) नामक सेनापति की बीरता * से प्रथम अण्णगेरे पर अपना अधिकार जमाया और पीछे से कल्याण भी ले लिया. इस प्रकार अपने पूर्वजों का राज्य पाने पर उसने 'त्रिभुवनमल्ल' और 'चालुक्यचक्रवर्ती' धिरुद न धारण किये, परन्तु थोड़े ही वर्षों बाद शक संवत् ११११ (वि० सं० १२४६ = ई० स० ११८६) के करीब उसके राज्य के उत्तरी और पूर्वी हिस्से देवगिरि के यादव राजा भिल्लम ‡ ने छीन लिये, और उसी समय के आस पास होयशल राजा वीरबल्लाल ने उसके सेनापति ब्रह्म को परास्त कर उसके राज्य का दक्षिणी हिस्सा + ले लिया. इस प्रकार सोमेश्वर × (चौथे) के साथ-प-श्चिमी सोलंकियों के महाराज्य की समाप्ति हुई.

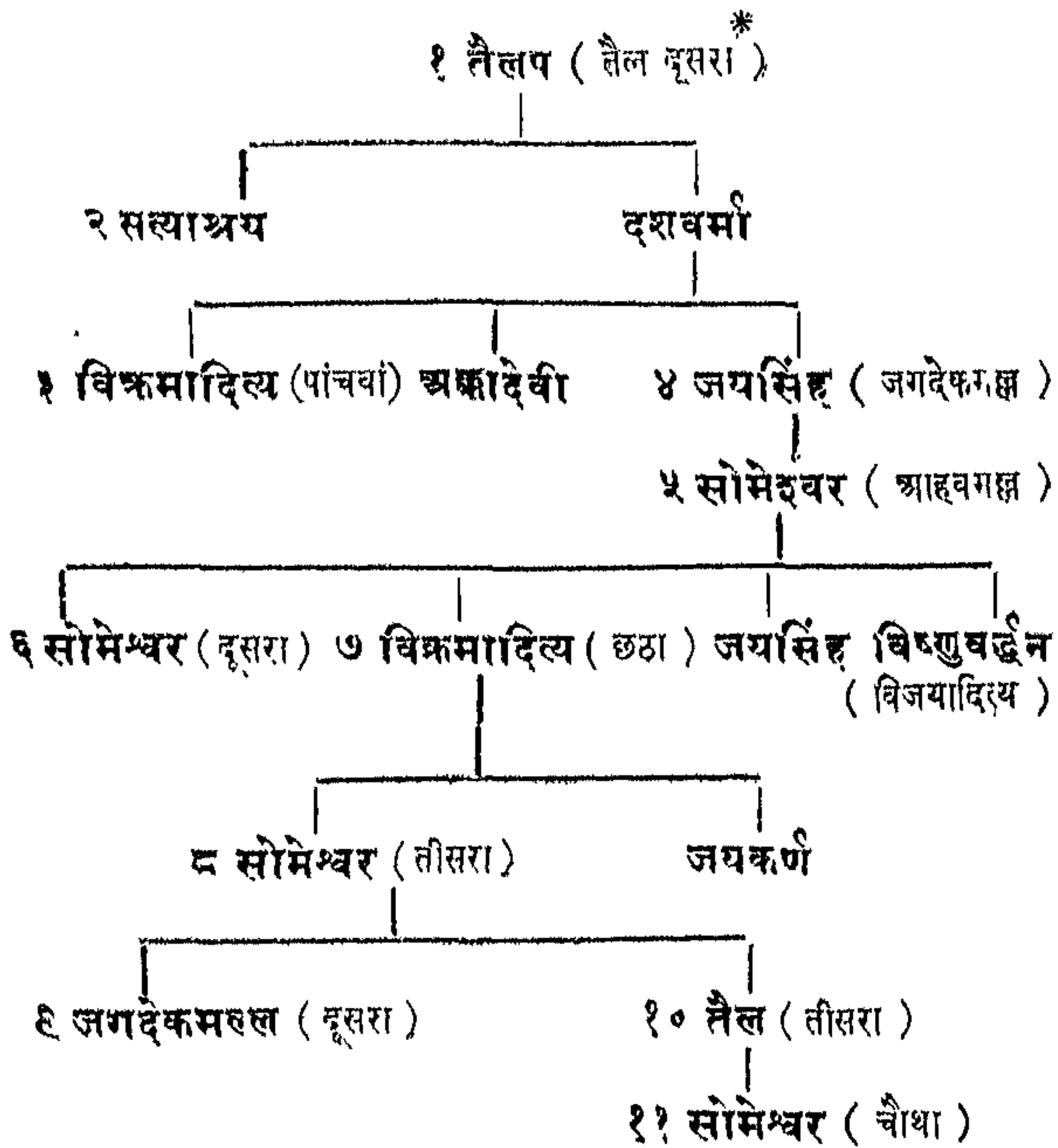
* अण्णगेरे से गिले हुए शक सं० ११०६ (वि० सं० १२४१ = ई० स० ११८४) के लेख में ब्रह्म को कलचुरियों को नष्ट कर सोलंकी सोमेश्वर को सारी पृथ्वी का मालिक बनावेवाला, और गडग से गिले हुए लेख में कलचुरियों का राज्य छीननेवाला, तथा एक हाथी से ६० हाथी जीतनेवाला लिखा है (कर्णाटदेश इतिहासः, जि० २, पृ० ३७; और इ० ऐं० जि० २, पृ० ३००), अतएव श० सं० ११०६ (वि० सं० १२४१) के पूर्व सोमेश्वर ने अपने पूर्वजों का राज्य पीछा लिया होगा.

† इसके अतिरिक्त उसके नाम के साथ 'पृथिवीवल्लभ', 'महागजाधिराज', 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' श्रिताम भी लिखे हुए मिलते हैं, जो इन सोलंकियों के साधारण खितान थे.

‡ यादव राजा भिल्लम ने देवगिरि नगर बसाकर वहां पर राजधानी कायम की थी.
+ जातः सुतो बोर्बलचक्रवर्ती श्रीवीरबल्लाल इति प्रसिद्धः ॥ ॥ न्यकारेण पितुः श्रियं कलचुरिक्षत्रान्वयात्कर्पता येनैकेन पितृवरेण करिणा पट्टिर्जिता दंतिनाम् । ते च ब्रह्मचमूपाति गजघटायष्टब्धसैन्यं हठाद्येनाश्चैरपि केवलैर्भुजभृता निर्जित्वा राज्यं हृतम् ॥ (इ० ऐं० जि० २ पृ० ३००).

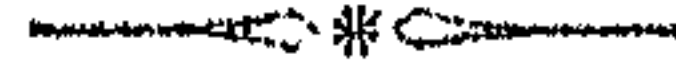
× सोमेश्वर के समय के ६ लेख मिले हैं, जिनमें सबसे पिछला श० सं० ११११ (वि० सं० १२४६ = ई० स० ११८६) का है, उसके पीछे का उसका कोई लेख नहीं मिलता.

कल्याण के पश्चिमी सोलंकियों का वंशवृक्ष.



* तैलप (तैल दूसरे) के पूर्वजों के लिये देखो प्रकरण पांचवां.

कल्याण के पश्चिमी सोलंकी राजाओं के
राजत्वकाल का नक्शा.



नं०	नाम	राज्य का प्रारम्भ		राज्य की समाप्ति	
		वि०सं०	ई०स०	वि०सं०	ई०स०
१	तैलप (तैल दूसरा)	१०३०	६७३	१०५४	६६७
२	सत्याश्रय	१०५४	६६७	१०६५	१००६
३	विक्रमादित्य (पांचवां)	१०६५	१००६		
४	जयसिंह (जगदेकमल्ल)			११००	१०४३
५	सोमेश्वर (आहवमल्ल)	११००	१०४३	११२५	१०६८
६	सोमेश्वर (दूसरा)	११२५	१०६८	११३३	१०७६
७	विक्रमादित्य (छठा)	११३३	१०७६	११८३	११२६
८	सोमेश्वर (तीसरा)	११८३	११२६	११६५	११३८
९	जगदेकमल्ल (दूसरा)	११६५	११३८	१२०६	११५०
१०	तैल (तीसरा)	१२०६	११५०	१२१६	११६२
११	सोमेश्वर (चौथा)	१२१६	११६२	१२४६	११८६

प्रकरण नवमा.

पूर्वी सोलंकियों का इतिहास.

बादामी के प्रतापी सोलंकी राजा पुलकेशी (दूसरे) ने अपनी विजययात्रा में पिष्टपुर और कुनाल के प्रदेशों को विजय करने बाद पल्लवों की राजधानी कांचीपुरी पर चढ़ाई की उस समय वेंगीदेश * उसके अधिकार में आया, जो उसने अपने छोटे भाई विष्णुवर्द्धन को दिया. उस समय से सोलंकी महा-राज्य के दो विभाग हुए, जिनमें से पश्चिमी अर्थात् मुख्य और बहुत बड़ा विभाग तो पुलकेशी और उसके वंशजों के अधिकार में रहा, और नया जीता हुआ पूर्वी प्रदेश अर्थात् वेंगीदेश विष्णुवर्द्धन और उसके वंशजों के आधीन रहा. इन दोनों राज्यों को पृथक् पृथक् बतलाने के लिये हमने बादामी के सोलंकियों का 'पश्चिमी सोलंकी' और वेंगीवालों का 'पूर्वी सोलंकी' नाम से परिचय दिया है. पश्चिमी सोलंकियों का उनके राज्य की समाप्ति तक का इतिहास लिखने के पश्चात् अब पूर्वी सोलंकियों का इतिहास लिखा जाता है.

पूर्वी सोलंकी राजाओं के इतिहास के लिये उनके

* वेंगीदेश को वेंगी मंडल, वेंगीराष्ट्र, वेंगी और वेंगी नाडू (नाडू = देश. नाडू द्राविड़ी शब्द है) भी लिखते हैं. उसकी मूल सीमा उत्तर में गोदावरी नदी, दक्षिण में कृष्णा नदी, पूर्व में समुद्रतट और पश्चिम में पश्चिमी घाट होनी चाहिये, परन्तु पूर्वी सोलंकियों के राज्य समय उसकी उत्तरी और दक्षिणी सीमा दूर दूर तक फैल गई थी. 'वेंगीदेश' यह नाम शायद उक्त देश की राजधानी वेंगी नगर (मद्रास इलाके के गोदावरी जिले के एल्लोर विभाग में पेड्डुवेगि नाम से प्रसिद्ध है) के नाम पर से प्रसिद्ध हुआ हो.

ताम्रपत्र*अधिक उपयोगी हैं, जिनमें एक विशेषता यह है, कि प्रत्येक राजा ने कितने वर्ष + राज किया यह उनमें लिखा हुआ ॥ है, जो अन्य किसी वंश के राजाओं + के लेख या

* पूर्वी सोलंकी शाखा के २५ वें राजा राजेन्द्रचोल (कुलोत्तुंगचोड) ने चोलदेश का बड़ा राज्य अपने आधीन किया उस समय के पूर्व के बहुधा उनके ताम्रपत्र ही मिलते हैं, जो संस्कृत भाषा के हैं, और उन्हीं में उनकी श्रुखलावद्ध वंशावली दी हुई है. उक्त समय के पीछे के शिलालेख ही विशेष मिलते हैं, जो बहुधा तामिल भाषा के हैं (संस्कृत, कन्नड़ी और तेलुगु भाषा के बहुत ही कम) उनमें वंशावली नहीं, किन्तु जिस राजा के समय का शिलालेख होता है उसीका नाम, खिताब और कुछ २ ऐतिहासिक वृत्तान्त मिलता है.

+ कितनेक राजाओं का राज्यसमय भिन्न २ ताम्रपत्रों में भिन्न २ प्रकार से दिया है, जैसा कि जयसिंह (प्रथम) का किसी में ३० वर्ष तो किसी में ३३ वर्ष और विजयादित्य (दूसरे) का कहीं ४०, कहीं ४४ और कहीं ४८ वर्ष राज्य करना लिखा है. ऐसे ही विक्रमादित्य का कहीं ११ महीने तो कहीं एक वर्ष राज्य करना लिखा है, जिससे पाया जाता है, कि उक्त ताम्रपत्रों में जो राज्य वर्ष लिखे हैं उनमें शायद ऐसा नियम रक्खा गया हो, कि वर्ष पूरा होने में कुछ काल घटता हो तो भी पूरा वर्ष लिख दिया हो, और वर्ष के ऊपर कुछ काल गया हो तो उसे छोड़ दिया हो. इसी तरह थोड़े ही दिन राज्य करने वालों के नाम किसी २ में छोड़ भी दिये हैं, जैसा कि इन्द्रभट्टारक का ७ दिन और विजयादित्य (पांचवें) का १५ दिन राज करना कहीं लिखा है तो कहीं छोड़ दिया है.

॥ उनमें प्रत्येक राजा के राजत्वकाल का उल्लेख करने का रिवाज भीम (प्रथम) के समय से (वि० सं० ६४४ से ९७४ = ई० स० ८८७ से ६१७) चला हो ऐसा पाया जाता है, क्योंकि पहिले पहिल उसीके ताम्रपत्र में, जो बेजवाड़े से मिला है, उसके पूर्व के सभ राजाओं का राजत्वकाल लिखा मिलता है.

+ केवल पूर्वी गंगावंशी राजाओं के ताम्रपत्रों में इस प्रकार प्रत्येक राजा का राजत्वकाल लिखा मिलता है, परन्तु उसमें उन्होंने अपने पड़ोसी पूर्वी सोलंकीयों का ही अनुकरण किया है और वह भी इसवी सन् की ११ वीं शताब्दी के आस पाससे.

ताम्रपत्रों में नहीं मिलता, परन्तु श्रुति यह है, कि उनमें कोई संवत् नहीं, किन्तु केवल राज्यवर्ष (सन् जुलूस) दिये हैं.

विष्णुवर्द्धन (कुब्जविष्णुवर्द्धन).

विष्णुवर्द्धन के विरुद्ध 'पृथिवीवल्लभ', 'विषमसिद्धि', 'रण-रसिक,' 'युवराज' * और 'महाराज' मिलते हैं, और उसको कुब्जविष्णु या कुब्जविष्णुवर्द्धन † भी कहते थे. उसके बड़े भाई पुलकेशी ने राज्य पाने बाद उसको अपने राज्य के एक जिले का शासक नियत किया था, और जब उसने अपने बाहुबल से अन्य देश विजय कर अपने राज्य को बहुत बढ़ाया, उस समय उसको वेंगी देश ‡ जागीर में दिया था, जहाँपर पीछे से उस

* यहां पर 'युवराज' शब्द का अर्थ राजा का भावी उत्तराधिकारी नहीं, किन्तु राजा का पुत्र अर्थात् कुमार है. काठियावाड़ आदि में अबतक राजा के भाई कुमार ही कहलाते हैं.

† उस (विष्णुवर्द्धन) के दोनों ताम्रपत्रों में उसका नाम 'विष्णुवर्द्धन' ही लिखा है, परन्तु पिछले सब ताम्रपत्रों में या तो कुब्जविष्णु या कुब्जविष्णु-वर्द्धन लिखा मिलता है. 'कुब्ज' का अर्थ कुबड़ा होता है, अतएव उसके कुबड़े होने से ही उसको कुब्जविष्णुवर्द्धन कहने लगे हों तो आश्चर्य नहीं.

‡ किसी लेख या ताम्रपत्र में यह स्पष्ट नहीं लिखा, कि पुलकेशी ने अपनी खुशी से वेंगीदेश विष्णुवर्द्धन को दिया, अथवा वहां पर शासन करने को उसे भेजा, जिससे वह उस देश को दबा बैठा, परन्तु वेंगीदेश पर राज्य करने के समय भी वह अपने तई पुलकेशी का प्रिय छोटा भाई लिखता था, जिससे अनुमान होता है, कि अधिक प्रीति के कारण ही पुलकेशी ने उसको वह देश दिया हो. यदि इसके विपरीत हुआ होता, तो दोनों भाइयों के बीच प्रीति का बर्ताव रहना संभव नहीं था.

के वंशजों ने स्वतंत्र होकर राज्य किया था। उसके 'विषमसिद्धि' कहलाने का कारण ऐसा लिखा मिलता है, कि स्थल, जल, वन और पर्वतों पर के दुर्जय किलों को उसने विजय किया * था, जिससे उसको वह विरुद्ध मिला था, और संभव है, कि अपने बड़े भाई की विजययात्रा में अच्छी बीरता बतलाने के कारण प्रसन्न होकर उस (पुलकेशी) ने उसको वेंगी का राज्य जागीर में दे दिया हो। उसका ऐतिहासिक वृत्तान्त कुछ भी नहीं मिलता, केवल पिछले एक ताम्रपत्र में इतना लिखा है, कि 'उसकी आज्ञा पाकर उसके सेवक कालकंप ने, जो पटवर्द्धिनी † वंश का था, राजा दहर को युद्ध में मार कर उसके राजचिन्ह छीन लिये' ‡। उसके समय के दो ताम्रपत्र मिले हैं, जिन में से एक + उस समय का है, जब कि वह सितारे के आस पास के प्रदेश पर शासन करता था, और दूसरा × वेंगी पर राज्य

* सत्याश्रयश्रीवल्लभमहाराजः । तस्य प्रियानुजः स्थलजलवनगिरिविषम-
दुर्गेषु लब्धसिद्धित्वाद्विषमसिद्धिः (इ० ऐ० जि० २०, पृ० १६, कुब्जविष्णु-
वर्द्धन के १८ में वर्ष के दानपत्र से)।

† पटवर्द्धिनी=पटवर्द्धन, अब तक दक्षिणियों में पटवर्द्धन कुल का नाम प्रसिद्ध है।

‡ कालकंप इति विश्रुतेन कुब्जविष्णुवर्द्धनानुचरेण संग्रामे तदनुज्ञया दुर्द्ध-
र्षवलं दहारनामानं विनिहत्य तच्चिन्हानि येन जगृहिरे (अगा प्रथम का दानपत्र,
सा० इ० इ० जि० १, पृ० ४०)

+ वह ताम्रपत्र पुलकेशी (दूसरे) के राज्य के ८ वें वर्ष का है (इ० ऐ० जि० १६, पृ० ३०६-१०), जिसकी मुद्रा में 'श्रीविट्ठरस' लिखा है (विट्ठरस=राजा विट्ठ), जो विष्णुवर्द्धन का बचपन का नाम होना चाहिये, इसी प्रकार विजयादित्य (पांचवें) का नाम बेत लिखा मिलता है, ('विट्ठ' शायद विष्णु का अपभ्रंश हो)।

× इ० ऐ० जि० २०, पृ० १६-१७, उक्त ताम्रपत्र में उसके दूतक (ताम्रपत्र

करने के समय का उसके राज्य के १८ वें वर्ष का है. उसमें वह अपने तर्ह केवल 'महाराज' लिखता है, जिससे स्पष्ट है, कि वह स्वतंत्र राजा नहीं, किन्तु अपने बड़े भाई का सामन्त था. उसने श० सं० ५३७ (वि० सं० ६७२ = ई० स० ६१५) से * लगा

तय्यार करा देने की राजाज्ञा जिस पुरुष के द्वारा होती है उसको दूतक कहते हैं) मत्स्यवंशी अटविदुर्जय को अपने बाहुबल से शत्रुओं को जीतनेवाला लिखा है, अतएव संभव है, कि वह कोई राजवंशी हो.

* विष्णुवर्द्धन वेंगी देश पर कबसे राज्य करने लगा यह स्पष्टरूप से लिखा हुआ अब तक नहीं मिला. पूर्वी सोलंकियों के ताम्रपत्रों में कहीं उसका वेंगीदेश पर १८ वर्ष और कहीं खाली १८ वर्ष राज्य करना लिखा है (कुब्जविष्णुवर्द्धनोद्घादशवर्षाणि—भीम प्रथम का दानपत्र, ई० ऐ० जि० ५, पृ० १२८. कुब्जविष्णुवर्द्धनोद्घादशवर्षाणि वेंगीदेशमपालयत्—वीरचोड का दानपत्र, सा० ई० ई० जि० १, पृ० ५४), परन्तु उनमें संवत् दिया हुआ न होने से प्रत्येक राजा के राज्याभिषेक का समय मालूम नहीं हो सकता. विष्णुवर्द्धन से २३ वें राजा अम्म (दूसरे) के ताम्रपत्र में श० सं० ८६७ (वि० सं० १००२ = ई० स० ९४५) मार्गशीर्ष कृ० १३ (अग्रान्त) को उसका राज्याभिषेक होना लिखा है. पहिले पहिले यही एक निश्चित समय मिलता है, जिसमें से उसके पूर्व के राजाओं का राज्य-समय घटाने से उस (विष्णुवर्द्धन) के राज्य के प्रारंभ का निश्चय हो सकता है, परन्तु अम्म (दूसरे) के पूर्व के कितने एक राजाओं का राजत्वकाल भिन्न भिन्न ताम्रपत्रों में भिन्न भिन्न प्रकार लिखा मिलता है यही उसमें बाधा है. उक्त ताम्रपत्र में विष्णुवर्द्धन से लगाकर अम्म (दूसरे) के पिता सोलंकी भीम तक के राजाओं का राज्य-काल ३३७ वर्ष ६ मास दिया है, जिसको श० सं० ८६७ में से घटावें तो श० सं० (८६७ - ३३७ =) ५३० (वि० सं० ६६५ = ई० स० ६०८) में उस (विष्णुवर्द्धन) के राज्य का प्रारंभ होना स्थिर होता है, परन्तु यह संवत् स्वीकार योग्य नहीं है, क्योंकि श० सं० ५३२ (वि० सं० ६६७ = ई० स० ६१५) में पुलकेशी (दूसरा) मंगलीश से राज्य लेने पाया था, जिसके पीछे उसने विष्णुवर्द्धन को किसी समय सितारा के आस पास के प्रदेश का शासन

कर शक सं० ५५५ (वि० सं० ६६० = ई०स० ६३३) तक १८ वर्ष शासन किया. उसके दो पुत्र जयसिंह और इन्द्रभट्टारक थे, जो उसके पीछे क्रमशः वेंगीदेश के मालिक हुए.

कर्ता और उसके पीछे वेंगी का राजा बनाया था. अतएव श० सं० ५३२ के पूर्व उसका राज्य पाना सर्वथा असंभव है, जब दूसरे ताम्रपत्रों की तरफ दृष्टि देते हैं, तो उनमें अग्न दूसरे के पूर्व के राजाओं का राजत्वकाल ३२९ से ३४० वर्ष तक लिखा मिलता है, जिसमें से ३४० वर्ष भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि उस हिसाब से विष्णुवर्द्धन के राज्य का प्रारंभ श० सं० (८६७ ई-३४० =) ५२७ (वि० सं० ६६२ = ई० स० ६०५) में होना स्थिर होता है, जो पुलकेशी (दूसरे) के राज्य पाने के समय से और भी पहिले जा पड़ता है. यदि उक्त राजाओं का राजत्वकाल ३२६ वर्ष मानें, तो उस (विष्णुवर्द्धन) के राज्य का प्रारंभ श० सं० (८६७ ई-३२६ =) ५४१ (वि० सं० ६७३ = ई० स० ६१६) में होना निश्चय होता है, जो असंभव नहीं है, क्योंकि उस समय पुलकेशी को राज्य पाये ६ वर्ष हो चुके थे, परन्तु उक्त ताम्रपत्रों में पूरे वर्ष दिये हैं, और ऊपर के महीने छोड़ दिये हैं, अतएव उनके राजत्वकाल में एकाध वर्ष का फर्क होना संभव है, इस वास्ते यदि उनका राज्य समय ३३० वर्ष मानें तो उसके राज्य का प्रारंभ श० सं० ५३७ (वि० सं० ६७२ = ई० स० ६१५) में होना स्थिर होता है, जो ठीक जचता है, क्योंकि:—

(१)—विष्णुवर्द्धन के दूसरे ताम्रपत्र में लिखा है, कि उसके राज्य के १८ वें वर्ष श्रावण शु० १५ को चंद्रग्रहण था (श्रावणमासे चंद्रग्रहणनिमित्ते... से १८ मा ४ दि १५). श० सं० ५३७ (वि० सं० ६७२ = ई० स० ६१५) के प्रारंभ के निकट उनका राज्य पाना मानने से उसके राज्य का १८ वां वर्ष श० सं० (५३७+१७ =) ५५४ (वि० सं० ६८६ = ई० स० ६३२) आता है, जिसमें श्रावण शु० १५ को चंद्रग्रहण था (ई० पू० लि० २०, पृ० ४).

जयसिंह और इन्द्रभट्टारक.

जयसिंह के विरुद्ध 'वल्लभ', 'सर्वसिद्धि' और 'महाराज' मिलते हैं. उसने श० सं० ५५५ (वि० सं० ६६० = ई० स० ६३३) के प्रारंभ के आस पास से लगाकर श० सं० ५८४ (वि० सं०

(२)—विष्णुवर्द्धन के पौत्र विष्णुवर्द्धन (दूसरे) के ताम्रपत्र में लिखा है, कि उसके राज्यवर्ष दूसरे की चैत्र शुक्ला १० को मघा नक्षत्र और बुधवार था (वर्द्धमानराज्यद्वितीयसंवत्सरे चैत्रमासे शुक्लपक्षे दशम्यां मघा...नक्षत्रे बुधवारेषु—इ० ऐ० जि० ७, पृ० १८६). विष्णुवर्द्धन ने १८ वर्ष, उसके पीछे उसके पुत्र जयसिंह ने ३० वर्ष, फिर उसके छोटे भाई इन्द्रभट्टारक ने १० दिन राज्य किया, जिसके पीछे विष्णुवर्द्धन (दूसरा) राजा हुआ था, अतएव विष्णुवर्द्धन (प्रथम) के राज्य का प्रारम्भ श० सं० ५३७ के प्रारंभ के आस पास मानने से विष्णुवर्द्धन (दूसरे) के राज्य का दूसरा वर्ष श० सं० (५३७+१८+३०+१=) ५८६ (वि० सं० ७२१=ई० स० ६६४) आता है. उक्त वर्ष में चैत्र शु० १० को मघा नक्षत्र और बुधवार था (इ० ऐ० जि० २०, पृ० ६-७).

(३)—विष्णुवर्द्धन (दूसरे) के दूसरे ताम्रपत्र में उसके राज्य के पांचवें वर्ष फाल्गुन कृष्णा ५५ को सूर्यग्रहण होना लिखा है. ऊपर अनुमान किये हुए समय के अनुसार उसके राज्य का पांचवां वर्ष श० सं० (५३७+१८+३०+४=) ५८९ होता है. उक्त वर्ष में उस दिन सूर्यग्रहण होने की संभावना है (इ० ऐ० जि० २०, पृ० ६).

(४)—विष्णुवर्द्धन (दूसरे) के पुत्र सर्वलोकाश्रय (मंगीयुवराज) के ताम्रपत्र में उसके राज्यवर्ष दूसरे में वैशाख शु० १५ को ग्रहण होना लिखा है (प्रवर्द्धमानविजयराज्यसंवत्सरे द्वितीये वैशाखपौर्णमास्यां ग्रहणनिमित्तं दत्ता पट्टिका—पृ० इ० जि० ८, पृ० २४०). ऊपर निर्णय किये हुए समय के अनुसार उसके राज्य का दूसरा वर्ष श० सं० (५३७+१८+३०+९+१=) ५९५ (वि० सं० ७३०=ई० स० ६७३) होता है, जिसमें वैशाख शु० १५ को चन्द्रग्रहण था (पृ० इ० जि० ८, पृ० २४१-४२).

७१६ = ई० स० ६६३) के अंत के लगभग तक ३० वर्ष * राज्य किया. उसका एक ताम्रपत्र † मिला है, जो उसके राज्य के १८ वें वर्ष का है. उसका उत्तराधिकारी उसका छोटा भाई इन्द्रभट्टारक ‡ हुआ. उसके विरुद्ध 'महाराज' और 'सिंहवि-क्रम' मिलते हैं. वह केवल ७ दिन ही राज्य करने पाया. गोदा-

श० सं० ५३७ (वि० सं० ६७२ = ई० स० ६१५) के आसपास के वर्षों में से कोई भी अन्य वर्ष उपर्युक्त चारों घटनाओं के लिये ठीक नहीं जचता, अतएव विष्णुवर्द्धन के राज्य का प्रारंभ श० सं० ५३७ (वि० सं० ६७२ = ई० स० ६१५) के प्रारंभ के आसपास होना चाहिये, परन्तु ऐसा पाया जाता है, कि उक्त वर्ष में वह वैगी का राजा नहीं हुआ हो, किन्तु उस संवत् से वह सितारे के आसपास के प्रदेश का शासक नियत हुआ हो (क्योंकि उक्त समय के पूर्व पुलकेशी द्वारे ने वैगी आदि पूर्वी देशों को शायद ही विजय किया हो), और वैगी का राज्य पाने बाद भी उसने अपना राज्यवर्ष अपने शासनकाल के प्रारंभ से माना हो.

* पूर्वी सोलंकियों के ताम्रपत्रों में उनका राजत्वकाल बहुधा पूरे वर्षों में दिया है, जिसका आशय यही हो, कि करीब उतने वर्ष, अर्थात् कहीं दिये हुए वर्षों से कुछ मास कम और कहीं अधिक राज्य करना संभव है (और कहीं राज्यवर्षों की संख्या भिन्न भिन्न दी है), अतएव इन राजाओं का राजत्वकाल, जो हमने निश्चय किया है उसमें कहीं कहीं फर्क होना संभव है.

कितने एक ताम्रपत्रों में जयसिंह का ३३ वर्ष राज्य करना लिखा है, परन्तु अम्म दूसरे के पूर्व के राजाओं के राज्यसमय की कम से कम दी हुई संख्या ग्रहण करने से ही विष्णुवर्द्धन के राज्य के प्रारंभ का संतोषदायक निर्णय होता है, इसीसे हमने उसका राज्यसमय ३० वर्ष माना है.

† इ० ऐ० जि० २०, पृ० १०५.

‡ इन्द्रभट्टारक को इन्द्रराज भी कहते थे.

बरी जिले से मिले हुए राजा पृथिवीमूल * के ताम्रपत्र † में लिखा है, कि 'इन्द्रभट्टारक को उखाड़ने के लिये एकत्र होने-वाले राजाओं के साथ रहकर इन्द्राधिराज ‡ (अधिराज इन्द्र) भी लड़ा था'. यदि उक्त ताम्रपत्र का इन्द्रभट्टारक पूर्वी सोलंकी राजा हो, तो यह अनुमान हो सकता है, कि इन्द्रभट्टारक के राज्य पाते ही आस पास के कितने एक राजाओं ने उसपर हमला किया हों, और संभव है, कि वह उनसे लड़ने में मारा गया हो, और उसीसे केवल ७ दिन × राज्य करने पाया हो. उसका क्रमानुयायी उसका पुत्र विष्णुवर्द्धन (दूसरा) हुआ.

विष्णुवर्द्धन (दूसरा).

विष्णुवर्द्धन (दूसरे) के विरुद्ध 'सर्वलोकाश्रय', 'विषमसि-

* पृथिवीमूल को महाराज प्रभाकर का पुत्र लिखा है. वह किस वंश का था इस विषय में कुछ भी नहीं लिखा.

† बंब० ए० सो० ज० जि० १६, पृ० ११६-१८.

‡ इन्द्राधिराज को उक्त ताम्रपत्र में मित्रवर्मा का पुत्र लिखा है. वह उपर्युक्त राजा पृथिवीमूल का सामन्त होना चाहिये.

+ इन्द्रभट्टारक के पौत्र मंगीयुवराज (सर्वलोकाश्रय) के राज्यवर्ष दूसरे अर्थात् श० सं० ५६५ (वि० सं० ७३०=ई० स० ६७३) के ताम्रपत्र में उस (इन्द्रभट्टारक) के विषय में यह लिखा मिलता है, कि युद्ध में उसक सारे शरीर पर घाव लगे थे (रणभूषणायमानव्रणकिणालंकृतसर्वगात्रस्य...श्रीमतौ महाराजस्येन्द्रभट्टारकवर्मणः...ए० इ० जि० ८, पृ० २३६), अतएव उसका युद्ध में मारा जाना संभव है.

× तदनु इन्द्रराजस्सप्तदिनानि ।— (कुलोत्तुंगचोड के पुत्र वीरचोड के ताम्रपत्र से. सा० इ० इ० जि० १, पृ० ५४).

द्धि' *, 'मकरध्वज'† और 'महाराज' मिलते हैं. वह शिव का परम भक्त था और उसके ताम्रपत्र में उसको 'पंचमहाशब्द' ‡ प्राप्त करने वाला लिखा है. उसके समय के दो ताम्रपत्र मिले

* यह विरुद उसके ताम्रपत्रों की मुद्रा में है (यह विरुद कुब्जविष्णुवर्द्धन का भी था. शायद उसीके समय की मुद्रा चली आती हो).

† 'मकरध्वज' का अर्थ 'कागदेव' है, परन्तु उस (विष्णुवर्द्धन दूसरे) के उक्त विरुद का कारण उसके पुत्र मंगीयुवराज (सर्वलोकाश्रय) के राज्य वर्ष दूसरे के उपर्युक्त ताम्रपत्र में यह बतलाया है, कि 'कई बड़े बड़े शत्रुओं की भूमि, मकर (मकराकृतिक कुंडल) और ध्वज छीनने के कारण वह 'मकरध्वज' कहलाता था (गृहीतानेकतुंगारिविगुधामकरध्वजस्य मकरध्वजस्य... श्री विष्णुवर्द्धनमहाराजस्य.... ए० इ० जि० ८, पृ० २३६).

‡ पंचमहाशब्द = पांच प्रकार के वादित्रों का बजवाना; अपने यहां पांच प्रकार के वादित्र बजवाने का सन्मान प्राप्त करना. प्राचीन शिलालेख और ताम्रपत्रों में 'समाधिगतपंचमहाशब्दः' यह विशेषण बहुधा सामंतों (सर्दारों), और कभी कभी राज्य के बड़े अधिकारियों तथा स्वतंत्र राजाओं के नामों के साथ लगा हुआ मिलता है, जिसका अर्थ 'अपने यहां पांच प्रकार के वादित्र बजवाने का सन्मान प्राप्त करने वाला' है. प्राचीनकाल में उनका बजवाना बड़े राजाओं का सन्मान सूचक चिन्ह माना जाता था, और सामंतादि लोग अपने मालिक की आज्ञा बिना अपने यहां उनको बजवाने नहीं पाते थे. इसलिये जब उनको यह सन्मान मिलता था, उस समय वे अपने ताम्रपत्रादि में उसका उल्लेख करते थे. उस समय ये पांच प्रकार के वादित्र कौन २ से थे इसका ठीक ठीक उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु 'विवेकिचिंतामणि' नामक कनड़ी भाषा के पुस्तक में उनके नाम शृङ्ग (मुख से बजाया जानेवाला वाद्य), तम्मट (खंजरी), शंख, भेरि और जयघंटा दिये हैं. तुलसीकृत रागायण में 'पंचसब्द धुनि गंगल गाना' (बालकांड) लिखा मिलता है, जहांपर पंचशब्द 'पंचमहाशब्द' का ही सूचक है. उक्त पुस्तक की टीका में उन वादित्रों के नाम तंत्री, ताल, भांभ, नकारा और फूंक से बजने वाला वाद्य (तंत्री ताल सुभांभ पुनि जानो नगारा चार । पंचम फूंके रो बजे पंच सब्द प्रकार गिनाये हैं.

हैं, जिनमें से एक उसके राज्य के दूसरे * वर्ष का और दूसरा पांचवें † वर्ष का है. उसने शक सं० ५८४ (वि० सं० ७१६ = ई० स० ६६३) के अंत के आस पास से लगाकर श० सं० ५९४ (वि० सं० ७२६ = ई० स० ६७२) के प्रारंभ के आस पास तक ६ वर्ष ‡ राज्य किया. उसके पीछे उसका पुत्र मंगियुवराज उसके राज्य का मालिक हुआ.

मंगियुवराज.

मंगियुवराज के विरुद्ध 'सर्वलोकाश्रय', 'विजयसिद्धि' और 'महाराज' मिलते हैं. उसके दो ताम्रपत्र मिले हैं, जिनमें उस का नाम 'सर्वलोकाश्रय' लिखा है, जो उसका विरुद्ध होना चाहिये. पिछले सब ताम्रपत्रों में उसका नाम मंगियुवराज लिखा है, परन्तु राज्य पाने बाद भी युवराज कहलाने का कारण उनमें कुछ भी नहीं दिया. उसके राज्य के बीसवें वर्ष के ताम्रपत्र में उसको आन्वीक्षिकी + आदि विद्याविषयों के वादानुवाद में जय पानेवाला लिखा × है, जिससे उसका साक्षर होना पाया जाता है. उसने शक संवत् ५९४ (वि० सं० ७२६ = ई० स० ६७२) से श० सं० ६१६ (वि० सं० ७५४ = ई० स०

* इ० ऐं० जि० ७, पृ० १८६-१८६.

† इ० ऐं० जि० ७, पृ० १९१-१९२.

‡ सत्याश्रयवत्सभस्य भ्राता कुब्जविष्णुवर्द्धनोष्ठादशवर्षाणि । तत्पुत्रो जयसिंहवत्सभस्यस्त्रिंशद्वर्षाणि । तद्भ्रातुरिन्द्रराजस्य सुतः विष्णुराजो नव । (अम्म प्रथम के दानपत्र से—इ० ऐं० जि० ८, पृ० ७७). विष्णुवर्द्धन (दूसरे) को विष्णुराज भी कहते थे.

+ आन्वीक्षिकी=तर्क विद्या.

× आन्वीक्षिक्यादिविद्याप्रश्नेषु विजयसिद्धिः (मंगियुवराज का दानपत्र—इ० ऐं० जि० २०, पृ० १०५).

६६७) तक २५ वर्ष * राज्य किया. उसके तीन पुत्र जयसिंह, विष्णुवर्द्धन और कोविकलि थे, जिनमें से बड़ा जयसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ.

जयसिंह (दूसरा), कोविकलि और विष्णुवर्द्धन (तीसरा).

जयसिंह ने श० सं० ६१६ (वि० सं० ७५४ = ई० स० ६६७) से ६३२ (वि० सं० ७६७ = ई० स० ७१०) तक १३ वर्ष † राज्य किया, जिसके पीछे उसका सबसे छोटा भाई कोविकलि, जो दूसरी माता से उत्पन्न हुआ था, राज्य का मालिक बन बैठा, परंतु ६ महीने बाद उसका बड़ा भाई विष्णुवर्द्धन ‡ (तीसरा) उसको निकालकर वेंगीराज्य का मालिक हुआ. उसने श० सं० ६३२ (वि० सं० ७६७ = ई० स० ७१०) से ६६६ (वि० सं० ८०४ = ई० स० ७४७) तक ३७ वर्ष + राज्य किया. उस के पीछे उसका पुत्र विजयादित्य राजा हुआ.

* तत्पुत्रो मंगियुवराजः पंचविंशतिम् (अम्म प्रथम का दानपत्र—ई० ऐं० जि० ८, पृ० ७७).

† तत्पुत्रो जयसिंहस्त्रयोदश । (अम्म प्रथम का दानपत्र—ई० ऐं० जि० ८, पृ० ७७). अधिकतर ताम्रपत्रों में जयसिंह दूसरे का १३ वर्ष ही राज्य करना लिखा है, परन्तु चालुक्य भीम (दूसरे) के समय के एक ताम्रपत्र में उसका ३३ वर्ष राज्य करना लिखा है, जो विश्वासयोग्य नहीं है. जयसिंह (प्रथम) का कितनेक ताम्रपत्रों में ३३ वर्ष राज्यकाल माना है, उसी पर से शायद उक्त ताम्रपत्र के तय्यार करनेवाले ने जयसिंह (दूसरे) का उतना समय भूल से धर दिया हो.

‡ विष्णुवर्द्धन (तीसरे) को विष्णुराज भी कहते थे.

+ तद्वैमातुरनुजः कोविकलिः षणमासान् । तस्य ज्येष्ठो भ्राता तमुच्छाटय

विजयादित्य और विष्णुवर्द्धन (चौथा).

विजयादित्य के विरुद्ध 'विक्रमराम', 'विजयसिद्धि', 'महाराज' और 'भट्टारक' * मिलते हैं. उसने श० सं० ६६६ (वि० सं० ८०४ = ई०स० ७४७) से ६८७ (वि० सं० ८२२ = ई०स० ७६५) तक १८ वर्ष १० राज किया. उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र विष्णुवर्द्धन (चौथा) हुआ, जिसको विष्णुराज भी कहते थे. उसने श० सं० ६८७ (वि० सं० ८२२ = ई०स० ७६५) से ७२३ (वि० सं० ८५८ = ई०स० ८०१) तक ३६ वर्ष ३३ शासन किया. उसका खिताब 'महाराज' मिलता है. उसका क्रमानुयायी उसका पुत्र विजयादित्य हुआ.

विजयादित्य (दूसरा).

विजयादित्य (दूसरे) के विरुद्ध 'महाराज', 'महाराजाधिराज', 'नरेन्द्रमृगराज', 'समस्तभुवनाश्रय', 'चालुक्यार्जुन', 'त्रिभुवनांकुश', 'परमेश्वर' और 'भट्टारक' मिलते हैं. बादामी के पश्चिमी सोलंकियों का महाराज्य दंतिदुर्ग राठौड़ ने छीना उस समय से पूर्वी सोलंकियों ने स्वतंत्र होने का उद्योग किया हो

विष्णुवर्द्धनस्सप्तत्रिंशत्तम् । (अम्ग प्रथम का दानपत्र—ई० ई० जि० ८, पृ० ७७).

* 'भट्टारक'—यह खिताब बहुधा स्वतन्त्र राजा धारण करते थे. विजयादित्य के पूर्व के सब ही पूर्वी सोलंकी राजा पश्चिमी सोलंकियों के सामंत थे, परन्तु उस (विजयादित्य) के समय राठौड़ों ने पश्चिमी सोलंकियों का महाराज्य छीन लिया, उस बखेड़े के समय शायद विजयादित्य स्वतंत्र हो गया हो.

१. तत्पुत्रो विजयादित्यभट्टारकोऽष्टादश । (ई० ई० जि० ८, पृ० ७७).

२. तत्पुत्रो विष्णुवर्द्धनः षट्त्रिंशत्तम् । (ई० ई० जि० ८, पृ० ७७).

यह संभव है. उस (विजयादित्य दूसरे) के खिताबों * से स्पष्ट है, कि उसके समय वे (पूर्वी सोलंकी) स्वतंत्र हो गये थे. वह शिव का परमभक्त था. पिछले ताम्रपत्रों में ऐसा लिखा मिलता है, कि 'वह गंगावंशियों के लिये कालानल † समान था, १२ वर्ष तक लगातार गंगों (गंगावंशियों) तथा राठौड़ों (राठौड़ों) से १०८ लड़ाइयां लड़ा ‡ और उतने ही उसने शिवमंदिर बनवाये थे.' ये गंगावंशी बेंगीदेश के पड़ोसी पूर्वी गंगावंशी हों अथवा राठौड़ों के सामंत + गंगावंशी हों, और रट्ट मान्यखेट के राठौड़ थे, जिन्होंने पश्चिमी सोलंकियों का महाराज्य छीना था. विजयादित्य के राज्य के प्रारंभसमय वहां का राजा राठौड़ गोविंद (तीसरा) था X, जिसके पीछे उसका पुत्र अ-

* 'समस्तभुवनाश्रय', 'परमेश्वर' और 'गङ्गारक' ये खिताब उसका स्वतंत्र होना प्रकट करते हैं.

† गंगकुलकालानलस्य कलिकालमदगंजनस्य चालुक्यार्जुननामधेयस्य.... (विजयादित्य तीसरे के ताम्रपत्र रो-ए० इ० जि० ५ पृ० १२४). उक्त ताम्रपत्र में उसके विषय में यह भी लिखा है कि 'उत्खातशाततरवारिविदारितारिनागाधिपस्य हरिणाधिकविक्रमस्य' जिसमें 'अरिनागाधिप' का अर्थ 'शत्रुओं के बड़े हाथी', और 'नागवंशी शत्रु राजा' दोनों होते हैं, अतएव संभव है, कि विजयादित्य नागवंशियों से भी लड़ा हो और उसने उनको परास्त किया हो.

‡ तन्नदनो विष्णुवर्द्धनः पद्मिंशदब्दान् । तत्पुत्रः । गंगरट्टबलैस्सार्द्धम् द्वादशाब्दानहर्निशम् । भुजार्जितबलं खड्गसहायो नयविक्रमैः ॥ अष्टोत्तरं युद्धशतम् युद्धा शोभोर्महालयान् । तत्तंख्ययाकरोद्वीरो विजयादित्यभूपतिः—(अभग प्रथम का दानपत्र-रा० इ० इ० जि० १, पृ० ३१).

+ राठौड़ों के सामंत गंगावंशी, जिनका राज्य माइसूर राज्य के एक अंश (गंगवाड़ी) पर था, पूर्वी गंगावंशियों से भिन्न थे, जिनकी राजधानी कलिंग नगर (उड़ीसे में) थी.

X राठौड़ गोविंद (तीसरा) भुवराज का पुत्र था, उसके समय के ताम्र-

मोघवर्ष राज पाया था. गोविंद (तीसरे) के ताम्रपत्र में ऐसा लिखा मिलता है, कि 'दूतद्वारा आज्ञा पहुंचते ही वेंगी का राजा हाज़िर होकर सेवक की नाई उसका काम करता था' *. उक्त ताम्रपत्र में वेंगी के राजा का नाम नहीं दिया, जिससे यह निश्चय नहीं होता कि यह वृत्तान्त विष्णुवर्द्धन (चौथे) से संबंध रखता है वा विजयादित्य से, परंतु संभव है कि विष्णुवर्द्धन (चौथे) ने राठौड़ों की मातहती स्वीकार करली हो, जिससे स्वतंत्र होने की इच्छा से ही विजयादित्य १२ बरस तक राठौड़ों से लड़ा हो.

उसने श० सं० ७२३ (वि० सं० ८५८=ई० स० ८०१) से ७६३ (वि० सं० ८९८=ई० स० ८४६) तक ४० वर्ष *

पत्र श० सं० ७१६ से ७३५ (वि० सं० ८५१ से ८७०=ई० स० ७९४ से ८१३) तक के मिले हैं, और उसके पुत्र अमोघवर्ष का श० सं० ७३७ से ७६६ (वि० सं० ८७२ से ९०१=ई० स० ८१५ से ८४४) तक राज्य करना सिद्ध है, अतएव विजयादित्य दूसरा उन दोनों का समकालीन था.

* लेखाहारमुखोदितार्द्धवचसा यत्रैत्य वेंगीश्वरो नित्यं किंकरवधधादविरतः कर्म स्वशर्मेच्छया । (राधनपुर से मिले हुए गोविंद तीसरे के श० सं० ७३०=वि० सं० ८६५=ई० स० ८०८ के ताम्रपत्र से—इ० ऐं० जि० ६, पृ० ६७).

* अष्टोत्तरनरेन्द्रेश्वरायतनानां कर्त्ता विजयादित्यश्चत्वारिंशत्तम् । (इ० ऐं० जि० ८, प० ७७). कितनेक ताम्रपत्रों में उसका ४०, कितनेक में ४४ और कहीं ४८ वर्ष राज्य करना लिखा है, परन्तु अम्म (दूसरे) के पूर्व के राजाओं का कम से कम दिया हुआ राजत्वकाल ग्रहण करने से ही विष्णुवर्द्धन (प्रथम) के राज्य के प्रारंभ का संतोषदायक निर्णय होता है इसीसे हम ने ४० वर्ष ही स्वीकार किया है.

राज्य किया. उसके समय के दो * ताम्रपत्र मिले हैं, जिनमें से एक के दूतक हैहय (कलचुरि) वंशी राजा रुद्र को उसका भाई † लिखा ‡ है. उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र विष्णुवर्द्धन (पांचवां) हुआ.

विष्णुवर्द्धन (पांचवां).

विष्णुवर्द्धन + (पांचवें) के विरुद्ध 'महाराज' और 'विषमसिद्धि' मिलते हैं. वह शिव का परम भक्त था, और उसने श० सं० ७६३ (वि० सं० ८६८ = ई० स० ८४१) से ७६५ (वि० सं० ६०० = ई० स० ८४३) तक डेढ़ बरस राज किया. उस समय का एक ताम्रपत्र x मिला है. उसके तीन पुत्र विजयादित्य, विक्रमादित्य और युद्धमल्ल थे, जिनमें से विजयादित्य उसका उत्तराधिकारी हुआ.

विजयादित्य (तीसरा).

विजयादित्य (तीसरे) के विरुद्ध 'समस्तभुवनाश्रय', 'त्रिभुवनांकुश', और 'महाराज' मिलते हैं. वह गणितविद्या में बड़ा ही निपुण † था, जिससे उसको 'गुणकविजयादित्य' () कहते

* सा० इ० इ० जि० १, पृ० ३३-३४; इ० ऐ० जि० १३, पृ० ५५-५६.

† राजा रुद्र उसका सगा भाई नहीं, किन्तु रिश्ते में भाई होना चाहिये. शायद वह उसके मामा का पुत्र हो.

‡ नरेन्द्रमृगराजस्य भ्राता हैहयवंशजः । आज्ञप्तिरस्य धर्मस्य नृपरुद्रनृपोत्तमः ॥ (सा० इ० इ० जि० १, पृ० ३४). (आज्ञप्तिः=दूतकः)

+ विष्णुवर्द्धन (पांचवें) को 'कलिविष्णुवर्द्धन' भी कहते थे.

x इ० ऐ० जि० १३, पृ० १८६-१८७.

† अङ्ककारः साक्षात् (इ० ऐ० जि० २०, पृ० १०२).

() गुणकविजयादित्य के स्थान पर गुणगविजयादित्य, गुणगांविजया-

थे. अम्म (प्रथम) के दानपत्र में उस (विजयादित्य) के विषय में यह लिखा है कि 'राठौड़ राजा से उत्तेजित किये जाने पर उसने गंगों (गंगावंशियों) को जीता, युद्ध में मंगि का सिर काटा, और कृष्ण तथा संकिल को भयभीत कर उनके नगर (चक्रकोट और किरणपुर) जला दिये' * . चालुक्य भीम (दूसरे) के ताम्रपत्र में उसे मंगि † को मारनेवाला, तथा किरणपुर को जलाने वाला लिखा है ‡ . सोलंकी मल्लपदेव + के शिलालेख से पाया जाता है कि 'उस (विजयादित्य) ने रणखेत में मंगिराज के सिर से कंदुकक्रीडा की, चक्रकूट को जलाया, कृष्ण तथा किरणपुर में रहनेवाले संकिल को भयभीत किया, वल्लभेन्द्र (राठौड़ राजा) की महिमा कायम रख दी और कलिंगवालों से खिराज में हाथी लिये' x .

दित्य और गुणकेनल्लविजयादित्य भी लिखा मिलता है.

* गंगानंगजवैरिशक्तिरसमान् रट्टेशसंचोदितो जित्वा मंगिशिरोहरद्युधि महाबाह्वाप्तवीर्यार्यमा । कृष्णं संकिलमंकिताखिलबलप्राप्तोरुसद्विक्रमो भीत्यात्तौ च विधाय तत्पुरमरं यो निर्ददाह प्रभुः ॥ (सा० इ० इ० जि० १, पृ० ३६).

† मंगि (मंगिराज) कहाँ का राजा था, इसका ठीक निर्णय नहीं हो सका. शायद वह गंगावंशी हो.

‡ तत्सूनुः कलिविष्णुवर्द्धनोध्यर्द्धवर्षम् । तत्सूनुर्मंगिहननकिरणपुरदहन विख्यातकीर्तिर्गुणगविजयादित्यश्चतुश्चत्वारिंशतम्—(इ० ऐ० जि० १३, पृ० २१३).

+ 'मल्लपदेव'—पूर्वी सोलंकी राजा विजयादित्य पांचवें (बेत) का वंशज और पिठापुरं (पिठापुरम्—मद्रास इलाते में) का स्वामी था.

x मंगिराजोत्तमांगेन यो वीरसमरांगणे । चकार कंदुकक्रीडां नाम्ना त्रिभुवनांकुशः ॥ योधाक्षीचक्रकूटं किरणपुरगतं संकिलं कृष्णयुक्तं योभैषीद्वल्लभेन्द्रं निजमहिमयुतं यो व्यधादग्रहीच्च । कालिंगप्राभृतेभान्स गुणगविजयादित्यदेवो महेन्द्रश्च-

राठौड़ राजा से उत्तेजित किये जाने पर लड़ना तथा वल्लभेन्द्र * की महिमा कायम रखना लिखने से पाया जाता है, कि वह राठौड़ों के मातहत था और उनपर चढ़ाई होने या उनकी चढ़ाइयों के समय उनके पक्ष में रहकर लड़ा हो. वह राठौड़ राजा अमोघवर्ष (प्रथम) और उसके पुत्र कृष्ण (दूसरे) का भी समकालीन था, और अमोघवर्ष के शिलालेख में यह लिखा मिलता है, कि मालव, वेंगी आदि के राजा उसकी सेवा करते थे, जिससे अनुमान होता है, कि उसने अमोघवर्ष की सहायता की हो. उपर्युक्त कृष्ण कहां का राजा था यह निश्चय पूर्वक मालूम नहीं हो सका, परन्तु संभव है, कि वह मालवे का रामार राजा कृष्णराज (उपेन्द्र), और चक्रकूट (चक्रकोट) उसकी राजधानी या उसके राज्य का कोई प्रसिद्ध नगर x या वारिंशत्समा भूवल्लभश्च चतुस्संयुता रक्षति स्म ॥ (ए० इ० जि० ४, पृ० ३३-३४)

* वल्लभेन्द्र = राठौड़ राजा. वल्लभ, वल्लभराज, वल्लभेन्द्र आदि पश्चिमी सोलंकियों के विरुद्ध थे. जब से राठौड़ों ने उनका राज्य छीना तब से उन्होंने उन्हें धारण किया था.

† विजयादित्य (दूसरे) के खिताबों से पाया जाता है, कि वह स्वतंत्र राजा हो, अथवा कुछ समय तक स्वतंत्र रहा हो, परन्तु उसके पुत्र विष्णुवर्द्धन का विरुद्ध खाली 'महाराज' होने से निश्चित है, कि वह स्वतंत्रता पूर्वक राज करने नहीं पाया और उसका उत्तराधिकारी विजयादित्य (तीसरा) राठौड़ अमोघवर्ष के मातहत था.

‡ कृष्ण (दूसरे) के समय के ताम्रपत्रादि श० सं० ७६७ (वि० सं० ६३२ = ई० स० ८७५) से ८३३ (वि० सं० ६६८ = ई० स० ६११) तक के मिले हैं.

+ वज्राङ्गमगधमालववर्गेणशैरर्चितो—(इ० ए० जि० १२, पृ० २१८).

x दक्षिण के सोलंकियों के लेखादि से पाया जाता है, कि चक्रकूट, चक्रकोट या चक्रकोटम् मालवा (धारा) के राजा का कोई नगर हो.

किला हो. कृष्ण का सहायक सांकिल कहां का राजा था और उसका निवासस्थान किरणपुर कहां था इसका पता नहीं चलता.

उस (विजयादित्य) ने श० सं० ७६५ (वि० सं० ६०० = ई० सं० ८४३) से ८०६ (वि० सं० ६४४ = ई० सं० ८८७) तक ४४ वर्ष राज्य किया, और उसके पुत्र न होने के कारण उसके छोटे भाई युवराज विक्रमादित्य का पुत्र भीम उसके राज्य का मालिक हुआ.

~~~~~

## प्रकरण दसवां.

### भीम \*.

भीम ( प्रथम ) के विरुद्ध 'द्रोहार्जुन', 'शौचकंदर्प', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' मिलते हैं, जिनसे स्पष्ट है—कि वह स्वतंत्र राजा था. उसके ताम्रपत्र में लिखा है, कि 'विजयादित्य ( तीसरे ) का देहान्त होने पर राठौड़ों ने वेंगीमंडल पर आक्रमण किया, परन्तु भीम अपने बाहुबल से उनको परास्त कर वहाँ का राजा हुआ' †, और अरुण ( दूसरे ) के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'उसने कृष्णवल्लभ ‡ को जीता था' +. विजयादित्य ( तीसरे ) के देहान्तसमय दक्षिण के राठौड़राज्य का मालिक कृष्णराज ( दूसरा ) था, अतएव उसको विजय कर भीम वेंगी के राज्यसिंहासन पर बैठा होगा. उसके सेनापति का नाम महाकाल × था. उसने श० सं० ८०६

\* भीम को ताम्रपत्रों में बहुधा 'चालुक्य भीम' लिखा है, और उसको विष्णुवर्द्धन ( छठा ) भी कहते थे. उसका बनवाया हुआ भीमेश्वर का मंदिर भोदावरी जिले में कोकेनद के निकट भीमेश्वरम् नामक स्थान में विद्यमान है.

† स समस्तभुवनाश्रयश्रीविजयादित्यश्चतुश्चत्वारिंशद्वर्षाणि । तदनु सवितर्यस्तं गते तिमिरपटलेनेव रट्टदायादबलेनागिद्व्याप्तम् वेंगीगण्डलम् तदनुजविक्रमादित्यसूनुश्चलुक्यभीमाधिपो द्रोहार्जुनापरनामा स्वधिक्रमैकसहायतरवारिप्रभयावभास्याधिपतिरभूत्... ( रा० इ० इ० जि० १, पृ० ४० ).

‡ कृष्णवल्लभ=राठौड़ राजा कृष्णराज ( दूसरा ).

+ इ० ऐं० जि० २०, पृ० १०३.

× महाकाल उस ( भीम ) की धाय नागपोटि की बेटी गामकांबा का पुत्र था ( इ० ऐं० जि० ८, पृ० ७७-७८ ).

( वि० सं० ६४४=ई० स० ८८७ ) से ८३६ ( वि० सं० ६७४=ई० स० ६१७ ) तक ३० वर्ष राज्य किया, उस समय का एक ताम्रपत्र \* मिला है. उसके दो पुत्र विजयादित्य और विक्रमादित्य थे, जिनमें से बड़ा विजयादित्य उसका उत्तराधिकारी हुआ:

### विजयादित्य ( चौथा. ) †

विजयादित्य ( चौथे ) का विरुद्ध 'कलियर्त्यक' ‡ मिला है. उसके पुत्र अम्म ( प्रथम ) के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि 'उसने त्रिकलिंग + के जंगल सहित बेंगीमंडल पर राज्य किया' ×, और भीम ( दूसरे ) के ताम्रपत्र में उसका कलिंग के राजाओं को जीतना लिखा ( ) है. उसकी एक राणी का नाम मेलांबा था. उसने श० सं० ८३६ ( वि० सं० ६७४=ई० स० ६१७ ) से ८४० ( वि० सं० ६७५=ई० स० ६१८ ) तक ६ मास

\* ए० ई० जि० ५, पृ० १२८-१३०.

† विजयादित्य के स्थान पर 'कोल्लबिगंड विजयादित्य', 'कोल्लबिगंड', या 'कोल्लबिगंडभास्कर' भी लिखा मिलता है. 'कोल्लबिगंड' उसका कोई स्थितान होना चाहिये, जिसका अर्थ मालूम नहीं होसका.

‡ कलियर्त्यक ( कलियर्ति+अंक ) के स्थान पर 'कलियर्तिगंड' भी लिखा मिलता है.

+ त्रिकलिंग=तैलंगन=तिलंगाना.

× निरुपमनृपभीमस्त्रिशतं वत्सराणां निजगुणगणकीर्तिव्यासदिकन्नकवालः ॥  
तत्सूनुर्विजयादित्यः षण्मासान्वेक्षिमण्डलं । त्रिकलिङ्गाटवीयुक्तं परिपालय दिवं.  
ययौ ॥ ( ई० ई० जि० ८, पृ० ७७ ).

( ) ई० ई० जि० १३, पृ० २१३.

राज्य किया. उसके दो पुत्र अम्म और भीम \* थे, जो अलग अलग राणियों से उत्पन्न हुए थे, उनमें से अम्म उसका उत्तराधिकारी हुआ.

### अम्म †.

अम्म ( अम्मराज ) के विरुद्ध 'महाराज, 'राजमहेन्द्र' और 'त्रिभुवानांकुश' मिलते हैं. 'उसके' ताम्रपत्र में यह लिखा है, कि 'उसके कितने एक कुटुंबी सामंत जब नैसर्गिक शत्रुओं (राठौड़ों) के पक्ष में मिल गये, तो उसने शस्त्र धारण किया और अपने बाहुबल से शत्रुओं को विजय कर अपनी प्रजा तथा सेना की प्रीति संपादन की' †. इससे पाया जाता है. कि उसके राज्याभिषेकसमय भी राठौड़ों + ने बेंगलदेश पर चढ़ाई की हो, और उस समय उसके कितने एक कुटुंबी ( सामंत ) भी उनसे मिल गये हों, परन्तु उनको सफलता प्राप्त होने नहीं पाई. उसने श० सं० ८४० ( वि० सं० ६७५ = ई० स० ६१८ ) से ८४७ ( वि० सं० ६८२ = ई० स० ६२५ ) तक ७ बरस x राज किया. उस समय के दो ताम्रपत्र ( ) मिले हैं, जिनमें से एक के

\* भीम मेलांबा से उत्पन्न हुआ था. अम्मकी माता के नाम का उल्लेख नहीं मिलता.

† अम्म को विष्णुवर्द्धन ( सातवां ) भी कहते थे.

‡ तत्सूनुसुदयादित्यद्वाम्गोराजमहेन्द्रापरनागा रिपुतिभिरमारान्निहत्य प्रकृतिसपत्नपक्षनिक्षिप्तसामन्तकुल्यकुटिलगनोभंगकरं करवालमुत्कृष्य शक्तित्रयसंपन्नप्रतापावर्जितपितृपितामहप्रकृतिबलः.... ( सा० इ० इ० जि० १, पृ० ४० ).

+ अम्म के समय मान्यखेट पर राठौड़ राजा गोविंद ( चौथा ) था, अतएव यह चढ़ाई उसकी होनी चाहिये.

x तस्याप्रसूनुरम्गराजस्सप्त वर्षाणि--( भीम दूसरे के ताम्रपत्र से--इ० पं० जि० १३, पृ० २१४ ).

( ) ए० इ० जि० ५, पृ० १३२-१३३; सा० इ० इ० जि० १, पृ० ३६-४१.

दूतक का नाम कटकराज \* है. उसके समय से बेंगीदेश की राजधानी राजमहेन्द्री हुई, जो शायद उसीकी बसाई १० हुई नगरी हो. उसके दो पुत्र विजयादित्य और भीम थे, जिनमें से बड़ा विजयादित्य उसके पीछे बेंगी का राजा हुआ.



### विजयादित्य ( पांचवां ).

विजयादित्य ( पांचवें ) ने, जिसको बेट ३ भी कहते थे, बाल्यावस्था में राज पाया, परंतु १५ दिन + बाद ताड़प ने उस-

\* 'कटकराज' का अर्थ 'कटक नामक स्थान का राजा' अथवा 'कटक' ( रोना ) का अधिकारी होता है. शायद यह उक्त नाम का कोई राजवंशी हो.

१० गोदावरी नदी के उत्तरी तट पर की नगरी राजमहेन्द्री ( राजमहेन्द्रपुर ) राजा अम्म के विरुद्ध ' राजमहेन्द्र ' के कारण उक्त नाम से प्रसिद्ध हुई हो यह अधिक संभव है, परन्तु एक जनश्रुति उसका वह नाम उड़ीसा के राजा ' राजमहेन्द्र ' के नाम पर से और दूसरी सोलंकी राजा महेन्द्र के नाम से प्रसिद्ध होना भी प्रकट करती है.

३ 'बेट' विजयादित्य के बचपन का नाम हो और राज्य पाने के पश्चात् उसने विजयादित्य नाम धारण किया हो यह संभव है. पूर्वी सोलंकीयों में से बहुत सों के दो दो नाम मिलते हैं, जिराका कारण यही अनुमान होता है, कि उनके यहां बहुधा बचपन का नाम अलग और राज्य पाने बाद का अलग रखा जाता हो. दक्षिण के राज्यों में अबतक भी ऐसे उदाहरण मिल आते हैं, कि राज्य पाने बाद कभी कभी नाम पलट दिया जाता है, और कहीं कहीं तो दो तीन पीढ़ियों के बाद वे के वे ही नाम फिर रखे जाते हैं. ऐसा ही पूर्वी सोलंकीयों में विष्णुवर्द्धन और विजयादित्य के लिये समझना चाहिये.

+ तत्सूनुर्विजयादित्यः पत्नं—( भाग दूसरे के ताम्रपत्र से—सा० इ० इ० जि० १, पृ० ४५ ). तत्सुतं विजयादित्यं बालमुच्चय्य तारुणो मासमेकं—(अम्म दूसरे के ताम्रपत्र से—इ० पें० जि० ७, पृ० १६ )

से राज्य छीन \* लिया. उसके वंशज बहुत पीछे तक पीठापुर में राज करते रहे थे, जिनका वृत्तान्त कुब्जविष्णुवर्द्धन के मुख्य वंशजों ( वेंगी के राजाओं ) का इतिहास समाप्त करने बाद लिखा जायेगा.

### ताडप †.

ताडप उपर्युक्त राजा गुणगविजयादित्य के सबसे छोटे भाई युद्धमल्ल का पुत्र था. विजयादित्य से राज्य छीन कर वेंगी के राज्यसिंहासन पर बैठा, परन्तु वह राज्य का हकदार न था, जिससे राज्य में उपद्रव मचा और कुछ समय तक ' जिसकी लाठी उसकी भैंस ' यह कहावत उक्त राज्य के लिये चरितार्थ हुई. एक महीने बाद राजा भीम ( चालुक्य भीम ) का दूसरा पुत्र विक्रमादित्य ( विजयादित्य चौथे का छोटा भाई ), उसको निकाल कर राजा बन बैठा.

\* अम्म दूसरे के एक ताम्रपत्र में ऐसा लिखा मिलता है, कि ताडप ने उसपर हमला कर उसे कैद किया था ( विजयादित्यः पक्षमेकम् । तमाक्रम्य कारागारे निधाय चालुक्यभीमपितृव्यो युद्धमल्लात्मजस्तालनूपो मासमेकम्—इ० पृ० जि० १३, पृ० २४९ ).

† 'ताडप' के स्थान पर भिन्न भिन्न ताम्रपत्रों में तालप, ताल और ताह नाम भी मिलते हैं.

‡ अधिकतर ताम्रपत्रों में ताडप को निकाल कर विक्रमादित्य का राज लेना लिखा मिलता है, परन्तु भीम तीसरे के एक ताम्रपत्र में उसे युद्ध में मारकर राज्य लेना लिखा है—( तं युधि विनिहत्य पुनश्चालुक्यभीमभूपात्मजो विक्रमादित्यराजः—( इ० पृ० जि० १३, पृ० २१४ ).

## विक्रमादित्य और भीम ( दूसरा ).

विक्रमादित्य ने ११ महीने \* वेंगी और त्रिकालिंग ( तिल-गाना ) दोनों देशों पर राज्य किया, जिसके पीछे उसको जीतकर अम्मका दूसरा पुत्र भीम † ( दूसरा ) वेंगी के राज्यसिंहासन पर बैठा, परंतु ८ महीने ‡ बाद उसको मारकर ताडप का पुत्र युद्धमल्ल राजा हुआ.

### युद्धमल्ल.

युद्धमल्ल + ने श० सं० ८४८ ( वि० सं० ६८३ = ई० स० ६२६ ) से ८५५ ( वि० सं० ६९० = ई० स० ६३३ ) तक ७ वर्ष × पर्यंत शासन किया, जिसके पीछे विजयादित्य चौथे ( कोल्लवि-गंड ) के दूसरे पुत्र भीम ने उसको विजय कर राज्य ले लिया.

### भीम ( तीसरा ).

अम्म ( दूसरे ) के देहान्त के समय से पूर्वी सोलंकियों में

\* विक्रमादित्यराजः । एकादशमासान्भुवमन्वपालयत्—( इ० ऐ० जि० १३, पृ० २१४ ). विक्रमादित्यः संवत्सरं सत्रिकर्त्तुं वेंगिमण्डलमपालयत् ( सा० इ० इ० जि० १, पृ० ४५ ). अधिकतर ताम्रपत्रों में विक्रमादित्य का ११ महीने राज्य करना लिखा मिलता है, परन्तु एक में नव मास और तीन में एक वर्ष लिखा है.

† भीम ( दूसरे ) को केवल 'भीम' लिखा है, परन्तु भीम प्रथम और तीसरे को बहुधा चालुक्यभीम लिखते थे.

‡ भीमोम्मसूनुः...मासाष्टकं....( इ० ऐ० जि० १३, पृ० २१४ ).

+ एक ताम्रपत्र में युद्धमल्ल के स्थान पर 'मल्ल' लिखा है.

× व्यापाद्य तं (=भीमं) संयुगे ताहज्येष्ठसुतोथ मल्लनृपातिस्स सावपाद्वत्सरान् ( इ० ऐ० जि० १३, पृ० २१४ ).

जो आपस का बखेड़ा खड़ा हुआ था, उसका अंत भीम ( तीसरे ) ने किया. उसके विरुद्ध 'सर्वलोकाश्रय', 'गंडमहेन्द्र', 'राजमार्तण्ड', 'त्रिभुवनांकुश'\*, 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' मिलते हैं. उसको चालुक्यभीम तथा विष्णुवर्द्धन ( आठवां ) भी कहते थे. जिस समय युद्धमल्ल को निकाल कर वह वेंगी की गद्दी पर बैठा उस समय कई अन्य दावेदार खड़े हुए थे, जिन सब को उसने दबाया इतना ही नहीं, किन्तु उसने यशस्वी राजमध्य को, वीर धलग को, भयानक तातबिद्धि को, सदा युद्ध के लिये तय्यार रहनेवाले विज्ज को, अप्पय को, गोविंद के भेजे हुए महान् सैन्य को, चोल देश के राजा लोवबिद्धि को तथा युद्धमल्ल † को जीता था ‡. इन प्रतिपत्तियों में से गोविंद राठौड़ राजा गोविंद चौथा होना चाहिये, जो श० सं० ८५५ ( वि० सं० ६६० = ई० स० ६३३ ) के पीछे तक विद्यमान था. अप्पय पश्चिमी गंगावंशी अप्पयदेव ( अप्पयरस ) हो, और दूसरे शायद उसके अन्य दावेदार या उनके सहायक हों. वह शिव का परम भक्त था और उसकी एक राणी का नाम लोकमहादेवी मिलता है. उसने श० सं० ८५५ ( वि० सं० ६६० = ई० स० ६३३ ) से ८६७ ( वि० सं० १००२ = ई० स० ६४५ ) तक १२ बरस +

\* 'त्रिभुवनांकुश' यह विरुद्ध उसके ताम्रपत्र की मुद्रा ( मुहर ) में मिलता है.

† युद्धमल्ल उसका पूर्वाधिकारी होना चाहिये, जिसका राज्य उसने जीता था.

‡ ई० सं० जि० २०, पृ० २७० ( अम्म दूसरे का दानपत्र ).

+ निर्जित्यार्जुनसन्निभो जनपदात्तं निर्गम्योद्धतान् दायदानीनभानुलीन-भगणाकारान् विधायेतरान्। वज्रीवोर्जितनाकमम्मनृपतेर्भाताकनीयान्भुध भीमोभीम-पराक्रमस्समभुनक्संवत्सरान्द्वादश ॥ ( अम्म दूसरे के दानपत्र से-ई० सं० जि० ७, पृ० १६ )

शासन किया. उस समय के तीन \* ताम्रपत्र मिले हैं. उसके तीन पुत्र दानार्णव, अम्म और काम हुए, जिनमें से अम्म, जो लोकमहादेवी से उत्पन्न हुआ था, उसका उत्तराधिकारी हुआ.

—:—:—:—

### अम्म ( दूसरा ) †.

भीम ( तीसरे ) का स्वर्गवास होने पर युद्धमल्ल ने फिर राज्य पाने का यत्न किया, जिसको हराकर अम्म ( दूसरा ) बेंगी का राजा हुआ ‡. उसका राज्याभिषेक बारह वर्ष की अवस्था में श० सं० ८६७ ( वि० सं० १००२ = ई० स० ६४५ ) मार्गशीर्ष कृष्ण १३ ( अमान्त ) शुक्रवार ( ता० ५ दिसंबर ) को हुआ †. उसके विरुद्ध 'समस्तभुवनाश्रय', 'राजमहेन्द्र', 'राजाधिराज', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' मिलते हैं, तथा उसके ताम्रपत्रों की मुद्रा ( मुहर ) में 'त्रिभुवनांकुश' विरुद्ध भी है. उसने श० सं० ८६२ ( वि० सं०

\* इ० ऐं० जि० १३, पृ० २१३-१५; ए० इ० जि० ५, पृ० १३५-३७; सा० इ० जि० १, पृ० ४४-४५. इनमें से तीसरे ताम्रपत्र में यह लिखा है, कि 'मेरे राज्य की रक्षा करनेवाले पानरवंशी राजा वाज्जय के निवेदन करने पर मैंने वेदपाठी ब्राह्मण कोम्मण को एक गांव दिया'. राजा वाज्जय भीम ( तीसरे ) का कोई सामन्त होना चाहिये.

† उसको विजयादित्य ( छठा ) भी कहते थे.

‡ युद्धे युद्धमल्लं तं धात्र्या निर्धाय अम्मभूतः स्यात् पंचविंशति वर्षा-यथात्—( राजराज दूसरे के ताम्रपत्र से—इ० ऐं० जि० १४, पृ० ५२ ).

†. गिरिसवसुसंख्याब्दे शकसमये मार्गशीर्षमासेरिगन् । कृष्णत्रयोदशदिने भृगुवारे भैत्रनक्षत्रे ॥ धनुषि रवौ घटलग्ने द्वादशवर्षे तु जन्मतः पटम् । ( इ० ऐं० जि० ७, पृ० १६ ).

१०२७ = ई० स० ६७० ) तक २५ वर्ष शासन किया. उस समय के ६ ताम्रपत्र \* मिले हैं, जिनमें से तीन का दूतक कटकराज और एक का कटकाधीश है. एक ताम्रपत्र से यह भी पाया जाता है, कि उसके श्वसुर का नाम राजा काम और सास का नाम नायमांवा था †. उसके पुत्र न होने से उसके पीछे उसके बड़े भाई दानार्णव ने राज पाया, जो अपने पिता के देहान्त समय किसी कारण से राजा होने नहीं पाया था.

### दानार्णव ‡.

दानार्णव ने श० सं० ८६२ ( वि० सं० १०२७ = ई० स० ६७० ) से ८६५ ( वि० सं० १०३० = ई० स० ६७३ ) तक तीन वर्ष + राज किया, जिसके बाद २७ वर्ष तक बेंगी देश पर कोई राजा न रहा. उसकी एक राणी का नाम आर्यामहादेवी मिलता है. उसके दो पुत्र शक्तिवर्मा और विमलादित्य × थे.

\* ई० ऐं० जि० ७, पृ० १५-१७; जि० ८, पृ० ७४-७५; जि० १२, पृ० ९१-९३; जि० १३, पृ० २४६-२५०. सा० ई० ई० जि० १, पृ० ४७-४८, पृ० ई० जि० ५, पृ० १४०-१४१.

† सत्यस्य जन्मभूमिस्सज्जनसंसेवितसरोनाथः । विक्रमगुणैकधामा नृप-  
कामः पूजितेशपदकमलः ॥ रूपलावण्यसौभाग्यसत्यधर्मपरायणा । नायमांवा-  
गना तस्य सरोरुहदलेक्षणा ॥ ताभ्यामस्मदीयश्वशुरश्वश्रूभ्यां प्रार्थमानैरस्माभि...  
( ई० ऐं० जि० १३, पृ० २४६—अग्ग दूसरे के दानपत्र से ).

‡ दानार्णव को दाननृप भी कहते थे.

§ तस्य द्वैमातुरो दाननृपस्त्रीणि वर्षाणि—( वीरकोट के ताम्रपत्र से—  
सा० ई० ई० जि० १, पृ० ५४ ).

× विमलादित्य आर्यामहादेवी से उत्पन्न हुआ था.

### २७ वर्ष की अस्वामिक अवस्था.

( सा० सं० ८६५ ( वि० सं० १०१० = ई० स० ६७३ ) से ६२१ ( वि० सं० १०५६ = ई० स० ६६६ ) तक २७ वर्ष के कर्ली वेंगीदेश का कोई नियत स्वामी नहीं रहा \*, जिसका कारण + कुछ भी लिखा नहीं मिलता, परन्तु संभव है, कि सोलंकियों में फिर राज्य के लिये आपस की लड़ाई शुरू हुई हो और वे उस अरसे में लड़ते ही रहे हों. कुलोत्तुंगखोड ( दूसरे ) के ताम्रपत्र में दानार्णव का ३० वर्ष का राज्य करना लिखा है, और अस्वामिक अवस्था का उल्लेख नहीं है, परन्तु हम उक्त कथन को स्वी नहीं कर सकते, क्योंकि स्वयं दानार्णव के पुत्र विमलादित्य के दानपत्र में उस ( दानार्णव ) का तीन ही वर्ष राज्य करना और २७ वर्ष तक अस्वामिक अवस्था रहना लिखा है. X जो अधिक विश्वास योग्य है, और वैसा ही बहुधा पिछले सब ताम्रपत्रों में लिखा मिलता है ( संभव है, कि दानार्णव उस बखेड़े के समय जीवित हो ).

\* ततः सप्तविंशतिवर्षाणि देवदुरीदया वेंगीमहिरनायकामवत्—( सा० सं० ई० जि० १, पृ० ५४ ). ऐसा ही अन्य ताम्रपत्रों में लिखा मिलता है. एक लेख में ऐसा भी लिखा है, कि आंध्र और कलिङ्ग देश पर कोई राजा नहीं था—( तेलुगुशासनं, पृ० ७७७. ई० ई० जि० १०, पृ० २७२ ).

+ कोई कोई विद्वान् ऐसा अनुमान करते हैं, कि चोलवालों ने उक्त देश पर चढ़ाई कर २७ वर्ष तक उसको अपने अधिकार में रक्खा हो, परन्तु चोल के राजाओं में से राजराज के पूर्व किसी का वेंगी देश पर चढ़ाई करना पाया नहीं जाता, अतएव आपस का ही बखेड़ा रहना अधिक सम्भव है.

‡ दानार्णवक्षिशत्—( ई० ई० जि० १४, पृ० ५६ ).

\* द्वैमात्रोन्मनूपतेर्दानूपो राजभीमनूपतनयः । विद्याकसापचतुरश्वतुरतध-

## शक्तिवर्मा.

शक्तिवर्मा ने श० सं० ६२१ (वि० सं० १०५६ = ई० सं० ६६६) में अपनी शक्ति से शत्रुओं को दबा कर राज्य पाया और 'चालुक्यचंद्र' विरुद्ध धारण किया. उसके कितनेक सोने के सिक्के सियाम तथा आराकान की \* तरफ से मिले हैं, जिनके + मध्य में वराह का चिन्ह और उसके ऊपर छत्र तथा चमर बने हैं और किनारे के निकट प्राचीन कन्नड़ी लिपि में 'श्रीचालुक्यचंद्रस्य' ‡ (चालुक्यचन्द्र का सिक्का) लेख है. उसने १२ वर्ष शासन किया x. उसके पुत्र न होने के कारण उसका छोटा भाई विमलादित्य उसके पीछे वेंगी के राज्यसिंहासन पर बैठा.

रामपातसमास्तिसः ॥ अनुदानार्णवादारीद्वैवदुश्चेष्टया ततः । सप्तविंशतिवर्षाणि वेंगीमहिरनायका ॥ ( ए० इ० जि० ६, पृ० ३५४ ).

\* प्राचीन काल में व्यापार के निमित्त एक देश के सिक्के दूसरे देशों में भेजे जाते थे. हिन्दुस्तान में प्राचीन रोमन सिक्के ( चांदी के ) बहुत मिल आते हैं, वे इसी तरह इस देश में आये हुए हैं.

+ ये सिक्के रुपये से कुछ बड़े, परन्तु अधिक पतले हैं और केवल एक ही ओर छाप लगी है, दूसरी तरफ साफ है.

‡ सर वॉल्टर हलियट ने 'कोइन्स ऑफ़ सदर्न इंडिया' नामक अपने पुस्तक में 'श्रीचालुक्यवत्सलम' पढ़ा है ( पृ० १५२, डी ), जो भूल है. उक्त सिक्के का जो फोटो उस पुस्तक में छपा है ( प्लेट तीसरी, नं० ७६ ), उसमें 'श्रीचालुक्यचंद्रस्य' पढ़ा जाता है. हलियट साहब को केवल एक ही सिक्का मिला था, परन्तु इ० ऐ० जि० १६ वीं में उक्त राजा के तीन और सिक्कों के फोटो छपे हैं ( पृ० ७८ के पारा की प्लेट, नं० ए, बी, और सी ) जिनमें भी 'श्रीचालुक्यचंद्रस्य' ही पढ़ा जाता है.

\* अत्रान्तरे दानं नरेन्द्रसूनुः श्रीशक्तिवर्मा सुरराट्गणधर्मा । यशशैर्यशक्त्या

### विमलादित्य.

विमलादित्य के विरुद्ध 'त्रिभुवनांकुश', 'सर्वलोकाश्रय', 'विरुदंकभीम', 'मुम्माडिभीम', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' और 'परमभट्टारक' मिलते हैं, और उसको विष्णुवर्द्धन ( नव-मा ) भी कहते थे. उसका राज्याभिषेक श० सं० ६३३ ( वि० सं० १०६८ = ई० स० १०११ ) वृषभ ( ज्येष्ठ ) शुक्ला ६ गुरुवार ( ता० १० मई ) के दिन हुआ \*, और उसके पुत्र राजराज का श० सं० ६४४ ( वि० सं० १०७६ = ई० स० १०२९ ) सिंह १ ( भाद्रपद ) कृष्णा २ ( अमांत ) गुरुवार को हुआ † था, अतएव उस ( विमलादित्य ) ने ११ वर्ष और ३ महीने से कुछ अधिक समय तक राज्य किया होगा, किंतु पिछले सब ताम्रपत्रों में + उसका ७ वर्ष ही राजत्वकाल माना है. इस प्रकार ४ वर्ष के फर्क का कुछ भी कारण नहीं लिखा, परंतु महेन्द्रगिरि X पर के दो लेखों में ऐसा लिखा है, कि राजेन्द्रचोड़ ()

विनिहत्य शत्रून् स द्वादशाब्दान्समरक्षदुर्व्वीम् ॥ ( शक्तिवर्मा के भाई विमलादित्य के दानपत्र से—ए० ई० जि० ६, पृ० ३५४ ).

\* अनलानलरन्ध्रगते शकवर्षे वृषभमासि सितपक्षे । यष्टपष्ठ्यां गुरुपुष्ये सिंहे लग्ने प्रसिद्धमभिषिक्तः ॥ ( विमलादित्य के दानपत्र से—ए० ई० जि० ६, पृ० ३५४ ).

† सौरमान से सिंहसंक्रांति अर्थात् भाद्रपद ( ऐसे ही वृषभ=ज्येष्ठ ).

‡ यो रक्षितुं वसुमती शकवत्सरेषु वेदांबुराशिनिधिवर्त्तिषु सिंहगेर्के । कृष्ण-द्वितीयदिवसोत्तरभाद्रिकायां वारे गुरोर्व्वणिजि लग्नवरेभिषिक्तः ॥ ( राजराज के ताम्रपत्र से—ई० ई० जि० १४, पृ० ५३ ),

+ विमलादित्य के पुत्र राजराज के ताम्रपत्र में भी उसका ७ वर्ष ही राज्य करना लिखा है.

X महेन्द्रगिरि नामक पहाड़ी मद्रास इलाके के गंजाम जिले में है.

() राजेन्द्रचोड़ = चोल देश के सूर्यवंशी राजा राजराज ( प्रथम ) का पुत्र.

ने विमलादित्य को हराकर उक्त पर्वत पर अपना विजयस्तंभ खड़ा किया, और तंजौर के निकटवर्ती 'तिरुवैयारू' नामक स्थान के पंचनदेश्वर के मंदिर में चोलदेश के राजा राजराज प्रथम के राज्य वर्ष २६ वें का \* एक शिलालेख लगा हुआ है, जिसमें विमलादित्य ( विष्णुवर्द्धन ) के दान का उल्लेख है. इन तीनों लेखों से अनुमान होता है, कि शायद विमलादित्य को, राज्य पाने के थोड़े ही दिनों बाद, चोल देश के राजा राजराज का पुत्र राजेन्द्रचोड़ युद्ध में जीत कर अपने साथ तंजौर ले गया हो, जहां करीब चार बरस रहने उपरान्त उस ( विमलादित्य ) ने पीछा अपनी राजधानी में आकर ७ वर्ष तक राज्य किया हो, जिससे पिछले ताम्रपत्रों में उसका वही समय लिखा गया हो.

उसका विवाह चोलदेश के सूर्यवंशी राजा राजेन्द्रचोल ( राजेन्द्रचोड़ ) की छोटी बहिन कुंदवा महादेवी से हुआ, जिस

\* राजराज के राज्य का २९ वां वर्ष ई० स० १०१३-१४ होगा, क्योंकि उसका राज्याभिषेक ई० स० १००५ के जून और जुलाई महीनों के बीच होना निश्चित है, और उसके पुत्र राजेन्द्रचोल के राज्य का प्रारंभ ई० स० १०१२ के आरंभ के आसपास होना उसीके लेखों से सिद्ध होता है, अतएव यदि उक्त लेख का संवत् शुद्ध पड़ा गया हो ( हमने उसका फोटो तह्नी देखा ) तो यही मानना पड़ेगा, कि उक्त संवत् में राजराज जीवित था, परंतु उससे कुछ पूर्व वह अपने पुत्र को राज दे चुका हो, अथवा उसकी जीवित दशा में उसका पुत्र ( राजेन्द्रचोड़ ) किसी प्रदेश का शासक नियत किया गया हो और उसी समय से उसने अपना राज्यवर्ष लिखना प्रारंभ कर दिया हो.

के आश्चर्य नहीं, कि विमलादित्य का कुंदवा महादेवी से विवाह उस समय हुआ हो, जब कि वह तंजौर में रहा था, और इस विवाह के होने से ही वेङ्गी और चोल के राजाओं के बीच मैत्री हुई हो.

से राजराज का जन्म हुआ था. उसके राज्य समय का १ दान-पत्र मिला है, जो उसके राज्य के ८ वें \* वर्ष का है. उसके दो पुत्र राजराज और विजयादित्य थे, जिनमें से बड़ा राजराज उसके पीछे बेंगी का मालिक हुआ.

### राजराज:

राजराज के विरुद्ध 'सर्वलोकाश्रय,' 'महाराजाधिराज,' 'परमेश्वर,' और 'परमभट्टारक' मिलते हैं, और उसको विष्णुवर्द्धन ( दसवां ) भी कहते थे. उसके ताम्रपत्र की मुद्रा ( मुहर ) में 'त्रिभुवनांकुश' † विरुद्ध है. उसका विवाह अपने मामा ‡

\* विमलादित्य के राज्य के ८ वें वर्ष का ताम्रपत्र मिलने से निश्चित है, कि उसने ७ वर्ष से अधिक समय तक राज्य किया था.

† पूर्वी सोलैंकी राजाओं में से कई एक के ताम्रपत्रों की मुद्रा में 'त्रिभुवनांकुश' विरुद्ध मिलता है, जिससे यह संशय रहता है, कि उन सबने वह उपनाम धारण किया था, या उनके ताम्रपत्रों पर पहिले से जो छाप लगती थी वही लगती रही, जैसा कि बल्लभीपुर ( काठियावाड़ में ) के राजाओं में प्रथम राजा भटार्क हुआ, जिसका नाम उसके वंश के पिछले सब राजाओं के दानपत्रों की मुद्रापर मिलने से निश्चित है, कि भटार्क के पीछे उनके यहां मुद्रा पलटी ही नहीं गई. शायद पूर्वी सोलैंकियों के यहां भी कुछ अरसे तक ऐसा ही हुआ हो.

‡ मामा की लड़की से विवाह करने को नर्मदा से उत्तरवाले बुरा समझते हैं, परन्तु दक्षिण में उसकी प्रथा है और वहां पर चारों वर्ण के लोग मामा की लड़की से शादी करते हैं. यह प्रथा प्राचीन है, क्योंकि श्रीकृष्ण के पुत्र मधुसूत और पौत्र अनिरुद्ध का विवाह उनके मामा की पुत्रियों से होना भागवत में लिखा है, और अर्जुन अपने मामा वसुदेव की पुत्री सुभद्रा से परखे थे. प्राचीन समय से ही इस प्रथा के होने के उदाहरण मिल आते हैं, परन्तु उसका

राजेन्द्रचोल की पुत्री अम्मद्देवी से हुआ था. उसके सोने के सिक्के दक्षिण तथा आराकान की तरफ से मिले हैं \*, जो ऊपर वर्णन किये हुए शक्तिवर्मा के सिक्कों की शैली के हैं, और उनपर 'श्रीराजराज स' † ( राजराज के सिक्के ) लेख है. उसने श० सं० ६४४ ( वि० सं० १०७६=ई० स० १०२२ ) से ६८५ ( वि० सं० ११२०=ई० स० १०६३ ) तक ४१ वर्ष † राज्य किया,

धर्म विरुद्ध होना माना गया है—( यत्त्वद्यतनानामहिच्छन्नकमाधुरब्राह्मणीनां सु-  
रापानादि दक्षिणात्यानां मातुलदुहितृविवाहादिस्मृतिविरुद्धमुपन्यस्तम्—कुमारील-  
भट्टराचिततंत्रवार्तिक, पृ० १३८. पञ्चधा विप्रतिपत्तिर्दक्षिणतस्तथोत्तरतः ॥ १७॥  
यानि दक्षिणतस्तानि व्याख्यास्यामः ॥ १८ ॥ यथैतदनुपेतेन सह भोजनं स्त्रिया  
सह भोजनं पर्युषितभोजनं मातुलापितृष्वसुदुहितृगमनमिति ॥ १९ ॥ अथोत्तरतः  
ऊर्णाविक्रयः सीधुपानमुभयतोदग्निर्व्यवहारः आयुधीयकं समुद्रयानमिति ॥ २० ॥  
इतरदितरस्मिन्कुर्वन्नुप्यति ॥ २१ ॥ तत्र तत्र देशग्रामायगेव स्यात् ॥ २२ ॥  
मिथ्यैतदिति गौतमः ॥ २३ ॥ उभयं चैव नाद्रियेत शिष्टस्मृतिविरोधदर्शनात् ॥ २४ ॥  
...बौधायनधर्मसूत्र, १ । १ । १७—२४.—देशजातिकुलधर्माश्चान्नैरविरु-  
द्धाः प्रमाणम्—गौतमधर्मसूत्र, ११ । २०; बं० ए० सो० ज० जि० २१,  
पृ० १९—२२; आनंदाश्रमग्रंथावली, नं० ४८, पृ० ४२५ ).

\* ई० ऐं जि० १६, पृ० ७८ के पास की छेद, नं० डी, ई और  
एफ; ई० ऐं जि० २५, पृ० ३२२ के पास की छेद, नं० २४ और २५;  
कॉइन्स, ऑफ़ सदर्नइंडिया, प्लेट ३, नं० ८०; एनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ इंडो आ-  
र्यन रिसर्च जि० २, भा० ३ नं० २, प्लेट ५ चीं का नं० १६ वां.

† 'श्रीराजराज स' में से 'स' के नीचे किसी में ३४, किसी में ३५ और कि-  
सी में ३७के अक्ष हैं, जिससे अनुमान होता है, कि उन सिक्कों में 'स' ( जिसके ऊपर  
का अंश स्पष्ट नहीं है ) 'सं' ( संवत् ) के वास्ते रक्खा गया हो ( बिंदी रह  
गई हो ); अतएव वे सिक्के उसके राज्य संवत् ( सन् जुलूस ) ३४, ३५ और  
३७ के होने चाहिये.

‡ तत्पुत्रो राजराजदेव एकचत्वारिंशत्—( कुलोत्तुङ्गचोड दूसरे का नाम—

उस समय के २ ताम्रपत्र\* मिले हैं, जिनमें से एक उसके राज्य के ३२ वें वर्ष का चंद्रग्रहण † के दिन का है. विमलादित्य ने चोल देश के सूर्यवंशी राजा के यहां विवाह किया, तब से ये पूर्वी सोलंकी चोलवालों का अनुकरण करने और चोल के राजाओं के से नाम धारण करने लगे और राजराज के पुत्र के समय से तो पूरे चोल ही बन गये थे. उस (राजराज) ने महाभारत ‡ का तेलुगु भाषा में अनुवाद कराया था. उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र राजेन्द्रचोड + हुआ.

पत्र-इं० ऐं० जि० १४, पृ० ५६). कहीं कहीं उसका ४० वर्ष राज करना भी लिखा है (पुत्रस्तस्य हिमांशुवंशतिलकः श्रीराजराजस्समाश्चत्वारिंशतमं ध्रुमं डलमपाद्भूतो-  
ककल्पद्रुमः—( ए० इं० जि० ४, पृ० २३५ ).

\* इं० ऐं० जि० १४, पृ० ५०—५५; ए० इं० जि० ४, पृ० ३०३-३०६.

† राजराज के राज्य के ३२ वें वर्ष का चन्द्रग्रहण शक सं० ६७५ ( वि० सं० १११० ) के मार्गशीर्ष शु० १५ का होना चाहिये.

‡ चालुक्यविक्रमादित्यचक्रवर्ती नृपाग्रणीः ॥ .... ॥ तस्मादभूत् क्षितिपति-  
प्रणतांघ्रियम् श्रीराजराजनृपतिः प्रविशालकीर्तिः । यस्सूरिभिस्सह किल स्मृतिजालै-  
सारगंधीचकार वरभारतवंशवृत्तं ॥ ( ए० इं० जि० ५, पृ० ३२ ).

+ राजेन्द्रचोड के स्थान पर राजेन्द्रचोल भी लिखा मिलता है. इसी तरह चोल ( देश ) के स्थान पर चोड लिखा मिलता है ( 'ल' के स्थान में 'ड' लिखने की प्रथा प्राचीन है—रलयोर्डिलयोश्चैन ).

## प्रकरण ग्यारहवां.

### राजेन्द्रचोड ( कुलोत्तुंगचोड ).

उसका शुरू नाम राजेन्द्रचोड था, परन्तु जब उस वह चोल ( चोड ) देश के महाराज्य का स्वामी बना तब से उसने कुलोत्तुंगदेव वा कुलोत्तुंगचोड \* नाम धारण किया था. विक्रमाङ्क-देवचरित में उसका नाम राजिग लिखा मिलता है, जो राजेन्द्र ( राजेन्द्रचोड ) का ही अपभ्रंश है. उसके विरुद्ध 'राजकेसरी-वर्मा', 'राजनारायण', 'चोलनारायण', 'करिकालचोल', 'अभय', 'जयधर', 'परांतक', 'सर्वलोकाश्रय' और 'चक्रवर्ती' मिलते हैं. उसको विष्णुवर्द्धन ( ग्यारहवां ) भी कहते थे. शक सं० ६८५ ( वि० सं० ११२०=ई० सं० १०६३ ) में उसके पिता का देहान्त होने पर वह वेंगराज्य का मालिक हुआ, जिससे थोड़े ही महीनों पहिले उसका मामा वीरराजेन्द्र चोलदेश के राज्य-सिंहासन पर बैठा था. उस समय चोलदेश का राज्य विस्तृत और प्रसिद्ध था, जिसमें उसको भी उक्त राज्य का स्वामी

\* राजराजनेन्द्रश्चत्वारिंशत्तमब्दानेकं च पुनर्गङ्गापातयदखिला ।....। तस्यासीदमरुत्तमा सुवरितैरमंगनाम्ना भुवि प्रख्याता शुभलक्ष्यैः कवसतिर्देवी जगत्पावनी । या जन्होरिव जन्हवी हिमवतो गौरीव लक्ष्मीरिव क्षीरोवाक्षिपेश-वशंतिलकाद्राजेन्द्रचोडादभूत् ॥ पुत्रस्तयोरभवदप्रतिघातशक्तिनिश्शेषितारिनिवहो महनीयकीर्तिः । गंगाधराद्विभुतयोरिव कार्तिकेयो राजेन्द्रचोड इति राजकुलप्र-दीपः ॥....॥ धत्ते मौलिं पराङ्मुख्यं गहति नृपकुले यः कुलोत्तुंगदेवो देवेन्द्र-त्वादनुने सुरपतिमहिमा चोडराज्येभिषिक्तः । ( सा० इ० इ० जि० १, पृ० ५३-५५, इ० ए० जि० १६, पृ० ४३० ). कुलोत्तुंगचोड के स्थान पर कुलोत्तुंगचोडदेव भी लिखा मिलता है.

होने की अभिलाषा \* हुई, और उसीसे वह बेंगी का राज्य अपने चचा विजयादित्य को सौंप कर कांची गया और चोल-राज्य का प्राप्त करने के प्रयत्न में लगा न. थोड़े ही वर्षों बाद उसके मामा ( वीरराजेन्द्र ) का देहान्त हुआ, जिससे उसका उद्योग सफल होने ही वाला था, परंतु कल्याण के पश्चिमी सोलंकी राजा विक्रमादित्य ( छठे ) ने, जो उस ( वीरराजेन्द्र ) का जमाई था, अपने साले अधिराजेन्द्र की सहायता कर बहुत कुछ लड़ने-भिड़ने बाद उसको चोल के सिंहासन पर बिठला दिया, परंतु उस ( विक्रमादित्य ) के कांची से लौटते ही वहां पर फिर उपद्रव खड़ा हुआ, जिसमें अधिराजेन्द्र मारा गया और राजेन्द्र-चोड चोल के सिंहासन पर बैठ गया. इसी समय से उसने अपना नाम कुलोत्तुंगचोड रक्खा. यह घटना श० सं० ११२७ ( वि० सं० ११२७=ई० सं० १०७० ) में हुई, तब से लगा कर उसने ४६ वर्ष ३३ अर्थात् श० सं० १०४१ ( वि० सं० ११७६ =

\* कलिंगतुपरणी में लिखा है, कि उस ( राजेन्द्रचोड ) की नानी उसको गोद लेना ( चोल का राज्य दिलाना ) चाहती थी ( कलिंगतुपरणी-इ० सं० जि० १-६, पृ० ३३२ ), परंतु उस कथन की पुष्टि चोल वालों के शिलालेखों से नहीं होती.

न गया बेंगीमहीराज्य चोडराज्याभिलाषिणा । गत्पितृव्ये पुरा न्यस्तं विजयादित्य भूभुजि ॥ ( मा० इ० इ० जि० १, पृ० ५५ ), एक ताम्रपत्र में 'चोडराज्याभिलाषिणा' के स्थान पर 'दिग्विजयैपिणा' लिखा है ( वराह बेंगी-महीराज्य गया दिग्विजयैपिणा । गत्पितृव्ये० ... पृ० इ० जि० ५, पृ० ७८ )

पिंडापुरम् से मिले हुए सोलंकी महलपदेव के लेख में उसका ५० वर्ष राज करना लिखा है ( तत्पुत्रो जयवान्पूर्वपुरुषो राजेन्द्रचोडस्थिरः श्रीपंच-व्रविष्टैः सहाभ्राविषयं पंचाशदब्दानपात् । पृ० इ० जि० ४, पृ० २३५ ), परंतु उस ( कुलोत्तुंगचोड ) के पौत्र के ताम्रपत्र में ४९ वर्ष ही लिखा है ( तत्पुत्रः श्रीकुलोत्तुंगचोडदेव एकोनपंचाशत्-इ० सं० जि० १४, पृ० ५६ ), इस बात पर हमें ४९ वर्ष ही ग्रहण किया है.

ई० स० १११६ तक \* राज्य किया.

आधिराजेन्द्र के मारे जाने पर वह ( कुलोत्तुंगचोड ) चोल के राज्यसिंहासन पर बैठा, जिसकी खबर पाते ही पश्चिमी सोलैंकी राजा विक्रमादित्य ( छठा ) उसपर चढ़ आया, परन्तु लड़ने भिड़ने बाद अंत में उसे लौटना ही पड़ा <sup>१</sup> और चोल देश का राज्य उसी ( कुलोत्तुंगचोड ) के ही अधिकार में रहा. इस प्रकार एक महान् राज्य उसके आधीन हुआ और चेंगी तथा उसके आधीन के इलाके चोलराज्य का उत्तरी विभाग गिने जाने लगे. उसने चोल की गद्दी पर बैठने के दिन से ही अपना राज्यवर्ष लिखना <sup>२</sup> प्रारंभ किया और चोलवालों के ही राज्यचिन्ह धारण किये. पूर्वी सोलैंकियों में उसके समान प्रतापी कोई दूसरा राजा नहीं हुआ.

उसने चोल देश का राज्य पाने के पहिले वयिरागरम्स्थान में शत्रुओं के हाथी छीने थे, और शक्रकोटम् ( शक्रकोट )

\* कुलोत्तुंगचोड ने अपने जीतेजी श० सं० १०४० ( वि० सं० ११७५=ई० स० १११८ ) के अषाढ़ महीने ( जून ) के आस पास अपने पुत्र विक्रमचोड को अपने राज्य पर अभिषिक्त कर दिया हो ऐसा पाया जाता है.

<sup>१</sup> कुलोत्तुंगचोड के समय के लेखों से पाया जाता है, कि 'उसने विक्रमादित्य को हराया, जिससे उसको पश्चिमी समुद्र में शरण लेना पड़ा'. विक्रमाङ्कदेवचरित में विक्रमादित्य का कुलोत्तुंगचोड ( राजिग ) से हारना नहीं लिखा, जिसका कारण यही अनुमान होता है, कि विल्लह कवि को अपने वाश्रयदाता के यश का ही उल्लेख करना, तथा हारने या लड़ाई में से भागने का विषय छुल्ल देना ही इष्ट होगा, जैसे कि बहुधा राजाश्रितकवि लोग किया करते हैं, परन्तु आधिराजेन्द्र के मारे जाने बाद चोल देश पर कुलोत्तुंगचोड का अधिकार होना और विक्रमादित्य का वहां से लौट जाना भी उसके हारने का ही सूचक है.

<sup>२</sup> उसके समय के कितनेक लेखों में राज्यवर्ष तथा शक्र संवत् दोनों दि-

की लड़ाई में धारा नगरी के राजा को परस्ता किया था\*। उस के पुत्र वीरचोड के ताम्रपत्र में लिखा है, कि उसने केरल, पाण्ड्य और कुंतल देश को विजय किया था †. कांजीवरम् से मिले हुए उसके राज्य के पांचवें वर्ष के लेख में ऐसा दर्ज है, कि उसने कुंतल के राजा ‡ को परास्त किया, चोलदेश का राज्य अपने आधीन किया और पाण्ड्य के राजा को मारा था +. उसके राज्य के ११ वें वर्ष के, तथा अन्य लेखों से यह भी पाया जाता है, कि उसने विक्रमादित्य × को हराया, जिससे उसको पश्चिमी समुद्र में शरण लेना पड़ा, गंगमंडल + तथा कौंकण को विजय किया § और कन्याकुमारी से लगाकर मलबार तक का प्रदेश अपने आधीन किया था' §.

कलिंगत्तुपरणी नामक तामिल भाषा के पुस्तक में उसने कलिंगदेश विजय किया, जिसका विस्तार से वर्णन है. उसका सा-

थे हैं ( जैसे कि श० सं० ९,६८ में राज्यवर्ष ७ वां, श० सं० १०३६ में ४५ वां आदि ) जिससे उक्त समय से ही उसका राज्यवर्ष लिखना स्थिर होता है.

\* सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १३४.

† उच्चचण्डतरप्रतापदहनमुष्टाखिलद्वेषिणा सर्वान् केरलपाण्ड्यकुंतलमुख-निर्जित्य देशान् क्रमात् । ( सा० इ० इ० जि० १, पृ० ५५ ).

‡ कुंतल का राजा=पश्चिमी सोलंकी राजा विक्रमादित्य ( छठा ).

+ सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १४२.

× विक्रमादित्य=पश्चिमी सोलंकी राजा विक्रमादित्य ( छठा ).

+ गंगमंडल = गंगवाडी ( माइसूर राज्य में ).

§ सा० इ० इ० जि० ३ पृ० ११९, १२६ ( नोट ६ ) और १७६; जि० २, पृ० ३६१ ( नोट ७ ).

§ सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १४७-१४८.

राश यह है, कि 'कलिंगदेश का राजा \* उसकी सेवा में हाजिर न हुआ और न उसने खिराज भेजा, जिसपर उस ( कुलोत्तुंग-चोड ) ने अपने पल्लववंशी सेनापति करुणाकर को, जो टोंडे का राजा था, सप्तकलिंग पर भेजा, जिसने वहाँ के राजा को विजय किया'. यह घटना उसके राज्य के २६ वें वर्ष अर्थात् शक सं० १०१७ ( वि० सं० ११५२ = ई० स० १०६१ ) के पूर्व किसी समय होनी चाहिये ( निश्चित समय ज्ञात नहीं हुआ ).

उसकी राजधानी गंगपुरी ( गांगकुंडपुर ) थी, जो उसके नाना राजेंद्रचोड ने बसाई थी. उसमें दूसरे दरजे का शहर कांची ( कांजीवरम् ) था, जहाँ पर भी वह रहा करता था. उस का विवाह अपने मामा सूर्यवंशी राजा राजेंद्रदेव की पुत्री मधुरांतकी से हुआ † जिसने ७ पुत्र ‡ हुए थे. उनमें से चोडगं-

\* उस समय कलिंग देश का राजा गङ्गावंशी अनन्तवर्मा ( चोडगङ्गदेव ) होना चाहिये.

† हस्तआजितशंखचक्रजलजं यं राजनारयणं लोकः स्तौति स सूर्यवंश-  
तिलकाद्रजेंद्र देवार्णवात् । संभूतामधुरांतकीति विदितानाम्नापरेण स्वयं लक्ष्मी-  
मुद्रहति स्म लोकगहितां देवीं चरित्रोन्नताम् ॥ गंगौघा इव निर्मलाः कृततमोध्वंसो  
दिनेशा इव क्षोणीध्राः इव भूभरश्रमसहा जातास्तयोस्मृन्वः । .... ( वीरचोड के  
दानपत्र से—सा० इ० इ० जि० १, पृ० ५५ ).

‡ कुलोत्तुंगचोड के पुत्र वीरचोड के ताम्रपत्र में मधुरांतकी राणी से ७ पुत्र होना लिखा है, परन्तु उसके दूसरे पुत्र चोडगङ्ग के ताम्रपत्र में ऐसा लिखा मिलता है, कि उस ( कुलोत्तुंगचोड ) के बहुतसी राणियाँ थीं, जिनसे कई पुत्र हुए थे ( तस्याभवन् ) पार्थिवपुंगवस्य देव्यशुभां नद्य इवाचुराशः ॥  
आत्मानुरूपैरथ तासु लब्धेर्देवीषु देवप्रतिमः कुमारैः । स नयमानो नरदेववन्द्यो  
नूनं हसत्येककुमारमीशम् ॥ पृ० इ० जि० ६, पृ० ३३९ )

ग, सुम्माडिचोड, वीरचोड और विक्रमचोड के नाम \* ताम्रपत्रादि से मालूम हुए हैं. मधुरान्तकी के अतिरिक्त दूसरी तीन राजाणियों के नाम दीनचिन्तामणि, त्यागवल्ली और एलिशेवरल भी मालूम हुए हैं.

उसके सोने के सिक्के मिले हैं, जो ऊपर वर्णन किये हुए राजराज के सिक्कों की शैली के हैं, परंतु उनके मध्य में वराह के स्थान पर व्याघ्र का चिन्ह है, और किनारे के पास बड़े बड़े अक्षरों में 'श्रीवेल्लनारायण' लेख + है. उसके समय के करीब ४० शिलालेख मिले हैं, जिनमें से सबसे पिछला उसके राज्य के ४६ वें वर्ष का है. उसने अपने जीतेजी अपने पुत्र वि-

\* विन्नकोटापेदन नामक कवि ने 'काव्यालंकारचूडामणि' नामक ताम्रिल भाषा का पुस्तक ई० स० की १४ वीं शताब्दी में रचा, जिसमें उसने कुलोत्तुंगचोड के पुत्र विमलाद्रित्य का नाम लिखा है. वह उस ( कुलोत्तुंगचोड ) के उन पुत्रों में से एक होना चाहिये, जिनके नाम मालूम नहीं हुए हैं. चिदंबर ( मद्रास इलाके में ) के नटराज नामक मंदिर में कुलोत्तुंगचोड के राज्यवर्ष ४४ वें का एक शिलालेख लगा हुआ है, जिसमें उस ( कुलोत्तुंगचोड ) की बहिन का नाम 'कुदवाई आलवार' मिलता है. उक्त लेख में यह भी लिखा है, कि 'एक पत्थर कांबोज देश के राजा ने राजेन्द्रचोड ( कुलोत्तुंगचोड ) के नजर किया था, जिसको उसने उक्त मंदिर के साम्हने के मंडप में लगवाया था ( ए० ई० जि० ५, पृ० १०५-६ ).

+ सा० ई० ई० जि० ३, पृ० १३१.

॥ चोल देश के सूर्यवंशी राजाओं का राज्यचिन्ह ( जो उनकी मुद्रा में मिलता है ) व्याघ्र था. कुलोत्तुंगचोड ने उक्त देश की गद्दी पर बैठने बाद अपने पूर्वजों ( सोलंकियों ) के राज्यचिन्ह वराह के स्थान पर व्याघ्र चिन्ह को ही अपना राज्यचिन्ह रक्खा था.

+ यह लेख प्राचीन कन्नड़ी लिपि में है ( ई० ई० जि० २५, पृ० ३२२ के पास की प्लेट, न० २६ और २७ ).

कामचोड को अपने राज्य पर अभिषिक्त कर दिया हो यह संभव है.

कुलोत्तुंगचोड वेंगी का राज्य पाने से थोड़े ही दिनों बाद अपने चचा विजयादित्य को वहां का शासनकर्त्ता नियत कर चोलदेश को चला गया और वहां का राज्य प्राप्त करने बाद वहीं रहा था. उसके समय में वेंगी देश के जो २ शासनकर्त्ता हुए उनका वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है.

|            |                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             |
|------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| विजयादित्य | विजयादित्य ने शक सं० ६८५ ( वि० सं० ११२० = ई० सं० १०६३ ) से श० सं० ६६६ ( वि० सं० ११३४ = ई० सं० १०७७ ) तक १५ वर्ष * के करीब उक्त देश का शासन किया. उसके समय में चोलदेश के राजा वीरराजेन्द्र ने वेंगी देश पर चढ़ाई की थी; और मणिमंगल के एक लेख में ऐसा लिखा है, कि 'उसने विजयादित्य को अपनी तरफ से वेंगी का शासनकर्त्ता नियत किया था' †. इससे अनुमान होता है, कि या तो विजयादित्य वेंगी का राज्य दबा बैठने की इच्छा से वीरराजेन्द्र से मिल गया हो, अथवा उक्त देश पर दूसरे वंशका अधिकार न हो इस विचार से उस ( वीरराजेन्द्र ) से मिलकर उसने उक्त देश को अपने ही अधिकार में रक्खा हो; परंतु यह निश्चित है, कि कुलोत्तुंगचोड चोलराज्य का मालिक हुआ उसके पीछे भी वह ( विजयादित्य ) अपने मरण पर्यन्त |
|------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|

\* स च पंचदशाब्दानि पंचाननपराक्रमाः । महीं रत्नगहीनाथो दिवं देवोपगो गतः ॥ ( सा० इ० इ० जि० १, पृ० ५५ ). वीरचोड के ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि वह श० सं० १००१ के भाद्रपद महीने में वेंगी का शासन कर्त्ता नियत हुआ था, जिसके पूर्व एक वर्ष उसके बड़े भाई मुग्गडिचोड ने, और उसके पूर्व १५ वर्ष तक विजयादित्य ने शासन किया था, अत एव विजयादित्य के शासन का प्रारम्भ श० सं० ( १००१-१६= ) ९८५ से होना निश्चित है.

† सा० इ० इ० जि० ३, पृ० ६५. वीरराजेन्द्र की चढ़ाई का कारण शायद कुलोत्तुंगचोड का चोल देश का राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न करना ही हो.

उक्त देशका शासक बना ही रहा, और उस (कुलोत्तुंगचोड) के पुत्रों के ताम्रपत्रों में उसकी प्रशंसा मिलती है, जिससे यही पाया जाता है, कि वह स्वामीभक्त रहा हो. गंगावंशी राजा 'अनंतवर्मचोडगंग' के श० सं० १०४० ( वि० सं० ११७५ = ई० स० १११८ ) के ताम्रपत्र में उसके पिता राजराज के वर्णन में यह लिखा है, कि 'जब विजयादित्य वृद्धावस्था के समय चोलरूप समुद्र में डूबने की दशा में वेंगीदेश को छोड़नेवाला था, उस समय राजराज ने उसकी सहायता कर उसका राज्य-सुख बना रक्खा था' \*. इसका हम यही आशय समझते हैं, कि वीरराजेन्द्र ने वेंगीदेश पर चढ़ाई की उस समय राजराज ने विजयादित्य की सहायता की हो, अथवा वीरराजेन्द्र को समझा कर उसीको वेंगी का शासक पीछा नियत करा दिया हो. श० सं० ६६६ ( वि० सं० ११३४ = ई० स० १०७७ ) में उसका देहान्त होने पर कुलोत्तुंगचोड ने अपने पुत्र मुम्मडिचोड को वेंगी का शासनकर्त्ता नियत किया †.

**मुम्मडिचोड** मुम्मडिचोड को राजराज ‡ भी कहते थे. उसको राज्य सुख की अपेक्षा अपने पिता की सेवा में रहना अधिक प्रिय होने से वह एक वर्ष के पीछे

\* इ० एं० जि० १८, पृ० १६९.

† मुम्मडिचोड कुमारमित्यवदत् ॥ वत्सं वेंगीमहीराज्यम्माया दिग्विजयै-  
षिणा । मत्पितृव्ये पुरा न्यस्तं विजयादित्यभूभुजि ॥ स च पंचदशैवाब्दान् पंचा-  
ननपराक्रमः । महीं रक्षन् गहीनाथो दिवं देवोपमो गतः ॥ इत्युक्त्वा तां धुरं दत्तां  
गुरुणा चक्रवर्तिना । असह्यताद्वियोगोपि विनयाद्वहति स्म सः ॥ ( चोडगंग के  
ताम्रपत्र से... ए० इ० जि० ६, पृ० ३३६.

‡ वीरचोड के दोनों ताम्रपत्रों में उसका नाम राजराज लिखा है, परन्तु चोडगंग के दानपत्र में मुम्मडिचोड मिलता है. राजराज खिताब सा है, अतएव उसका असली नाम मुम्मडिचोड ही होना चाहिये.

अपने पिता के पास चला आया \*, जिससे उसने अपने तीसरे पुत्र वीरचोड को वहाँ का शासक नियत किया, जिसने अपने माता पिता तथा दोनों बड़े भाइयों के समझाने बुझाने पर ही स्वदेश ( वेंगी ) जाना स्वी किया था †.

वीरचोड

श० सं० १००१ ( वि० सं० ११३६ = ई० स० १०७६ ) के भाद्रपद शु० १३ गुरुवार के दिन वह वेंगीराज्य पर अभिषिक्त हुआ ‡. उसके विरुद्ध 'महाराजाधिराज' 'राजपरमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'सर्वलोकाश्रय' मिलते हैं, और उसको विष्णुवर्द्धन भी कहते थे. उसने ५ वर्ष + के करीब वहाँ पर शासन किया. फिर उसको अपने पिता और भाइयों के समागम की इच्छा होने के कारण उसके पिता ने पीछा

\* श्रीपादसेवामुखतो गुरुणां न जातु राज्यं सुखमित्यवेक्ष्य । संरक्ष्य वेंगी-भुवमेकमब्दं भूयस्स पित्रोरगमत्समीपम् ॥ ( चोडगंग के ताम्रपत्र से... ए० ई० जि० ६, पृ० ३३६ ).

† तदनुजगथ धीरं वीरचोडं कुमारं गुणमिव तनुवत्तं विक्रमं चक्रवर्त्ती । उदयमिव रविस्त्वं प्राप्य वेंगीश्वरत्वं धितंनु शिरसि पादं भूभृतामित्यघोचत् ॥ इत्याशिषं समधिगम्य नृपादवन्ध्यां देव्यास्तथाप्यजनुपद्वितयात् क्रमेण । आनम्य तानवनतोवरजैः कुमारः सृष्टः स्वदेशगमनाय स तैः कथञ्चित् ॥ ( वीरचोड के ताम्रपत्र से... सा० ई० ई० जि० १, पृ० ५५ ).

‡ शाकाब्दे शशिखांबरेन्दुगणिते सिंहाधिरूढे रवौ चन्द्रे वृद्धिमति त्रयोदश-तिथौ वारे गुरोर्वृश्चिके । लग्नेथ श्रवणे समस्तजगतीराज्याभिषिक्तो मुदे लोकस्यो-द्वहति स्म पट्टमनघः श्रीवीरचोडो नृपः—( ए० ई० जि० ५, पृ० ७६ ).

+ चोडगंग के ताम्रपत्र में वीरचोड का वेंगी पर ६ वर्ष शासन करना लिखा है ( नीतास्तातनियोगलंघनभिया वरसेन पडवत्सराः—ए० ई० जि० ६, पृ. ३३९ ), परन्तु वीरचोड और चोडगंग के राज्याभिषेक का जो समय उनके ताम्रपत्रों में दिया है उसपर से उसका पौने पांच वर्ष शासन करना पाया जाता है, इसीसे हमने ५ वर्ष के करीब गाना है.

बुला लिया और अपने ज्येष्ठपुत्र चोडगंग को 'राजराज' का खिताब देकर बेंगी को भेज दिया \*.

**चोडगंग** उसके विरुद्ध 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'परमभट्टारक' और 'राजराज' मिलते हैं, और उसको विष्णुवर्द्धन भी कहते थे. श० सं० १००६ ( वि० सं० ११४१ = ई० स० १०८४ ) ज्येष्ठ शु० १५ गुरुवार के दिन उसका राज्याभिषेक † हुआ. उसके शासनसमय का एक ताम्रपत्र मिला है, जिसमें विजयराज्यसंवत्सर १७ वां लिखा है, जो उसके पिता का ही राज्यवर्ष है ‡, अर्थात् वह ताम्रपत्र श०

\* इत्थं गुरुभ्रातृसमागमैकमनोरथं तं तनयत्रयज्ञः । निजातिकं निज्जितभूमिपालस्समानयन्मानवदेवदेवः ॥ अथाग्रजं गुणोदग्रं शास्त्रज्ञं शस्त्रकोविदं । ॥ ॥ तुलयतं कलाभिज्ञं चोडगंगं प्रियात्मजं ॥ राजीवलोचनो राज्ञामयं राजा भवेदिति । राजराजाभिधानेन सार्थेनाहूय सादरम् ॥ ॥ विकगाक्रांतभूचक्रश्चक्रवर्तीदमनवीरः ॥ ॥ जन्मभूमिश्चलुक्यानां देशो बेंगीति विश्रुतः । ॥ सर्वामुर्व्विमित्तं रक्षितुं ते बेंगीदेशे सिंहपीठासनस्य । नानाभूमौलिरत्नालिचकैः पादाब्जश्रीर्भ्राजतां राजराज ॥ ( चोडगंग के ताम्रपत्र से....ए. इ. जि० ६, पृ० ३३६ ).

† शाकाब्दे रसखांबरेन्दुगणिते ज्येष्ठे मासे सिंहे पक्षे पूर्णतिथौ दिने सुरगुरोज्येष्ठां शशांके गते । सिंहे लग्नवरे समस्तजगतीराज्याभिषिक्तो मुदे लोकस्योद्वहति स्म पट्टमनघः श्री राजराजो विभुः । ( चोडगंग के ताम्रपत्र से... ए० इ० जि० ६, पृ० ३४१ ).

‡ चोडगंग का राज्याभिषेक श० सं० १००६ ( वि० सं० ११४१ ) में होना लिखा मिलता है और उसके ताम्रपत्र में विजयराज्यसंवत्सर १७ वां लिखा है ( श्रीविजयराज्यसंवत्सरे सप्तदशे दत्तस्यास्य शासनस्याशप्तिः कटकाधिपः— ए० इ० जि० ६, पृ० ३४४ ), परन्तु चोडगंग और वीरचोड के ताम्रपत्रों में दी हुई घटनाओं तथा उनके राज्याभिषेक के संवत्सों का विचार करने पर यही गानमा पड़ता है, कि उनके ताम्रपत्रों में दिये हुए राज्यसंवत्सर उनके नहीं किन्तु उनके पिता के ही राज्य वर्ष हैं, क्योंकि यदि उन्हींके राज्यवर्ष माने जायें, तो एक के शासन समय दूसरे का दान करना मानना पड़ता है, जो संभव नहीं.

सं० ( ६६२+१६ = ) १००८ ( वि० सं० ११४३ = ई० सं० १०८६ ) का है. पांचवें वर्ष वह अपने पिता के पास लौट आया, और वीरचोड़ पीछा वहाँ पर भेजा गया.

वीरचोड़ दूसरी बार

वीरचोड़ पांचवें वर्ष \* पीछा बेंगी का शासनकर्त्ता नियत हुआ. इस समय

उसने कितने वर्ष तक शासन किया इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु उसके समय के दो ताम्रपत्र † मिले हैं, जिनमें विजयराज्यसंवत्सर २१ वां और २३ वां लिखा है, जो उसके पिता के राज्य वर्ष ‡ हैं, अतएव वे ताम्रपत्र श० सं० ( ६६२ + २० = ) १०१२ और १०१४ ( वि० सं० ११४७ और ११४९ = ई० सं० १०६० और १०६२ ) के हैं, जिससे इतना तो निश्चित है, कि श० सं० १०१४ ( वि० सं० ११४९ = ई० सं० १०६२ ) तक तो वह वहाँ पर शासन कर ही रहा था, और उसके पीछे भी कुछ समय तक रहा हो यह संभव है. वह शिवका परम-भक्त था, और जनमाधनगरी ( राजमहेन्द्री ) में † रहता था. उसका सेनापति ब्राह्मण गुणरत्नभूषण था, जिसको मेडमार्य भी कहते थे और जो विष्णु का भक्त था.

\* वीरचोड़ के समय के पिछापूर से मिले हुए ताम्रपत्र से पाया जाता है, कि उसके पिताने मिलने की इच्छा से उसको अपने पास बुला लिया, परन्तु पांचवें वर्ष पीछा भेज दिया था ( अक्षतं यो महीं रक्षन्गुरुणा चक्रवर्तिना । आहूतो यौवनोद्दामदेहलक्ष्मीदिदृक्षया ॥ कांतिकवामनुदिनक्षयनाभिरामां पुष्पंतर्मिदुमिव ये तरुणं नृपेन्द्रः । पश्यन्नतृप्तनयनोप्यथ पंचमाब्दे प्रस्थापयत्पुनरुदीच्यजयाय सूनुम्.... ए० ई० जि० ५, पृ० ७९ ). उसके ताम्रपत्र की मुद्रा ( मुहर ) में 'श्रीत्रिभुवनांकुश' लेख है.

† ई० ई० जि० १६, पृ० ४२७-४३३; ए० ई० जि० ५, पृ० ७४-९४.

‡ देखो ऊपर चोड़गंग के ताम्रपत्र के समयसंबंधी नोट.

† ए० ई० जि० ५, पृ० ७८.

**विक्रमचोड** विक्रमचोड अपने पिता के राज्यसिंहासन पर बैठा जिसके पूर्व वह वेंगी का शासनकर्त्ता था \* और वहीं से जाकर चोलराज्य की गद्दी पर बैठा था, परन्तु उसने वेंगी का शासन करना किस वर्ष से प्रारम्भ किया इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता.

~~~~~ ❧ ~~~~~

विक्रमचोड.

विक्रमचोड (विक्रमचोल) कुलोत्तुंगचोड का ज्येष्ठपुत्र न होने पर भी उसका उत्तराधिकारी हुआ, जिसका कुछ भी कारण नहीं मिलता. शायद उसके बड़े भाइयों का देहान्त अपने पिता की विद्यमानता में हुआ हो और उसीसे वह राज्य पाया हो तो भी आश्चर्य नहीं. उसके समय के लेखों से निश्चय होता है, कि उसके राज्य का प्रारंभ श० सं० १०४० (वि० सं० ११७५ = ई० स० १११८) के आषाढ महीने (जून) के आस पास हुआ था †.

उसके विरुद्ध 'त्यागसमुद्र', 'त्यागवाराकर', 'अकलंक', 'त्रिभुवनचक्रवर्ती' और 'चक्रवर्ती' मिलते हैं. सोलंकी मल्लपदेव

* पिठापुरं से मिला हुआ सोलंकी मल्लपदेव का लेख (ए० इ० जि० ४, पृ० २३५).

† श० सं० १०४१ (वि० सं० ११७६ = ई० स० १११९) तक कुलोत्तुंगचोड का राज्य करना पाया जाता है, अतएव उसने अपने जीतेजी विक्रमचोड को अपने राज्यसिंहासन पर बिठला दिया हो और वह उसके पीछे भी जीवित रहा हो, अथवा श० सं० १०४० (वि० सं० ११७५ = ई० स० १११८) में वह (विक्रमचोड) वेंगीदेश का शासनकर्त्ता नियुक्त हुआ हो और उसी समय से उसने अपने राज्य का प्रारम्भ मान कर अपना राज्य वर्ष गिनना शुरू किया हो.

के लेख से पाया जाता है, कि वह पहिले बेंगीदेश का शासन करता था, जहांसे जाकर चोलदेश का राजा हुआ तब से बेंगी देश पर कोई राजा नहीं रहा * . उसके पिता ने कर्लिंग देश पर चढ़ाई की उस समय उस (विक्रमचोड) ने कूलम के तैलंगभीम को हराया था † . वह विद्वानों का आश्रयदाता था और 'विक्रिरम् शोलनुला' नामक तामिल काव्य का ‡ नायक वही है. उसकी दो राणियों के नाम 'सुक्कोविकलाङ्गिगल + और त्यागवल्ली मालूम हुए हैं. उसके समय के २० के करीब शिलालेख मिले हैं, जो उसके राज्य के १७ वें वर्ष तक के हैं, परन्तु उसके पुत्र कुलोत्तुंगचोड (दूसरे) के समय के ताम्रपत्र में उसका १५ वर्ष × ही राज्य करना लिखा है, जिसका आशय यही हो, कि उसके पिता के देहान्त के बाद १५ वर्ष (और अपने राज्याभिषेक से १७ वर्ष). उसका पुत्र कुलोत्तुंगचोड (दूसरा) उसका उत्तराधिकारी हुआ.

—:0:—

* इसका आशय यही होना चाहिये, कि उस समय से बेंगीदेश पर राजा के तौर अधिकार करने को कोई भेजा नहीं गया हो, किन्तु वहां पर भी अन्य जिलों की नाई साधारण हाकिम रहने लगे हों. उक्त देश में विक्रमचोड के समय के लेखों के होने से निश्चित है, कि वह देश उसीके अधिकार में था—(तस्याभवत्तृगभगरिथधुन्धुमाररामांवरीपचरितप्रतिमस्य पुत्रः । शक्रक्रमः प्रथितविक्रमचोडनागा चालुक्यवंशजलघेः परिपूर्णचंद्रः ॥ तस्मिंस्त्यागसमुद्रापरनामनि चोलमंडलं ग्रातुं । गतवति बेंगीभूमिर्नायकरहिता तदंतरे जाता ॥ (ए० इ० जि० ४, पृ० २३५).

† सा० इ० इ० जि० ३, पृ० १८०. तैलंगभीम ऐल्लोर के नायकों में से कोई होना चाहिये.

‡ यह काव्य विक्रमचोड के समय बना हो ऐसा पाया जाता है.

+ यह उसका लौकिक नाम होना चाहिये.

× तत्पुत्रो विक्रमचोडः पंचदश ... (इ० ऐ० जि० १४, पृ० ५६).

कुलोत्तुंगचोड * (दूसरा).

कुलोत्तुंगचोड (दूसरे) का ऐतिहासिक वृत्तान्त कुछ भी नहीं मिलता. उसके राज्य का प्रारंभ श० सं० १०५७ (वि० सं० ११६२ = ई० स० ११३५) के आसपास हुआ. उसके समय का एक ताम्रपत्र श० सं० १०६५ (वि० सं० ११०० = ई० स० १०४३) का भी मिला है, जिसमें उसके सेनापति का नाम काट मिलता है, जिसको कोलनि काटमनायक (कोलनी का नायक काटम) भी कहते थे. उस (कुलोत्तुंगचोड) का उत्तराधिकारी उसका पुत्र धृ३ राजराज (दूसरा) हुआ.

—*—

* कुलोत्तुंगचोड के स्थान पर कुलोत्तुंगचोल भी लिखा मिलता है.

ग० उक्त ताम्रपत्र में श० सं० १०५६ आर्द्रा नक्षत्र, शुक्लपक्ष (अमान्त) और विषुवसंक्रमण का दिन लिखा है (शाकाब्दानां प्रमाणे रसविशिखवियच्चंद्रसंख्यां प्रयाते देशे सावत्तिलीति क्षितितलविदिते पौदुवग्रामयुक्तं । सार्द्धे पूर्वपक्षे विषुवति सुतिथौ... ई० सं० जि० १४, पृ० ५८), परन्तु उक्त संवत् में आर्द्रा नक्षत्र के दिन शुक्लपक्ष में विषुवसंक्रमण नहीं हुआ. प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डाक्टर की-रुहौर्न साहिब ने गणित कर देखा तो श० सं० १०४७ और १०६६ के बीच के २० बरसों में केवल श० सं० १०६५ में ही आर्द्रा नक्षत्र के दिन (चैत्र शु० ७) विषुवसंक्रमण होना पाया जाता है, अतएव उक्त ताम्रपत्र का शुद्ध संवत् शक सं० १०६५ ही होना चाहिये. आश्चर्य नहीं, कि उसकी रचना के समय ' विशिखरसवियच्चंद्र ' के स्थान पर ' रसविशिखवियच्चंद्र... ' भूल से लिखा गया हो.

धृ३ राजराज (दूसरा) कुलोत्तुंगचोड (दूसरे) का पुत्र था ऐसा ' राज-राजनुला ' नामक तामिल भाषा के पुस्तक से पाया जाता है (सा० ई० ई० जि० ३, पृ० १६६, नोट २). वह पुस्तक शायद राजराज (दूसरे) के समय में बना हो.

राजराज (दूसरा).

राजराज (दूसरे) के राज्य का प्रारंभ श० सं० १०६८ (वि० सं० १२०३ = ई० स० ११४६) में हुआ. उसके विरुद्ध 'परकेसरीवर्मा' और 'त्रिभुवनचक्रवर्ती' मिलते हैं. उसके समय के ६ शिलालेख मिले हैं, जिनमें से सब से पिछला उसके राज्य के १५ वें * वर्ष का है.



* काजीवरम् के एफाम्रनाथ नामक मंदिर के लेख में उसके १६ वें वर्ष का उल्लेख है, (सा० ई० ई० जि० ३, पृ० २०७) अतएव उसका १६ वर्ष से अधिक समय राज्य करना अनुमान किया जा सकता है.

प्रकरण १२ वा.

कुलोत्तुंगचोड (दूसरे) तक पूर्वी सोलंकियों की शृंखला-बद्ध वंशावली उनके ताम्रपत्रों से मिलती है. उसके पीछे के किसी राजा का अबतक कोई ताम्रपत्र नहीं मिला. उनके राजत्व-काल के शिलालेख ही मिले हैं, जिनमें राजा का नाममात्र * मिलता है वंशपरंपरा नहीं, जिससे उनका परस्पर क्या संबंध था इस विषय का ठीक ठीक निर्णय नहीं हो सकता. राजराज (दूसरे) के लिये भी यही बाधा उपस्थित थी, परंतु 'राजराजनुता' नामक ताम्रिल भाषा के पुस्तक के मिल जाने से पाया गया, कि वह कुलोत्तुंगचोड (दूसरे) का पुत्र था. उसके पिछले चार राजाओं का परस्पर का संबंध जतलाने के लिये अबतक कोई वैसा माधन उपलब्ध नहीं हुआ, जिससे यह भी शंका हो सकती है, कि वे राजराज (दूसरे) के वंशज (सोलंकी) थे वा किसी अन्यवंश के; परन्तु राजराज (दूसरे) के पीछे चोलदेश पर किसी अन्य वंश का अधिकार होना पाया नहीं जाता. यदि वे किसी अन्यवंश के होने, तो उनके लेखों में अपने वंश का उल्लेख होने के अतिरिक्त उक्त देश को अपने आधीन करने का वृत्तान्त तो अवश्य होता, परन्तु वैसा कुछ भी नहीं मिलता, अतएव वे राजराज (दूसरे) के वंशज होने चाहियें ऐसा अनुमान कर हम उनका वृत्तान्त लिखते हैं.

* उन लेखों में न तो वंश का नाम मिलता है और न राजा के पिता आदि के नाम, उनमें राजा का नाम, उसके खिताब और कुछ कुछ ऐतिहासिक वृत्तान्त है.

राजाधिराज.

राजाधिराज के थोड़े से लेख [†] मिले हैं, जिनमें उसके पि-
रुद 'भिभुवनचक्रवर्ती' और 'राजकेसरीवर्मा' मिलते हैं. वह
राजराज (दूसरे) का उत्तराधिकारी [‡] होना चाहिये. उसके
राज्य का प्रारंभ [§] कब हुआ उसका संतोषदायक निर्णय कर-
ने के लिये अबतक योग्य साधन उपलब्ध नहीं हुए. उसका उ-
त्तराधिकारी कुलोत्तुंगचोड (तीसरा) हुआ.

कुलोत्तुंगचोड (तीसरा).

कुलोत्तुंगचोड (तीसरे) का राजाधिराज के साथ क्या

[†] सा० ई० ई० जि० ३, पृ० २०७.

[‡] राजराज (दूसरे) के राज्य का प्रारंभ श० सं० १०६८ (वि० सं०
१२०३=ई० स० ११४६) में हुआ और उसके राज्यवर्ष १९ वें अर्थात्
श० सं० १०८६ (वि० सं० १२११=ई० स० ११६४) तक उसके विष-
यमान होने का उल्लेख मिलता है, जिसके पीछे भी वह जीवित रहा हो, और
श० सं० ११०० (वि० सं० १२३५=ई० स० ११७८) में कुलोत्तुंगचोड
(तीसरे) के राज्य का प्रारंभ होना निश्चित है, इसलिये राजराज (दूसरे)
और कुलोत्तुंगचोड (तीसरे) के बीच उसने कुछ समय तक राज्य किया हो.

[§] उसके समय के एक शिलालेख (कांजीवरम् के एकाग्रनाथ के मंदिर
में) के आधार पर प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉक्टर हुल्ल साहिब लिखते हैं, कि
'उसका राज्यवर्ष आठवां राजराज (दूसरे) के राज्यवर्ष के दूरे से करीब १५
वर्ष पीछे था' (सा० ई० ई० जि० ३, पृ० २०७), इसलिये उसके राज्य
का प्रारंभ श० सं० (१०६८+१८+१५-७=) १०८४ (वि० सं०
१२२९=ई० स० ११७२) के आस पास होना अनुमान किया जा सकता है.
इसी आधार पर हमने उसको राजराज (दूसरे) और कुलोत्तुंगचोड (तीसरे)
के बीच स्थान दिया है.

संबंध था इसका कुछ भी उल्लेख नहीं मिलता, परंतु वह उसका वसराधिकारी होना चाहिये उसके लेखों में दिये हुए राज्यवर्ष आदि से उसका श० सं० ११०० (वि० सं० १२३५ = ई० स० ११७८) में * राजपाना स्थिर होता है. उसके विरुद्ध 'परकेसरीवर्मा', 'त्रिभुवन-चक्रवर्ती', 'वीरराजेंद्र', 'वीरराजेंद्र चोलदेव' और 'त्रिभुवनवीर-देव' मिलते हैं. उसके राज्य के ३७ वें वर्ष तक के अनेक शिलालेख मिले हैं, जिनमें से ६ वें वर्ष के शिलालेख से पाया जाता है, कि 'उसने वीरपांड्य * के पुत्र के प्रतिपत्नी विक्रमपांड्य की सहायता की, मारों † के सैन्य को हराया, सिंहल के सैन्य को + समुद्र में

* नेल्लोर से मिले हुए शिलालेख में श० सं० १११६ (वि० सं० १२५४ = ई० स० ११६७) में उसके राज्य का १६ वां वर्ष (२० वां चाहिये) लिखा है, जिससे श० सं० (१११६-१९ =) ११०० में उसके राज्य का प्रारम्भ होना निश्चय होता है. प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डाक्टर फीलहौर्न साहब ने उसके अनेक लेखों में दिये हुए तिथि वार आदि को जांच कर ई० स० ११७८ तारीख = जून और = जुलाई के बीच (श० सं० ११०० = वि० सं० १२३५ के आषाढ़ और श्रावण के बीच) उसका राज्य पाना स्थिर किया है.

* वीरपांड्य = पांड्य देश के राजा पराक्रमपांड्य का पुत्र (महावंश का अंग्रेजी अनुवाद, अध्याय ७६, पृ० २४०).

† मार = मारव, मदुरा और तिरुनेवेलि में रहनेवाली एक जाति.

+ सीलोन. (सिंहलद्वीप) के इतिहास महावंश में लिखा है, कि 'पांड्य के राजा पराक्रम (पराक्रमपांड्य) ने कुलशेखर से घिर जाने पर लंका के राजा पराक्रमबाहु (प्रथम) से मदद चाही, तो उसने अपने सेनापति लंकापुर को बड़े सैन्य सहित उसकी सहायता के लिये भेजा इतने में कुलशेखर ने पराक्रमपांड्य को मारकर मदुरा छीन लिया. लंकापुर ने पांड्यदेश के तट पर अपने सैन्य को उतारा और कई लड़ाइयों में विजय पाया. फिर लंका से जगद्विजय नायक की मातहत में नई सेना आई, जिसके पीछे लंकापुर तथा जगद्विजय दोनों ने मिलकर पराक्रमपांड्य के पुत्र वीरपांड्य को मदुरा की गद्दी पर बिठलाया.

भगाया और वीरपाण्ड्य से मदुरा नगर छीनकर विक्रमपाण्ड्य को दिया'. उसके अन्य लेखों में यह लिखा है, कि 'उसने अपने हस्तिसेन्य के साथ उत्तर में चढ़ाई की और वहाँ के राजाओं को आधीन करने के पश्चात् कांची (कांजीवरम्) में प्रवेश किया, पाण्ड्यराजा * के पुत्र को हराकर तामिल देश का मदुरा नगर लिया और उसे विक्रमपाण्ड्य का दे दिया. उसके लौटने बाद वीरपाण्ड्य ने नेदूर के पास फिर सामना किया, जिसमें कुलोत्तुंगचोड ने उसको अपने पैरों में गिराकर उस लड़ाई की समाप्ति की, तथा उस पाण्ड्यराजा की युवा स्त्री को अपने अंतःपुर में दाखिल की. जब पाण्ड्य तथा चेर के राजा आकर उसके चरणों में गिरे, तो उसने उनका अपराध क्षमा किया, परन्तु सिंहल के राजा के मुकुट पर अपना पैर रखवा' †. उसकी राणी का नाम भुव-नेश्वरी मिलता है. उसने ३८ वर्ष के क्लीब अर्थात् श० सं० ११३८ (वि० सं० १२७३ = ई० स० १२१६) तक राज्य किया.

फिर कुलशेखर चोल के राजा की मदद पाकर मदुरा तक चला आया, लेकिन उसको हारकर चोल देश में शरण लेना पड़ा. लंकापुर ने चोल पर चढ़ाई की तथा कई जगह विजय पाने बाद वह पीछा लौटा, और वीरपाण्ड्य को राज्य देकर लंका को चला गया' (महावंश, अध्याय ७६-७७). कुलोत्तुंगचोड (तीसरे) के उपर्युक्त ६ वें वर्ष के लेख में सिंहल के सैन्य को समुद्र में भगाना लिखा है, जिससे अनुमान होता है, कि या तो लंकापुर को हार कर लौटना पड़ा हो, अथवा वह कुछ सैन्य वीरपाण्ड्य के सहायतार्थ मदुरा में छोड़ गया हो और उसके चले जाने बाद कुलोत्तुंगचोड (तीसरे) ने वीरपाण्ड्य से मदुरा छीनकर विक्रमपाण्ड्य को वहाँ का राजा बनाया हो, जिससे सिंहलवालों को समुद्रमार्ग भागना पड़ा हो. विक्रमपाण्ड्य या तो कुलशेखर का ही दूसरा नाम हो अथवा उसका पुत्र हो.

* पाण्ड्यराजा=वीरपाण्ड्य.

† कृ. सा० ई० ई० जि० ३, पृ० २०५-२०६.

राजराज (तीसरा)

राजराज (तीसरे) का कुलोत्तुंगचोड (तीसरे) के साथ क्या संबंध था इस विषय में कुछ भी लिखा नहीं मिलता, परंतु वह (राजराज) उसका उत्तराधिकारी हुआ यह निश्चित है. उसके राज्य का प्रारंभ श० सं० ११३८ (वि० सं० १२७३=ई० सं० १२१६) में * हुआ. उसके विरुद्ध ' त्रिभुवन-चक्रवर्ती ' और ' राजकेसरीवर्मा ' मिलते हैं. उसके पल्लव-वंशी सामंत कोप्पेरुजिंग ने † प्रबल होकर उस (राजराज) को कैद कर लिया, परंतु द्वारसमुद्र के होयशल (यादव) वंशी राजा वीरनरसिंहने उसकी सहायता की और कैद से छुड़ा कर उसको पीछा चोल की गद्दी पर बिठलाया, जिसका वृत्तान्त उक्त राजा (वीरनरसिंह) के सेनापति अप्पण और गोप्पय के खुदवाये हुए तिरुवेदिपुरं ‡ के मंदिर के लेख × में इस प्रकार मिलता है, कि 'जब प्रतापचक्रवर्ती होयशल राजा वीरनर-

* ए० इ० जि० ७, पृ० १.

† कोप्पेरुजिंग वहां का लौकिक नाम है, जिसका अर्थ 'महाराजसिंह' (बड़े राजाओं में अथवा महाराजाओं में सिंहसदृश) है. वह पल्लव (काडव) वंशी और राजराज (तीसरे) का सामंत था. परन्तु श० सं० ११६५ (वि० सं० १३००=ई० सं० १२४३) से स्वतंत्र होकर उसने 'सकलभुवन-चक्रवर्ती' आदि विरुद्ध धारण किये थे, और श० सं० १२०० (वि० सं० १३३५=ई० सं० १२७८) तक उसके विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं. (ए० इ० जि० ७, पृ० १६३-१६७).

‡ तिरुवेदिपुरं=मद्रास इलाके के दक्षिणी आर्कट जिले में.

× यह लेख राजराज के राज्य के १६ वें वर्ष का अर्थात् श० सं० ११५३ (वि० सं० १२८८=ई० सं० १२३१ का) है, अतएव उक्त समय वह कैद से छूट गया होगा—(ए० इ० जि० ७ पृ० १६८).

सिंह + ने यह सुना, कि कोप्पेरुंजिंग ने राजराज (तीसरे) को कैद कर लिया है, तब वह द्वारसमुद्र से चला और महर* राज्य को विजय कर वहाँ के राजा को पकड़ लिया, तथा उसकी स्त्रियाँ और खजाना छीनने बाद पाच्चुर† में आ ठहरा. फिर उसने अपने सेनापति अण्ण और गोप्पय को कोप्पेरुंजिंग के राज्य को नष्ट करने तथा चोल के राजा को छुड़ाने के लिये भेजा. वे जब ६ अक्तूबरों तथा सिंहल के राजा पराक्रमबाहु‡ को मार कर कई गाँव आदि को नष्ट करते हुए सेंदमंगल में पहुँचे, तो कोप्पेरुंजिंग ने उस (राजराज) को छोड़ दिया, जिसको वे उसके राज्य में पहुँचा आये. इस प्रकार वीरनरसिंह

+ वीरनरसिंह (नरसिंह दूसरा)=होयशल (यादव) वंश के राजा नरसिंह (प्रथम) का पौत्र और वीरबल्लाल (दूसरे) का पुत्र था. उसके लेखों में भी उसको मकर या मगर (महर) राज्य का नष्ट करनेवाला तथा चोल-राज्य को कायम रखनेवाला लिखा है. वीरनरसिंह ने राजराज (तीसरे) की सहायता की, जिसका कारण उनका परस्पर का संबन्ध होना चाहिये. राजराज (तीसरे) के उत्तराधिकारी राजेन्द्र चोल (दूसरे) के एक लेख में वीरनरसिंह के पुत्र वीरसोमेश्वर को उस (राजेन्द्रचोल) का मामा लिखा है, जिससे पाया जाता है, कि राजराज वीर नरसिंह का जमाई हो.

* महर (मकर या मगर) राज्य=मद्रास इलाके के कोडुवाटूर व सेलम जिलों का नाम हो.

† पाच्चुर=शायद त्रिचिनोपोली ताल्लुके का पाच्चुर गाँव हो.

‡ वीरनरसिंह ई० स० १२११ (वि० सं० १२६८) के पीछे राज्य पाया तथा ई० स० १२३६ (वि० सं० १२९६) के पूर्व मर चुका था, और सिंहल के राजा पराक्रमबाहु प्रथम का देहान्त ई० स० ११६४ (वि० सं० १२५१) में तथा दूसरे का ई० स० १२७५ (वि० सं० १३३२) में होना लिखा मिलता है, और उनमें से एक भी लड़ाई में नहीं मरा था, अतएव उक्त लेख में लिखा हुआ पराक्रमबाहु सिंहलद्वीप का शायद कोई राजकुमार हो.

ने उसको कैद से छुड़ाया, परंतु उसने चोलदेश का कितना हिस्सा अपने अधीन कर लिया था, ऐसा उसके लेखों से पाया जाता है. उस (राजराज) के राज्यसमय के बहुत से लेख मिले हैं, जिनमें सब से पिछला उसके राज्य के २८ वें वर्ष का श० सं० ११६५ (वि० सं० १३०० = ई० स० १२४३) कर्कट (श्रावण) मास का है *, और उसके पीछे राजेन्द्रचोल (दूसरे) के लेख मिलते हैं, जिसकी गद्दी नशीनी श० सं० ११६८ (वि० सं० १३०३ = ई० स० १२४६) में हुई थी, अतएव राजराज ने उस समय तक अर्थात् ३० वर्ष के करीब राज्य किया होगा.

राजेन्द्रचोल (दूसरा).

राजेन्द्रचोल (दूसरा) श० सं० ११६८ (वि० सं० १३०३ = ई० स० १२४६) में † राज्य पाया. राजराज (तीसरे) के साथ उसका क्या संबंध था इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता. उसने 'त्रिभुवनचक्रवर्ती' विरुद्ध धारण किया था. रंगनाथ के मंदिर में + लगे हुए उसके राज्य के ७ वें वर्ष के लेख में x उस का कर्णाटक के राजा वीरसोमेश्वर के लिये, तथा उसी मंदिर में लगे हुए उसके राज्य के ८ वें वर्ष के लेख में ‡ अपने मामा सोमेश्वर (वीरसोमेश्वर) के लिये यमदंडरूप होना लिखा है. इन दोनों लेखों से अनुमान होता है, कि वह अपने मामा वीरसोमेश्वर से चोलदेश का वह हिस्सा, जो उसके पिता वीरनरसिंह ने ले लिया था, छुड़ाने के लिये लड़ा होगा. वीरसो-

* सा० इ० इ० जि० १, पृ० ९१.

† ए० इ० जि० ७, पृ० १६८.

+ यह मंदिर श्रीरंग नगर में है.

x ए० इ० जि० ७, पृ० १७६.

‡ ए० इ० जि० ७, पृ० १७७.

मेश्वर के लेखादि से पाया जाता है, कि उसने चोलमंडल को विजय किया तथा वहाँ पर विक्रमपुर नामक शहर बसा कर उसको अपनी राजधानी बनाया था, और वह कभी विक्रमपुर में तथा कभी द्वारसमुद्र में रहता था, अतएव संभव है, कि अंत में वीरसोमेश्वर ही विजयी हुआ हो और चोलदेश का कितनाक हिस्सा उसने अपने राज्य में मिला लिया हो. उधर दक्षिण की तरफ से पांड्यदेशवाले भी चोल राज्य को दबाने लगे थे. उस (राजेन्द्रचोल) के राज्य के २२ वें वर्ष अर्थात् श० सं० ११८६ (वि० सं० १३२४ = ई० स० १२६७) तक के लेख* मिलते हैं, जिसके पीछे का कुछ भी पता नहीं चलता. जटावर्म सुन्दरपांड्य (प्रथम) के ६ वें वर्ष अर्थात् श० सं० ११८१ (वि० सं० १३१६ = ई० स० १२५६) के लेख में ऐसा लिखा है, कि 'वह चोलवंशरूप पर्यंत के लिये वज्र समान था. और उसने कर्णाटक के राजा को परास्त किया था' +. उसी राजा (सुन्दरपांड्य) के रंगनाथ के मंदिर के लेख से पाया जाता है, कि उसने कर्णाटक के सोम (वीरसोमेश्वर) से श्रीरंग छीन लिया था x. इससे अनुमान होता है कि होयशल राजा वीरसोमेश्वर अधिक समय तक चोलदेश के छीने हुए प्रदेश को अपने आधीन रखने न पाया हो, और चोलदेश पर क्रमशः पांड्यवालों का ही अधिकार बढ़ता गया हो.

श० सं० ११८६ (वि० सं० १३२४ = ई० स० १२६७) के पीछे राजेन्द्रचोल दूसरे का पता नहीं चलता. आश्चर्य नहीं, कि उस (राजेन्द्रचोल दूसरे) के साथ पूर्वी सोलंकी राज्य की समाप्ति हुई हो.

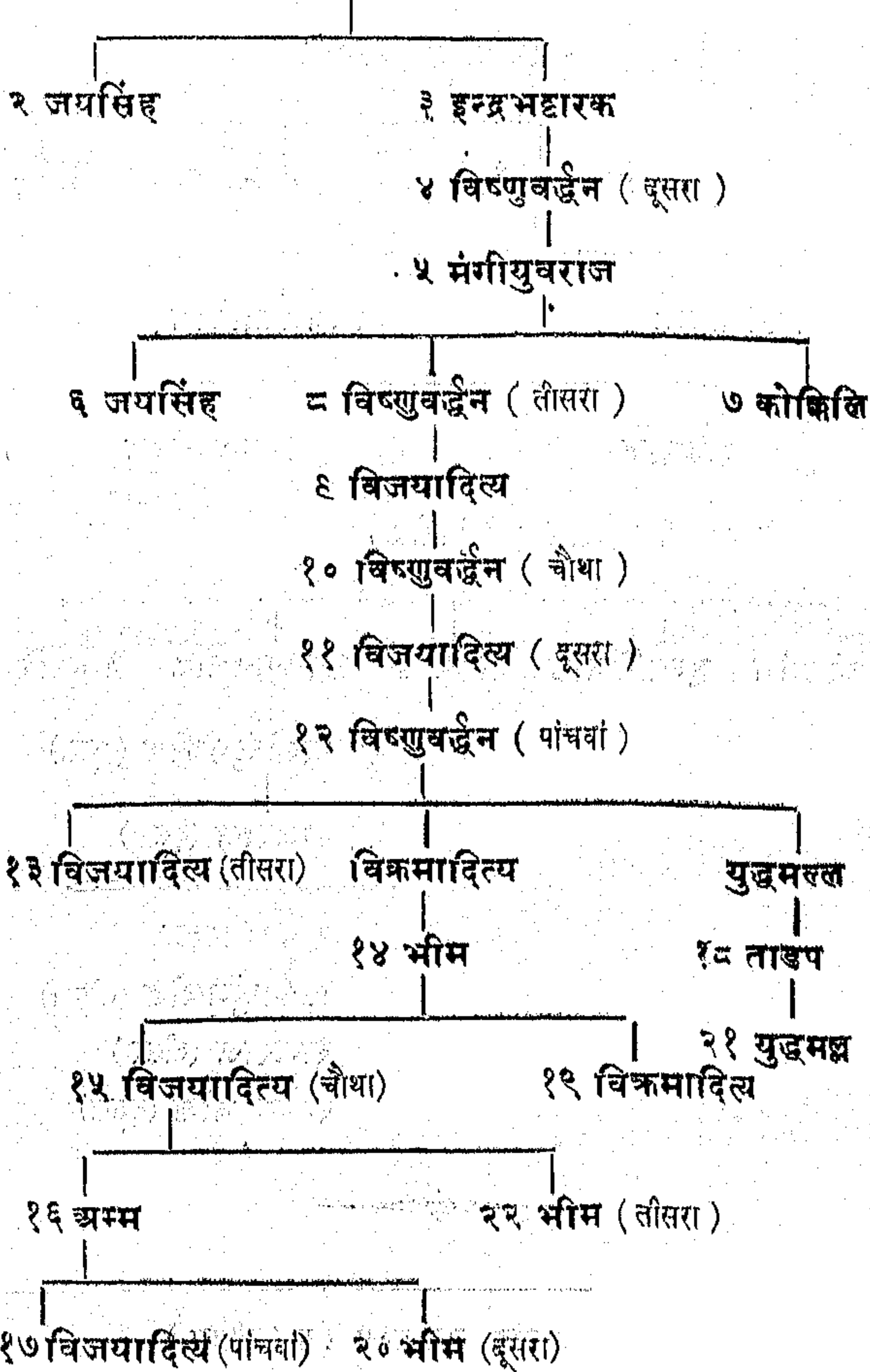
* ए० ई० जि० ७, पृ० १७७.

+ ए० ई० जि० २१, पृ० १४३.

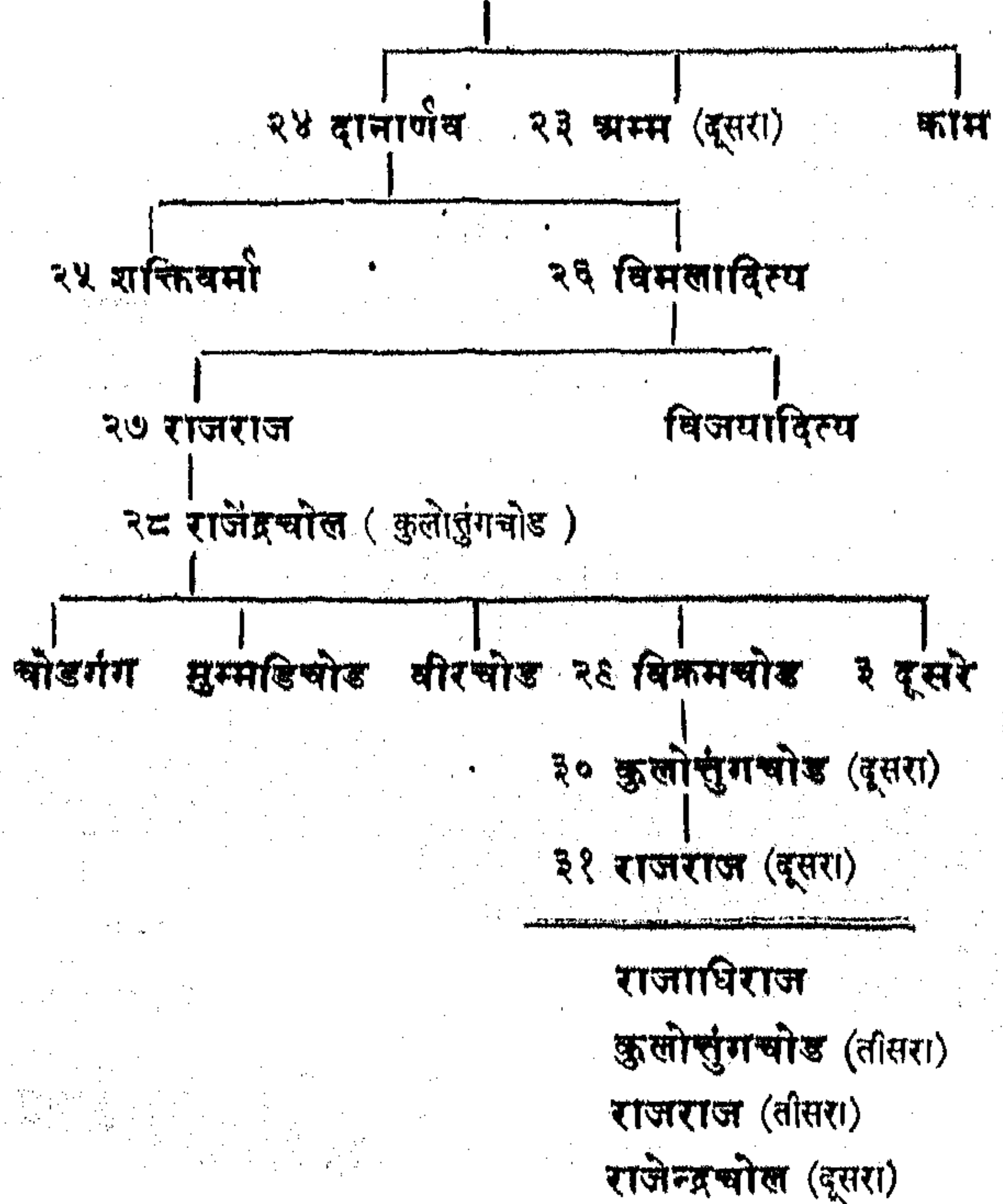
x ए० ई० जि० ३, पृ० ११.

पूर्वी सोलंकियों का वंशवृक्षः
१ विष्णुवर्द्धन (कुब्जविष्णुवर्द्धन)

१६३



* २२ भीम (तीसरा)



पूर्वी सोलंकी राजाओं के राजत्वकाल का नक्शा.

| क्र.सं. | नाम | राज्य समय | | |
|---------|-------------------------|------------|----------|---------|
| | | वर्ष-मा-दि | वि० सं० | ई० सं० |
| १ | विष्णुवर्द्धन | १८-०-० | ६७२-६८० | ६१५-६३३ |
| २ | जयसिंह | ३०-०-० | ६८०-७१६ | ६३३-६६३ |
| ३ | इंद्रभट्टारक | ०-०-७ | ७१६-७१६ | ६६३-६६३ |
| ४ | विष्णुवर्द्धन (दूसरा) | ६-०-० | ७१६-७२६ | ६६३-६७२ |
| ५ | मंगीयुवराज | २५-०-० | ७२६-७५४ | ६७२-६८७ |
| ६ | जयसिंह (दूसरा) | १३-०-० | ७५४-७६७ | ६८७-७१० |
| ७ | कोकिलि | ०-६-० | ७६७-७६७ | ७१०-७१० |
| ८ | विष्णुवर्द्धन (तीसरा) | ३७-०-० | ७६७-८०४ | ७१०-७४७ |
| ९ | विजयादित्य | १८-०-० | ८०४-८२२ | ७४७-७६५ |
| १० | विष्णुवर्द्धन (चौथा) | ३६-०-० | ८२२-८५८ | ७६५-८०१ |
| ११ | विजयादित्य (दूसरा) | ४०-०-० | ८५८-८६८ | ८०१-८४१ |
| १२ | विष्णुवर्द्धन (पांचवां) | १-६-० | ८६८-९०० | ८४१-८४३ |
| १३ | विजयादित्य (तीसरा) | ४४-०-० | ९००-९४४ | ८४३-८८७ |
| १४ | भीम | ३०-०-० | ९४४-९७४ | ८८७-९१७ |
| १५ | विजयादित्य (चौथा) | ०-६-० | ९७४-९७५ | ९१७-९१८ |
| १६ | अम्म | ७-०-० | ९७५-९८२ | ९१८-९२५ |
| १७ | विजयादित्य (पांचवां) | ०-०-१५ | ९८२-९८२ | ९२५-९२५ |
| १८ | ताडप | ०-१-० | ९८२-९८२ | ९२५-९२५ |
| १९ | विक्रमादित्य | ०-११-० | ९८२-९८३ | ९२५-९२६ |
| २० | भीम (दूसरा) | ०-८-० | ९८३-९८३ | ९२६-९२६ |
| २१ | युद्धमल्ल | ७-०-० | ९८३-९९० | ९२६-९३३ |
| २२ | भीम (तीसरा) | १२-०-० | ९९०-१००२ | ९३३-९४५ |

पूर्वी सोलंकी राजाओं के राजत्वकाल का नक्शा.

| क्र.सं. | नाम | राज्यसमय | | |
|---------|-----------------|------------|--------------|--------------|
| | | वर्ष-मा-दि | वि० सं० | ई० सं० |
| २३ | अम्म (दूसरा) | २५-०-० | १००२-१०२७ | ६४५-६७० |
| २४ | दानार्णव | ३-०-० | १०२७-१०३० | ६७०-६७३ |
| | अस्वामिक अवस्था | २७-०-० | १०३०-१०५६ | ६७३-६९९ |
| २५ | शक्तिवर्मा | १२-०-० | १०५६-१०६८ | ६९९-१०११ |
| २६ | विमलादित्य | ११-३-० | १०६८-१०७६ | १०११-१०२२ |
| २७ | राजराज | ४१-०-० | १०७६-११२० | १०२२-१०६३ |
| २८ | राजेन्द्रचोड * | | | |
| | (कुलोत्तुंगचोड) | ४६-०-० | ११२७-११७६ | १०७०-१११९ |
| २९ | विक्रमचोड | १७-०-० | ११७५-११९२ | १११८-११३५ |
| ३० | कुलोत्तुंगचोड | | | |
| | (दूसरा) | ११-०-०(?) | ११९२-१२०३(?) | ११३५-११४६(?) |
| ३१ | राजराज (दूसरा) | | १२०३ | ११४६ |

राजाधिराज-राज्य का प्रारंभ वि० सं० ११२६ (ई० सं० ११७२) से (?),
 कुलोत्तुंगचोड (तीसरा) ,, वि० सं० १२३५ (ई० सं० ११७८) से.
 राजराज (तीसरा) ,, वि० सं० १२७३ (ई० सं० १२१६) से.
 राजेन्द्रचोड (दूसरा) ,, वि० सं० १३०३ (ई० सं० १२४६) से.

* राजेन्द्रचोड, जिसने पीछे से कुलोत्तुंगचोड नाम धारण किया था, वि० सं० ११२० (ई० सं० १०६३) में अपने पिता के पीछे बेंगी देश का राज्य पाया, परन्तु वह तुरंत ही उसे अपने चचा विजयादित्य को सौंप कर चोलदेश में चला गया और वि० सं० ११२७ (ई० सं० १०७०) में वहां का राज्य लिया तभी से उसने अपना राज्यकाल लिखना प्रारंभ किया था.

पिट्टापुरं के पूर्वी सोलंकी.

विजयादित्य (पांचवें) ने, जिसको बेल भी कहते थे, वि० सं० ६८२ (ई० स० ६२५) में राज्य पाया, परंतु १५ दिन के बाद गुणगविजयादित्य के छोटे भाई युद्धमल्ल के पुत्र ताडप ने उससे वेंगी का राज्य छीन लिया, जिसका वृत्तान्त प्रकरण १० वें में लिखा गया है. उक्त विजयादित्य के वंशज श० सं० ११२४ (वि० सं० १२५६ = ई० स० १३०२) के पीछे तक पिट्टापुरं के आसपास के प्रदेश पर राज्य करते रहे थे, जिनका वृत्तान्त उनके समय के ताम्रपत्रादि से नीचे लिखे अनुसार मिलता है:—

विजयादित्य (पांचवें) का पुत्र सत्याश्रय हुआ, जिसको 'उत्तम चालुक्य' भी कहते थे. उसकी अग्रमहिषी (मुख्यराणी) गौरी गंगावंश * की थी, जिससे ७ पुत्र विजयादित्य, विमलादित्य, विक्रमादित्य, विष्णुवर्द्धन, मल्लप, कामराज और राजमार्तंड हुए, जिनमें से विजयादित्य का विवाह सूर्यवंश की † विजया (विजयमहादेवी) से हुआ था, जिससे विष्णुवर्द्धन, मल्लपदेव और सामिदेव उत्पन्न हुए. उनमें से मल्लपदेव ‡

* गौरी कलिंग के किसी गंगावंशी राजा की पुत्री होनी चाहिये.

† सूर्यवंश से अभिप्राय चोल के किसी सूर्यवंशी राजा से हो तो आश्चर्य नहीं,

‡ गोदावरी जिले से मिले हुए एक ताम्रपत्र में (ई० एं० जि० २०, पृ० २६८) मल्लपदेव को विष्णुवर्द्धन का पुत्र लिखा है, जिससे अनुमान होता है, कि वह अपने बड़े भाई विष्णुवर्द्धन का उत्तराधिकारी हुआ हो. जब एक भाई के पीछे दूसरा गद्दी पर बैठता है, तो उसको कभी कभी पहिले का पुत्र लिख देते हैं. रजवाड़ों में तो बहुधा अब तक ऐसी ही प्रथा चली आती है, कि उत्तराधिकारी चाहे भाई हो, भतीजा हो, अथवा अन्य संबंधी हो, तो भी वह पहिले राजा का पुत्र ही माना जाता है.

विद्वानों को संतुष्ट करनेवाला, धैर्यवान्, पराक्रमी और सोम-वंश (सोलंकीवंश) का * भूषण था. उसका विवाह सगर प्रदेश के हैहय (कलचुरि) वंशी राजा ब्रह्म की ५ पुत्री चंदल-देवी से हुआ था, जो अनेक संदृग्धों से भूषित थी. उसके पुत्र विजयादित्य का १३ राज्याभिषेक श० सं० १०७६ (वि० सं० १२१४ = ई० सं० ११५८) माघ शुक्ला १० (तारीख ११ जनवरी) को हुआ था. उसने आरदवाड़ के राजा की पुत्री गंगा से विवाह किया, जिसको लक्ष्मीदेवी भी कहते थे. उसके दो पुत्र मल्ल (मल्लपदेव) और नरेन्द्र हुए. मल्ल (मल्लपदेव) का राज्याभिषेक श० सं० ११२४ (वि० सं० १२५६ = ई० सं० १२०२) ज्येष्ठ कृष्णा (अमान्त) १० (ता० १६ जून) के दिन पीठपुरी (पिढापुर) में कुंतीनाथ के मंदिर में हुआ × ,

* गोदावरी जिले से मिले हुए उपर्युक्त ताम्रपत्र में उराको सोमवंश का भूषण लिखा है.

५ पूर्वी सोलंकियों के हैहयवंशी सामंत कोनमंडल (गोदावरी नदी के मुहानों के बीच का प्रदेश) के मालिक थे. ब्रह्म का भी उन्हीं में से होना संभव है, और सगर प्रदेश शायद कोनमंडल का दूसरा नाम हो.

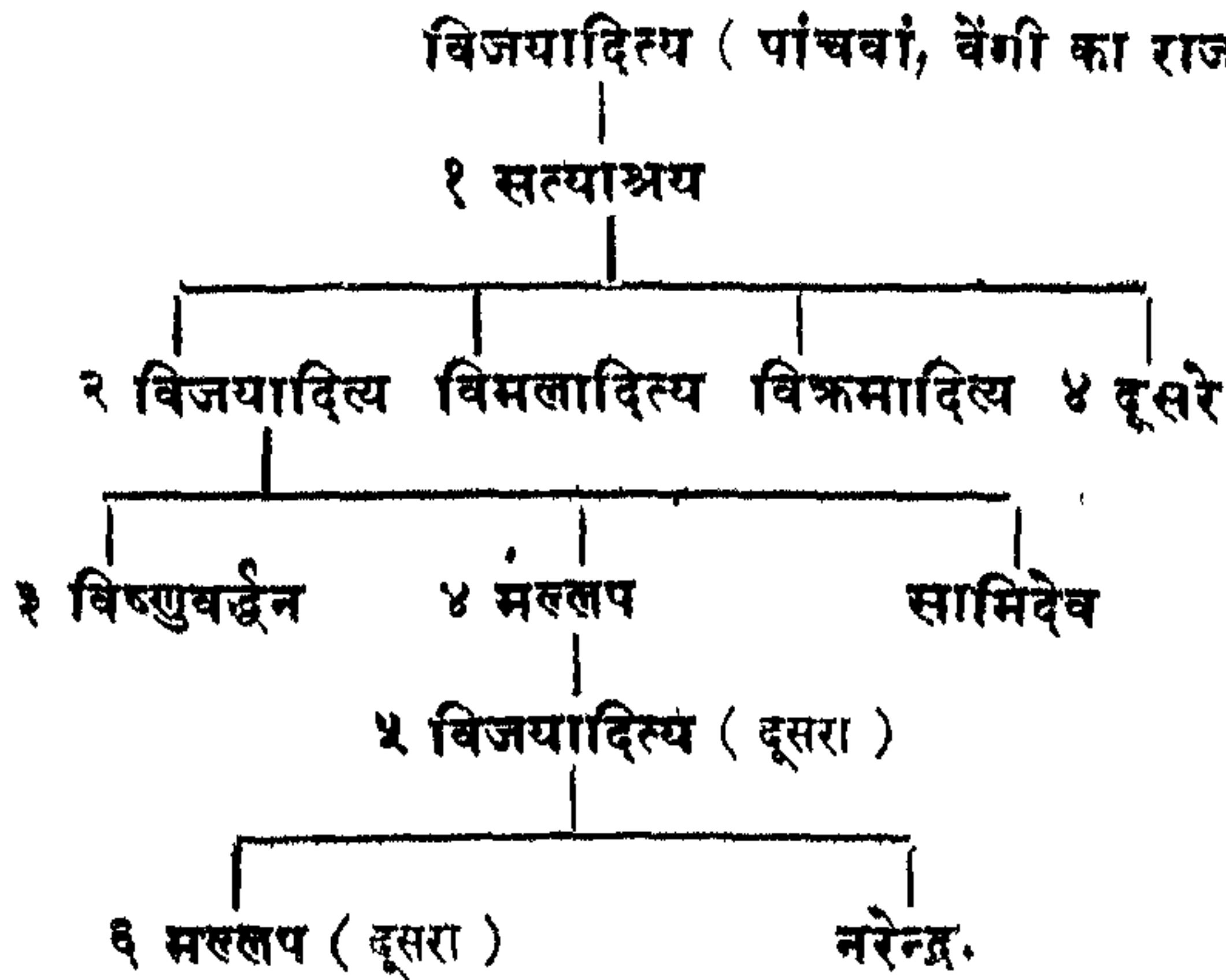
१३ गोदावरी जिले से मिले हुए उपर्युक्त ताम्रपत्र में विजयादित्य को वेंगी का राजा लिखा है (वेंगीदेशवसुंधरेश...ई० एं० जि० २०, पृ० २६८).

+ यो राजेन्दुः शकाब्दे निधिजलधिवियञ्चद्रगे माघमासे शुक्ले पक्षे दशम्या-मिनतनयदिने रोहिणीतारकायां । मीने लग्नेभिषिक्तो निखिलगुणगणस्यालवा-लो विशालो रक्षावल्ली जनानामभिमतफलदां कीर्त्तिपुष्पामपुष्पयत् ॥ (विजया-दित्य के पुत्र मल्लपदेव के समय के पिढापुर के लेख से-१० ई० जि० ४, पृ० २३६).

× शकाब्दे वेदनेत्रक्षितिशशिगणिते ज्येष्ठकृष्णौ दशम्यां भानोर्व्वरे सुलग्ने मक्षति मृगपतावश्विभे पीठपुर्यां । श्रीमच्छालुक्यवंशोदधिसकलकलापूर्णचन्द्रोभि-

उस समय उसने एक गांव कुंतीमाधव * के अर्पण किया था. वह विष्णु का परम भक्त था, और उसके विरुद्ध 'राजपरमेश्वर', 'सर्वलोकाश्रय', 'महाराज' तथा 'चक्रवर्ती' मिलते हैं. उसको विष्णुवर्द्धन भी कहते थे. उक्त संवत् के पीछे का पिट्टापुरं के पूर्वी सोलंकियों का कुछ भी हाल अबतक मालूम नहीं हुआ.

पिट्टापुरं के पूर्वी सोलंकियों का वंशवृक्ष.



पिक्तः कुन्तीश्रीनाथहर्म्ये सुरपतिविभवो मल्लभूवल्लभोसौ ॥ (मल्लपदेव के ही पिट्टापुरं के लेख से—ए० इ० जि० ४, पृ० २३७)

* उक्त लेख में उस विष्णुमंदिर का नाम कुंतीनाथ और कुंतीमाधव दोनों तरह से लिखा है.

श्रीकूर्मम् के पूर्वी सोलंकी.

पूर्वी सोलंकी राजा विमलादित्य के पुत्र राजराज (प्रथम) के वंशजों के ४ शिलालेख श्रीकूर्मम् * के कूर्मेश्वर नामक विष्णु-मंदिर में लगे हुए हैं, जिनसे उनका वृत्तान्त नीचे लिखे अनुसार मिलता है:—

पहिले चन्द्र (सोलंकी) वंश में विमलादित्य नामक राजा हुआ, जिसके पुत्र राजराज (प्रथम) ने विद्वानों की सहायता से महाभारत का आंध्र (तेलुगु) भाषा में अनुवाद[†] कराया. वह राजमहेन्द्रपट्टन (राजमहेन्द्री) में रहता था, जहाँ पर अनेक राजा उसकी सेवा में उपस्थित रहते थे. उस (राजराज) के वंश में विजयादित्य (विजयार्क) हुआ था, जिसका पुत्र राजराज वीरनरसिंह + का मंत्री था. उसके दो पुत्र विजयादित्य और पुरुषोत्तम थे. कूर्मेश्वर के मंदिर के दीपकस्वर्ण

* श्रीकूर्मम्=मद्रास इहाते के गंजाम जिले में चिकाकोल के निकट.

† श्रीमानभूतपुरा कश्चित्सौगवंधे महायशाः । चालुक्यविगलादित्यचक्रवर्ती नृपामणीः ॥....॥ तस्मादभूत् क्षितिपतिमणतांघ्रिपद्मः श्रीराजराजनृपतिः प्रविशालकीर्तिः । यस्सुरिभिस्सह किल स्मृतिजालसारमंध्रीचकार वरभारतवंशवृत्तं—(ए० इ० जि० ५ पृ० ३२). महाभारत के तेलुगु अनुवाद के लिये ऐसी प्रसिद्धि चली आती है, कि नन्नियभट्ट आदि विद्वानों ने राजमहेन्द्री के राजा राजराज की आज्ञा से वह पुस्तक तय्यार किया था, जिसकी पुष्टि इस लेख से होती है. राजराज के ३२ वें वर्ष के ताम्रपत्र की रचना नन्नियभट्ट ने की थी. शायद वही महाभारत के अनुवादकों में से एक हो.

‡ विजयादित्य (विजयार्क) राजराज से कितनी पुश्त बाद हुआ इसका पता नहीं चलता, परन्तु वह राजराज (प्रथम) से अनुमान १५० वर्ष पीछे हुआ हो.

+ वीरनरसिंह=कलिंग का पूर्वी गंगावंशी राजा नरसिंह हो, जो अनेकगभीर का पुत्र और राजराज (तीसरे) का पौत्र था. उसने ३४ वर्ष के करीब राज्य किया था.

के निमित्त विजयादित्य ने श० सं० ११६५ (वि० सं० १३३० = ई० स० १२७३) में २५ गौ और पुरुषोत्तम ने श० सं० ११६६ (वि० सं० १३३४ = ई० स० १२७७) में ५० गौ भेट कीं, तथा ८ निष्क (सोने का सिक्का) की कंठी उक्त मंदिर के अर्पण कीं. पुरुषोत्तम के पुत्र विश्वनाथ ने वीरभानुदेवके * राज्य समय शृंगार तथा भोग (नैवेद्य) के निमित्त ५० निष्क भेट किये. उपर्युक्त वृत्तान्त से अनुमान होता है, कि ये सोलंकी कालिंग के गंगावंशी राजाओं के सामंत हों, और इनके आधीन श्रीकर्मम् के आसपास का प्रदेश होना चाहिये.



विशाखपट्टन † जिले के पूर्वी सोलंकी ‡.

पूर्वी सोलंकी राजा कुलोत्तुंगचोड (प्रथम) के पुत्र विमलादित्य को विशाखपट्टन जिले में जागीर मिली हो ऐसा पाया जाता है, और अबतक उसके वंशज उक्त जिले में गुणपुर नामक स्थान के स्वामी हैं.

विन्नकोटापेदन नामक कवि ने 'काव्यालंकारचूडामणि' + नामक तामिल भाषा की पुस्तक विशाखपट्टन जिले में राज्य

* वीरभानुदेव = कालिंग का पूर्वी गंगावंशी राजा भानुदेव (दूसरा) हो, जो वीरनरसिंह (नरसिंह प्रथम) का प्रपौत्र, भानुदेव का पौत्र और नरसिंह दूसरे का पुत्र था. उसने २४ वर्ष राज्य किया था.

† विशाखपट्टन = विजागापट्टम् (मद्रास इलाके में).

‡ विशाखपट्टन जिले के सोलंकियों का जो वृत्तान्त लिखा है वह विशेष कर हमारे मित्र विजयानगर निवासी पंडित जी. वी. अप्पाराव द्वारा प्राप्त हुआ है, अत एव उसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं. उक्त वृत्तान्त में जिन शिलालेखों का उल्लेख किया है, उन्हें न तो हमने देखा और न पढ़ा है, केवल हमारे उक्त मित्र के लेखानुसार उनका उल्लेख किया गया है.

+ यह पुस्तक ई० स० की चौदहवीं शताब्दी में बना था.

करनेवाले सोलंकी विश्वेश्वर के समय रचा, जिसमें वह विश्वेश्वर के पूर्वपुरुषों की वंशावली इस प्रकार देता है:—

सोलंकी विमलादित्य का पुत्र राजराज (राजनरेन्द्र), उसका कुलोत्तुंगचोड (प्रथम) और उसका पुत्र विमलादित्य हुआ, जिसके पीछे क्रमशः मल्लप, उपेन्द्र, कोप्प, मनमोपेन्द्र और विश्वेश्वर हुए. उक्त कवि ने अपना पुस्तक विश्वेश्वर * को अर्पण किया था. पंचधारा† के धर्मलिंगेश्वरस्वामी के मंदिर में लगे हुए उक्त विश्वेश्वर के समय के शिलालेख में भी वंशावली ठीक उसी प्रकार मिलती है, जैसी कि उक्त पुस्तक में दी हुई है. पंचधारा तथा सिंहाचल‡ के शिलालेखों में विश्वेश्वर के पुत्र उपेन्द्र (दूसरे) और पौत्र नरसिंह के नाम मिलते हैं. नरसिंह के समय के शिलालेख श० सं० १३४४, १३५० और १३५६ (वि० सं० १४७६, १४८५ और १४६४ = ई० स० १४२२, १४२८ और १४३७) के मिले हैं.

नरसिंह के वंश + में मुकुन्दराज या मुकुन्दबाहुबलेन्द्र हुआ, जिसके पूर्व इन सोलंकीयों ने गोलकोंडा के कुतुबशाही खानदान के बादशाहों की आधीनता स्वीकार करली थी, परन्तु मुकुन्दबाहुबलेन्द्र ने फिर स्वतंत्र होने का उद्योग किया, जिसपर गोलकोंडा के बादशाह मुहम्मद कुली कुतुबशाह ने उसपर फौ-

* विश्वेश्वर के स्थान पर विश्वेश्वर भूपति भी लिखा मिलता है, जो विशाखपट्टन जिले के बड़े विभाग का राजा था.

† पञ्चधारा = विशाखपट्टन (विजागापट्टम्) जिले में.

‡ सिंहाचल = विशाखपट्टन (विजागापट्टम्) जिले में.

+ मुकुन्दराज (मुकुन्दबाहुबलेन्द्र) नरसिंह से कितनी पुश्त बाद हुआ इस का ठीक २ हाल मालूम नहीं हुआ, परन्तु उन दोनों के बीच करीब १७५ वर्ष का अरसा गुजरना चाहिये.

जकशी की और कई लड़ाइयां होने बाद उसका कासिम कोट*का राज्य अलग अलग जागीरों में बंट गया। इन लड़ाइयों का सविस्तर वृत्तान्त तारीख फरिश्ता में मिलता है, राजम-हेन्द्री के पास वह (मुकुन्दबाहुबलेन्द्र) मुहम्मद कुली कुतुबशाह के सेनापति अमीर जुमला अमीन-उल-मुल्क से लड़ा उस वक्त उसकी सेना में ३०००० पैदल और ३००० सवार होना फरिश्ता लिखता + है, सिंहाचल में मुकुन्दबाहुबलेन्द्र के समय का एक शिलालेख श० सं० १५२६ (वि० सं० १६६१ = ई० स० १६६४) का है.

मुकुन्दबाहुबलेन्द्र की चौथी पीढ़ी में मेदिनीराय हुआ, जिस के पीछे क्रमशः गजपतिराज, धर्मराज, जगन्नाथराज, मुकुन्दराज, प्रतापराजाधिराज, अनंतराज और गुरवराज हुए. गुरवराज के तीन पुत्र पद्मनाभ, कूर्मनाथ और अच्युत हुए. पद्मनाभ के पुत्र न होने के कारण उसका उत्तराधिकारी उसका छोटा भाई कूर्मनाथ हुआ, जिसका पुत्र गणपतिराज और उसका व्यंकटकृष्णराजदेव हुआ. उसके एक पुत्र संन्यासराज और दो पुत्रियां कृष्णदेवी और अम्बिदेवी थी, जिनमें से कृष्णदेवी का विवाह जयपुर x के सूर्यवंशी राजा रामचंद्रदेव () से

* कासिमकोट = विजागापट्टम् जिले में, फरिश्ता मुकुन्दबाहुबलेन्द्र को कासिमकोट का राजा लिखता है. कासिमकोट का राज्य बूटने बाद गुणपुर पर उसके वंशजों का अधिकार हुआ होगा.

+ यह घटना ई० स० १५८६ और १६०२ (वि० सं० १६४६ और १६५६) के बीच किसी समय हुई थी.

+ ब्रिज फरिश्ता, जि० ३, पृ० ४६३ से ४७४ तक, तारीख फरिश्ता में मुकुन्दबाहुबलेन्द्र के पिता का नाम बाहुबलेन्द्र लिखा है.

x जयपुर=मद्रास इलाके के विजागापट्टम् जिले में.

() रामचन्द्रदेव=जयपुर के वर्तमान महाराजा श्रीविक्रमदेव आजम का पूर्वज.

हुआ था, संन्यासराज के पीछे उसका पुत्र कृष्णराज और उसके बाद उसका बेटा व्यंकटपतिराज गुणपुर का राजा हुआ। व्यंकटपतिराज के पुत्र व्यंकटकृष्णराज गुणपुर के विजयमान राजा हैं।

गुणपुर * का ठिकाना जयपुर राज्य (जमींदारी) के अंतर्गत है, वहाँ के राजाओं का खिताब 'सर्वलोकाश्रय विष्णुवर्द्धन महाराज' अथवा 'चला आता है' और उनका गोत्र साम्ब है।

दक्षिण के सोलंकियों का फुटकर वृत्तान्त.

ताम्रपत्र और शिलालेखों में अधिकतर मुख्य वंश के राजाओं का ही वृत्तान्त मिलता है, और उनके छोटे भाइयों के नाम तक बहुधा छोड़ दिये जाते हैं। छोटे भाइयों को जो जागीरें मिलती रहीं उनमें से वे कभी कभी भूमिदान करते थे, जिससे उनके भी ताम्रपत्र और कहीं कहीं शिलालेख मिल आते हैं; केवल उन्हींसे उनका पता चलता है। ऐसे ताम्रपत्रादि से जिन जिन का सम्बन्ध मुख्य वंश के साथ मालूम हो सका उनका वृत्तान्त तो ऊपर लिखा जा चुका है, परन्तु कितनेक ताम्रपत्रादि ऐसे भी मिले हैं, जिनमें लिखे हुए नामों का ठीक सम्बन्ध उपर्युक्त सोलंकी राजाओं के साथ बतलाया नहीं जा सकता। ऐसे असंबद्ध नाम भी कभी कभी प्राचीन इतिहास के प्रेमियों को बड़े उपयोगी हो जाते हैं, अतएव उनका उल्लेख नीचे किया जाता है।

* गुणपुर के अतिरिक्त मोड़गुला नामक पूर्वी सोलंकियों का दूसरा ठिकाना भी जयपुर राज्य (जमींदारी) में है, जिसको गुणपुर से ही निकला हुआ समझाते हैं।

कोदूर * गांव के परमानन्द नामक मंदिर के पास से एक अद्भुत घटना की यादगार का शिलालेख मिला है, जिसका आशय यह है, कि 'सोलंकी राजा परहितराज के समय शैवमत का शंभु नामक साधु अग्नि को प्रज्वलित कर उसमें बैठ गया और तनिक भी पीड़ा प्रकट किये बिना शिव का ध्यान करता हुआ प्रसन्नचित्त से जल गया'। उक्त लेख में संवत् नहीं है, परन्तु उसकी लिपि १ ई० स० की नवीं शताब्दी के आसपास की होने से अनुमान होता है कि परहितराज बादामी के पश्चिमी सोलंकियों से सम्बन्ध रखता हो।

बेंगलोर (माइसोर राज्य में) के म्युजियम में रखे हुए राठौड़ राजा प्रभूतवर्ष (गोविंदराज तीसरे) के श० सं० ७३५ (वि० सं० ८७० = ई० स० ८१३) के ताम्रपत्र में उक्त राजा के सामन्त गंगावंशी चाकिराज के भानजे विमलादित्य का वर्णन है, जिसको सोलंकी राजा यशोवर्मा का पुत्र और बलवर्मा का पौत्र, तथा कुर्निगल प्रदेश का शासक लिखा है †, अतएव इन सोलंकियों के अधिकार में माइसोर राज्य का कुछ अंश होना चाहिये, और संभव है, कि इनका सम्बन्ध बादामी के पश्चिमी सोलंकियों से हो।

माइसोर राज्य के माइसोर ताम्रपत्रों से मिले हुए कितनेक लेखों में सोलंकी महासामन्त नरसिंह और गुग्ग (गोगिग) के नाम मिलते हैं। मि० राइस का अनुमान है, कि नरसिंह का

* कोदूर = बंबई इलाके के बीजापुर जिले में सौदति से २० मील उत्तर पश्चिम में,

† उसकी लिपि प्राचीन कनडी है (ई० एं० जि० २०, पृ० ६१-७१)।

‡ ई० एं० जि० १२, पृ० १५।

लेख ई० स० ६६० (वि० सं० १०१७) और गोण्डि का ई० स० ६६० (वि० सं० १०४७) के आस पास का हो*.

तेरवण † गांव से सोलंकी महामंडलेश्वर कामदेव का एक ताम्रपत्र श० सं० ११८२ (वि० सं० १३१७ = ई० स० १२६०) का ‡ मिला है, जिसमें उसका स्विताथ 'कल्याणपुरवराधीश्वर' मिलता है, जिससे पाया जाता है, कि वह कल्याण के पश्चिमी सोलंकियों का वंशज होगा.

कनडी भाषा के प्रसिद्ध कवि पंप के रचे हुए 'विक्रमार्जुनविजय' (पंपभारत) नामक काव्य में जोलदेश के सोलंकियों का वृत्तान्त नीचे अनुसार मिलता है:—

सोलंकी युद्धमल्ल सपादलक्ष + देश का राजा था. उस के पुत्र अरिकेसरी ने निरुपमदेव के ‡ राज्य पर आक्रमण किया. उसका पुत्र नरसिंह, उसका कुग्धमल्ल और कुग्धमल्ल का बहिग हुआ, जिसने 'सोलदगंड' (अजेयवीर) बिरुद्ध प्राप्त किया और मानो मगर को पकड़ता हो हम तरह पानी में उतर कर उसने अभिमान के साथ भीम को पकड़ा. उसका पुत्र युद्धमल्ल (दूसरा) और उससे नरसिंह (दूसरा)

* एपिग्राफिया कर्णाटिका, जि० ९, पृ० ४, नं० ३५, ३६ और ३७, अंग्रेजी अनुवाद.

† तेरवण = बंबई इहोत के रत्नागिरि जिले के राजापुर तालुके में.

‡ बं० ए० सो० ज० जि० ४, पृ० १०५.

+ प्राचीन काल में कर्माऊ के आस पास का प्रदेश (सवालक) तथा अजमेर के चौहान राजाओं के आधीन का देश सपादलक्ष नाम से प्रसिद्ध था. दक्षिण में उक्त नाम का कोई प्रदेश जाना नहीं गया.

‡ निरुपमदेव = शायद वह उक्त नाम का दक्षिण का राठौड़ राजा हो, जिसको धारावर्ध और भुवराज भी कहते थे और जो कृष्णराज का पुत्र और गोविंद दूसरे का छोटा भाई था.

वत्पन्न हुआ. उसने एरप्प को * राज्य पर स्थापित किया और गुर्जरराज (गुजरात के राजा) महीपाल † को हराकर उसकी राज्यश्री छीन ली तथा उसका पीछा कर अपने घोड़ों को गंगा के संगम में न्हिताया. उसके पुत्र अरिकेसरी (दूसरे) ने, जिसकी राणी चन्द्रानना थी, विजयादित्य को ‡ चक्रवर्ती राजा गोभिग से ‡ बचाया, और पंप काचि को 'विक्रमार्जुनविजय' काव्य बनाने पर श० सं० ८८३ (वि० सं० ६६८ ई० सं० ६४१) में एक गांव दिया. वह जोलदेश x का स्वामी था +. अरिकेसरी (दूसरे) के ज्येष्ठ पुत्र के राज्यसमय में, जो राठौड़ राजा कृष्णराज (तीसरे) का सामंत था, जैन सूरि सोमदेव ने

* शायद यह उक्त नाम का पश्चिमी गंगावंशी राजा हो.

† महीपाल = कन्नौज के पडिहार राजा भोजदेव का पौत्र और महेन्द्रपाल का पुत्र था, जिसको क्षितिपाल भी कहते थे, और जिसके आधीन कन्नौज से लगाकर काठियावाड़ तक का देश था. दक्षिण के राठौड़ राजा इंद्रराज (तीसरे) ने उसको परास्त किया था, अतएव संभव है, कि नरसिंह (दूसरा) उस (इंद्रराज) का सामंत होने के कारण उस चढ़ाई में उसके साथ हो.

‡ विजयादित्य = बैंगी का पूर्वी सोलंकी राजा विजयादित्य (पांचवां) हो. साडपने उसका राज्य छीना, जिसमें राठौड़ राजा गोविंदराज की सहायता हो, और संभव है, कि वह राज्य छूटने बाद अरिकेसरी (दूसरे) की सहायता से बचने पाया हो.

‡ गोभिग = राठौड़ राजा गोविंदराज (चौथा) हो, जो इंद्रराज (तीसरे) का पुत्र और अमोघवर्ष दूसरे का छोटा भाई था.

x जोल देश = बंबई इलाते के धारवाड़ जिले का कितनाक हिस्सा.

+ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी का जर्नल (न्यू सीरीज) जि० १४, पृ० १६.

‘यशस्तिर्लोक’ नामक महाकाव्य की श० सं० ८८१ (वि० सं० १०१६ = ई० स० ६५६) में रचना की, * परन्तु उक्त सूरि ने उसमें अरिकेसरी के ज्येष्ठपुत्र का नाम नहीं लिखा है.

* शकनृपकालार्तातसम्बत्सरशतेष्वष्टस्वेकाशीत्यधिकेषु गतेष्वंकतः ॥८८१॥

..... प्रवर्द्धमानराज्यप्रभावे श्रीकृष्णराजदेवे सति तत्पादपमोपजीविनः सगधि-
गतपंचमहाशब्दमहासामंताधपतेश्चालुक्क्यकुलजन्मनः सामंतचूडामणोः श्रीमदरिके-
सरिणः प्रथमपुत्रस्य श्रीगङ्गाधराज्यप्रवर्द्धमानवसुन्धरायां विनिर्मापितामिदम्.... (प्रो-
फेसर पिटर्सन की दूसरी रिपोर्ट, पृ० १५६.)

=====

शुद्धिपत्र-

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|-------|--------|-----------------|-----------------|
| १ | १८ | वीरामा | वीरना |
| ९ | १ | पूरुवा | पूरुवा |
| ६ | १६ | नहुषच्छिन्नवान् | नहुषच्छिन्नवान् |
| १५ | २२ | सर्दन | सर्दन |
| २० | १३ | होगें | होगे |
| २२ | २ | सेन्द्रेकवंशी | सेन्द्रकवंशी |
| २२ | १४ | विद्यमान | विद्यमान |
| ३१ | २ | कंदब | कंदब |
| ५३ | १७ | येनाजूव | येनालुव |
| ५६ | ६ | विजयादित्य | विजयादित्य |
| ५७ | ६ | उदयन | उदयन |
| ६२ | ८ | वि० सं० ८४१ | वि० सं० ८४१ |
| ६४ | २ | (दूसरे) | (दूसरे) |
| ६६ | १ | पाचवां | पांचवां |
| ७६ | ५ | काष्ठ | काष्ठ |
| ७८ | १ | सयय | समय |
| ७८ | २० | समारूढ | समारूढ |
| ७९ | २४ | लेखें | लेख में |
| ८० | १५ | वृत्तखंड | वृत्तखंड |
| ८३ | ११ | पौष | पौष |
| ९४ | ६ | कृष्ण | कृष्णा |
| १०६ | १८ | वृत्तखंड | वृत्तखंड |
| ११३ | २७ | डालियें | डालियां |
| ११५ | १६ | निजामराज्य | मोहसोर राज्य |

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|-------|--------|---------------|-----------------|
| ११६ | २३ | होयूसल | होयूसल |
| १२० | १७ | (अहवमस्र) | (आहवमस्र) |
| १२६ | १६ | खंडनविधौ | खंडनविधौ |
| १३८ | २ | स्थलं | स्थल |
| १४४ | १४ | समाधिगत | समधिगत |
| १४८ | ११ | उसका | उसके |
| १४९ | १ | अमोघवर्ष | अमोघवर्ष ने |
| १४९ | १६ | किंकरवद्यधात् | किंकरवद्व्यधात् |
| १५७ | ११ | राजमेहन्द्र | राजमहेन्द्र |
| १५७ | २४ | बालमुष्ठा | बालमुष्ठा |
| १५८ | १ | पीडापुरं | पिडापुरं |
| १७० | १६ | वशातिलकात् | वशातिलकात् |
| १७३ | १ | परस्ता | परास्त |
| १७४ | २३ | (तस्याभवन्) | (तस्याभवन्) |

THE INDIAN HISTORICAL SERIES.

 HERE is no Early History of India worth the name dealing with the pre-Mohamedan period. Even a century ago, nothing definite was known of those times except the coloured traditions of the bards. But researches in antiquity, archaeology, inscriptions and coins, carried on by many European and Indian Savants have revealed a world of new and forgotten historical facts; and have filled up a gap of many centuries. The results of their labours lie scattered in various publications in different languages, and no attempt has been made to piece together systematically all that is thus known of the various dynasties which held sway over the different parts of India.

This Series is an attempt to supply the above want. It is proposed to bring out several volumes dealing with different ruling families: namely Shishunāga, Nanda, Maurya, Greek, Satrapa, Shātakarnī (Andhrabhritya), Shaka, Kushana, Abhīra, Gupta, Pallava, Hūna, Yauddehya, Baṣha, Lichchivī, Mokharī, Maṭraka, Guhila, Solanki, Parihār, Paramār, Chauhān, Chāvda, Rāthor, Kachhavāhā, Tanvar, Kalachurī (Haihaya), Chandel, Yādava, Gūjara, Pāl, Son, Kadamba, Shilāra, Sendraka, Kākatiya, Nāga, Nikumbha, Gangā, Bāna, Sinda, Chola, etc., etc. The Series will be published in Hindi, the common language of the country, so as to bring home to all the best fruits of research as applied to the early history. This will create among the people in general and ruling dynasties and Rājputs in particular a love of real history, and at the same time imbue in them a critical spirit to separate the really historical events from mere tradition or narratives.

The first volume, already published, deals with the history of Early Solankis or Chālukyas. It embodies the latest researches of various scholars, combined with those of the author, and tested by his lifelong study of history, archaeology, antiquity, epigraphy, numismatics, etc. Every statement is authenticated with a reference; copious extracts are given from original authorities, and nothing is assumed but what is supported by the evidence adduced. This would show what a wealth of material Indian history has, even if we reject the quasi-historical traditions and works. This volume chiefly deals with the Western Solankis of Bādāmi (about A.D. 550-757); the Western Solankis of Kalyāni (A.D. 973-1189) and the Eastern Solankis of Vengi (A.D. 615-1246), with their branches at Pithapuram, Shrikurmam and Vishakhapattana.

Some extracts from the opinions of learned scholars and Rājput Chiefs will show what value they set on this attempt, the first in Indian Literature.

Subscribers of the complete Series may have their names registered, and each volume, as published, will be sent to them per V.-P.P.

The first volume is priced at Rs. 2 only. For copies apply to the Author,

PANDIT GAURISHANKAR H. OJHA,
RAJPUTANA MUSEUM,

EXTRACTS FROM OPINIONS.

Dr. F. Kielhorn, Ph.D., LL.D., C.I.E., Gottingen.

I congratulate you sincerely on the result of hard work which you must have gone through to write such a book. I can see that you have made the fullest use of all available materials, literary and epigraphical, and am well aware how carefully you have weighed the arguments in matters which were doubtful or disputed before giving your own decision. To compile the extracts from the original records which you have given on almost every page must have taken you many months of very careful study. Your book will be highly interesting especially to your own countrymen, and will for the first time give them some idea of the real history of part of their country. I am sure I do not say this to flatter you. Only as a fellow worker I should like you to know how highly I appreciate what you have done so far, and to express my hope that you may be able to complete your History as you have begun it.

Dr. G. A. Grierson, Ph.D., C.I.E., Camberley.

From my experience of your previous writings I was sure that I would derive much pleasure and profit from your last work, and I have been in no way disappointed. May I congratulate you on being, I believe, a pioneer, and a most successful pioneer, in showing your fellow-countrymen how Early Indian History should be written.

Your use of original materials, instead of trusting to second-hand information, and the careful way in which you quote your authorities in the foot-notes, render the book invaluable to all students of Indian History. I can cordially associate myself with Professor Kielhorn's congratulations.

Dr. J. Burgess, LL.D., Ph.D., C.I.E., Edinburgh.

I join with Professor Kielhorn in congratulating you on the result of your praiseworthy efforts to supply your countrymen with a scholarly history of at least a large area of India, under the rule of the Chalukya dynasties. I trust you may be equally successful in dealing with other dynasties, especially the Paramaras, Guptas, etc., of Central and Western India.

Dr. J. F. Fleet, Ph.D., C.I.E., Ealing.

I think that you have made a most laudable beginning towards making your countrymen acquainted with the ancient history of their great country, and I have no doubt that I shall find your work useful to myself also when I may come to write again about any of the topics dealt with in it.

Dr. A. F. R. Hoernle, Ph.D., C.I.E., Oxford.

It is a very creditable performance, and I fully associate myself with all that Professor Kielhorn has said about it. I shall be looking forward with great interest to the continuation of your History, for which I wish you every success.

Dr. E. Hultzsch, Ph.D., Halle (Saale).

Many thanks for sending me a copy of your very valuable and careful volume on the history of the Chalukyas. I know what amount of hard work it must have entailed, and congratulate you on the result, which will do much to acquaint the educated classes of India with the latest researches on the history of a large portion of the country. I shall look forward with pleasure to other parts of your undertaking.

Dr. Sten Konow, Ph.D., Government Epigraphist (Indian Antiquary, January 1908).

MR. GAURISHANKAR OJHA has long been well known to students of Indian History and Epigraphy, and many an important inscription has during the last years been made available through his disinterested zeal. The work now under review gives, in a connected form, a summary of the results of his studies of the History of the Chalukyas....The work has been numbered Part I, Vol. I, of a Series, and it is much to be hoped that it will be continued. It is a very careful and critical summary of the results obtainable from epigraphical and literary sources. It will be especially important to Indian scholars. And also to others it will be very useful, because it has been published so recently, and has, consequently, benefited from such new materials as have been brought to light after the appearance of the *Bombay Gazetteer*....Our knowledge of Indian History is incessantly proceeding, and it demonstrates how Mr. OJHA's treatise must necessarily add much to the information brought together by his predecessors. And it is impossible not to admire the patient work and the sane criticism to which every page of his book bears testimony.

Vincent A. Smith, Esq., M.A., Cheltenham

I can sincerely congratulate you on your work, which places at the disposal of your countrymen a very important section of their history in a trustworthy form....You have consulted the original authorities and exercised an independent judgment. I shall have the pleasure of citing you in the new edition of my *Early History*, which I hope to bring out next year.

A. M. Jackson, Esq., M.A., Bombay.

I must wait no longer to congratulate you on your achievement. Yours is, so far as I know, the first really scientific attempt to deal with Indian History in a vernacular language. You have evidently spared no pains to make your collection of materials complete. A most excellent feature of the book is the foot-notes, in which you quote in original the passages on which you rely. You will not of course expect me to agree with you in every detail, but no differences of opinion in matters of detail need prevent my expressing my admiration of your work and my hope that you may speedily complete the task you have set before you.

H. H. Sir Kesri Singh, Bahadur, K.C.S.I., G.C.I.E., Maharaja of Sirahi.

You have spared no pains to collect materials for an authentic history of the race. It is a valuable contribution to the early history of one of the most famous of the Rajput races of India, and your researches in this direction have dispelled some of the errors into

which the public have generally fallen. I pride myself on the fact that the author of such a valuable contribution to the historical literature of India is a subject of mine. I wish you would continue to publish such authentic and valuable histories of the other Rajput races. I congratulate you on the thoroughness with which you have carried on the work.

H. H. the Raja Sahib of Sitamau.

(It) is a valuable contribution to the historical literature of India, which is yet in an infant state. The author has laid the Hindi language under a special obligation by initiating a mode of making researches which is the *sine qua non* of historians worth the name. Merely the quotations with which the volume teems are enough to give a conception of the tremendous work that he must have brought to bear upon this compilation. This elaborate work is bound to prove interesting not merely to the Solankis or the Rajputs but to all the Hindus and those interested in Indian subjects generally.

Journal of the Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland,
January 1908.

This is the first result of a commendable undertaking begun by Mr. OJHA, with a view to imparting to his compatriots, in the Hindi language, a knowledge of the ancient history of their country. Mr. OJHA shows that he has not simply taken over the results arrived at by others, but has weighed the epigraphic bases for himself, ...and he has not hesitated to express opinions of his own when he has found reason to differ from the views arrived at by other enquirers. ... We wish him success in his undertaking, and hope that he may arouse an interest in antiquarian research which will result in the bringing to light, from a part of India which must possess many such remains, ancient inscriptions, which, without local assistance, are beyond the ken of even the most zealous searchers.

